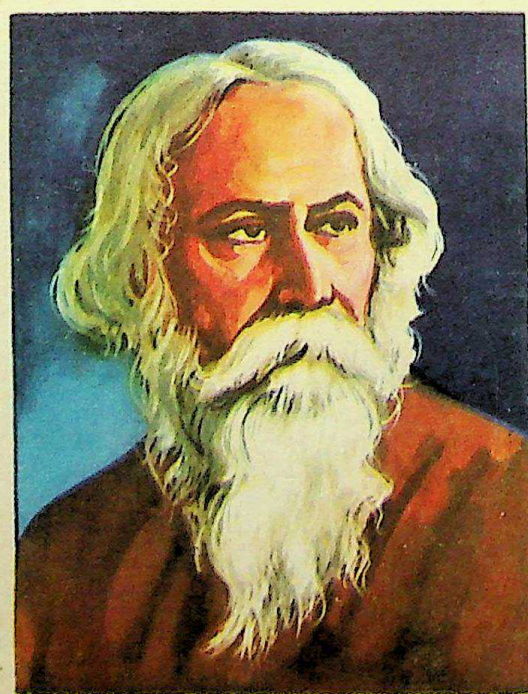
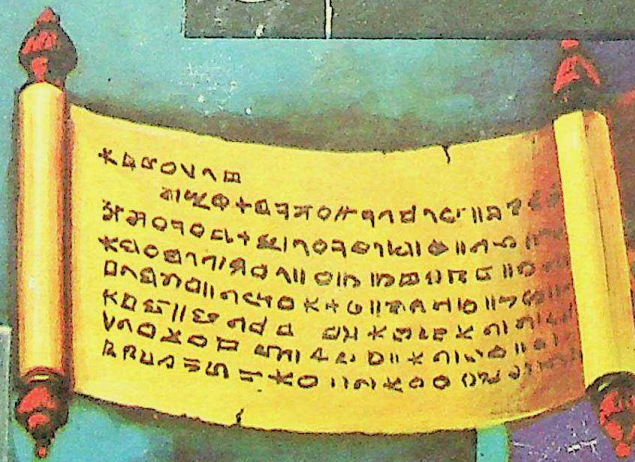
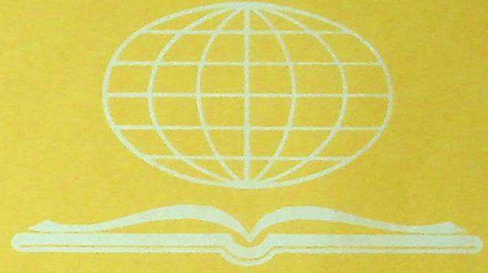


सचित्र विश्वकोश

8

साहित्य * कला * दर्शन





साक्षित्र विश्वकोश

ज्ञान-विज्ञान की प्रामाणिक, तथ्यपूर्ण और नवीनतम जानकारी तथा दो हजार से अधिक रंगीन और दुर्लभ चित्रों से भरपूर दस सजिल्द और अपने-आपमें सम्पूर्ण खण्डों का अपने ढंग का अनूठा विश्वकोश

विशेषज्ञों द्वारा रचित तथा विश्व की अनेक भाषाओं में अनूदित 'गोल्डन बुक इन्साइक्लोपीडिया' का हिन्दी संस्करण

साहित्य * कला * दर्शन



राजपाल एण्ड सन्ज

कश्मीरी गेट, दिल्ली-6

भूमिका

विश्वकोश की उपयोगिता से सभी परिचित हैं। विश्वकोश के द्वारा आप किसी भी विषय के सम्बन्ध में प्रामाणिक और नवीनतम जानकारी आसानी से पा सकते हैं। आज के युग में विश्वकोश एक महत्वपूर्ण और बहुत उपयोगी संदर्भ पुस्तक (रेफरेन्स बुक) है जो विद्यार्थियों, विद्वानों और जनसाधारण सभी के लिए मूल्यवान है।

मुझे प्रसन्नता है कि 'गोल्डन बुक एनसाइक्लोपीडिया' पर आधारित यह 'सचित्र विश्वकोश' दस भागों में प्रकाशित हो रहा है। प्रत्येक खण्ड विषयानुसार है और अपने में पूर्ण है। 'गोल्डन बुक एनसाइक्लोपीडिया' अपनी प्रामाणिकता के लिए संसार-भर में प्रसिद्ध है और अनेक देशों में इसके अनुवाद प्रकाशित हो चुके हैं। हिन्दी में इस उपयोगी विश्वकोश का प्रकाशन बहुत ही सुन्दर रूप में हुआ है जिसके लिए प्रकाशक बधाई के पात्र हैं। प्रत्येक पृष्ठ पर चार-रंगे अनेक चित्र हैं और सबसे अच्छी बात यह है कि मात्र अनुवाद न होकर इसमें आवश्यकतानुसार भारतीयकरण भी किया गया है। मेरी सम्मति में ऐसा करने से इसकी उपयोगिता हिन्दी के पाठकों के लिए और भी बढ़ गई है। यह महत्वपूर्ण प्रकाशन, एक तरह से, शिक्षा के क्षेत्र में दो मित्र देशों के सहयोग का प्रतीक है।

एक अन्य विशेषता यह भी है कि इसमें भारत सरकार द्वारा निर्धारित टैक्नीकल शब्दावली का उपयोग किया गया है। मुझे आशा है, हिन्दी के विद्यार्थी और पाठक इससे पूरा लाभ उठाएंगे।

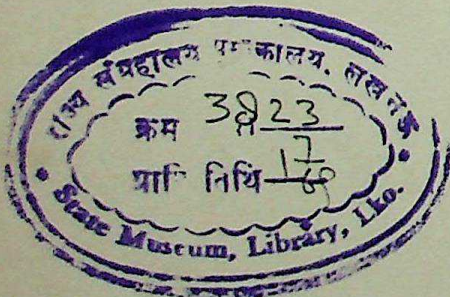
नई दिल्ली
अप्रैल, 1967

प्रेम किरपाल
शिक्षा-सचिव, भारत सरकार

प्रकाशकीय

'सचित्र विश्वकोश' की तैयारी में हमें अनेक भारतीय विद्वानों और वैज्ञानिकों का सहयोग मिला है। हम उन सबके प्रति आभार प्रकट करते हैं, विशेषतः श्री श्रीकान्त व्यास के प्रति, जिनकी देख-रेख में यह हिन्दी संस्करण संपादित हुआ है। आवरण-चित्र श्री आर० के० बोस ने बनाए हैं।

—प्रकाशक



मूल्य : सात रुपये

THE GOLDEN BOOK ENCYCLOPAEDIA
by Bertha Morris Parker

Published by arrangement with Golden Press, Inc. New York.
© Copyright 1959 by Golden Press, Inc.

प्रथम संस्करण © 1967, राजपाल एण्ड सन्ज

शिक्षा भारती प्रेस दिल्ली में मुद्रित

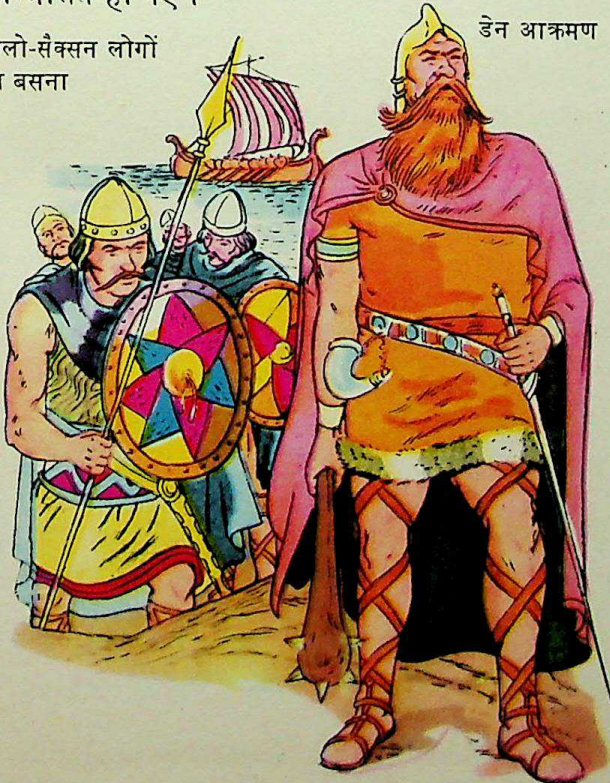
साचित्र विश्वकोश

खण्ड 8

साहित्य, कला, दर्शन, पुराणकथा

अंग्रेजी भाषा (ENGLISH LANGUAGE): अंग्रेजी भाषा के जन्मदाता इंग्लैंड के मूल निवासी ब्रिटन लोग नहीं हैं। यह भाषा जर्मनी से आकर बसनेवाले ऐंग्ल और सैक्सन कबीलों द्वारा इंग्लैंड में लाई गई थी। इन कबीलों ने ब्रिटन लोगों को उत्तर और पश्चिम की ओर भगा दिया और खुद दक्षिणी-पूर्वी भाग में बस गए। इन कबीलों के लोग जिस भाषा को बोलते थे उसे ऐंग्लो-सैक्सन या 'ओल्ड इंग्लिश' के नाम से जाना जाता है। इसी भाषा से आज की अंग्रेजी भाषा का जन्म हुआ। इस अंग्रेजी में ब्रिटन लोगों की भाषा के भी कुछ शब्द 'बास्केट' (टोकरी), 'कार्ट' (गाड़ी), 'लैंड' (छोकरा), 'लैस' (छोकरा) आदि सम्मिलित हो गए।

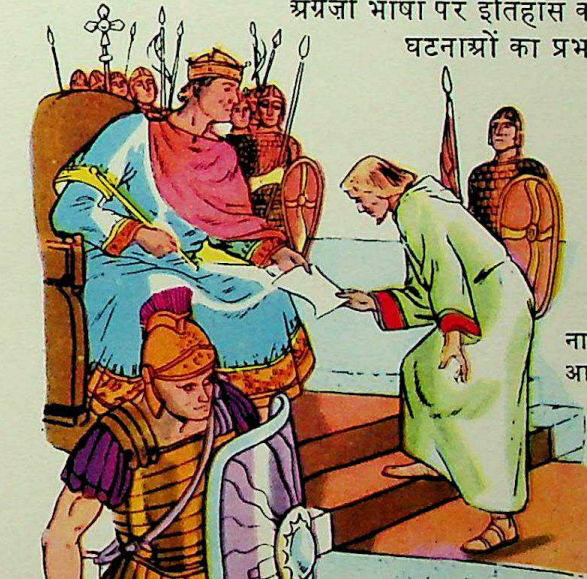
ऐंग्लो-सैक्सन लोगों का बसना



डेन आक्रमण

यद्यपि अंग्रेजी के बहुत-से शब्द 'ऐंग्लो-सैक्सन' से आए हैं, लेकिन आज हम 'ओल्ड इंग्लिश' या प्राचीन

अंग्रेजी भाषा पर इतिहास की अनेक घटनाओं का प्रभाव पड़ा



नार्मनों का आधिपत्य



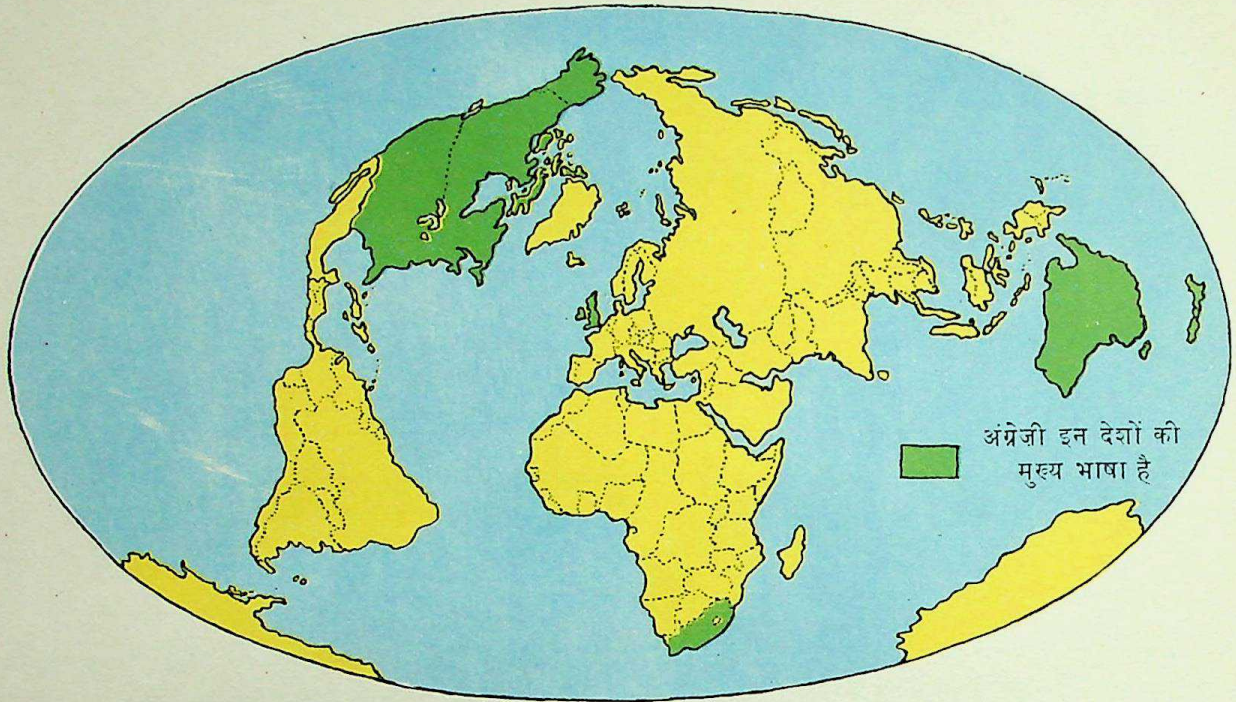
रोमन आक्रमण

स्पेनवासियों का बसना



अमरीकी आदिवासी संस्कृति

आधुनिक संचार-साधन



अंग्रेजी को आसानी से नहीं समझ सकते। प्राचीन अंग्रेजी के अनेक शब्द जो आज की अंग्रेजी में बोले और लिखे जाते हैं, उनके उच्चारण और हिज्जे में बहुत अन्तर आ गया है। 'सिल्वर' (चांदी) को प्राचीन अंग्रेजी में 'सिओल्फर' (Seolfor) और 'प्रेटी' (सुन्दर) को 'प्रेटीग' (Praettig) लिखते और बोलते थे। आज की अंग्रेजी की वर्णमाला में प्राचीन अंग्रेजी वर्णमाला के दो वर्ण भी नहीं मिलते। इन्हें विन (Wyn) और थॉर्न (Thorn) कहा जाता था।

ऐंग्लो-सैक्सन लोगों को डेन या नार्समन कबीलों द्वारा हार खानी पड़ी थी। ये लोग डेनमार्क और स्वीडन के निवासी थे। इंग्लैंड में बसने पर नार्समन लोगों की भाषा की भी कुछ छाप अंग्रेजी पर पड़ी। 'ऐंगर' (क्रोध), 'केक', 'इल' (बीमार), 'अग्ली' (बदसूरत), 'स्काई' (आकाश), 'रांग' (गलत) आदि शब्द अंग्रेजी को नार्समन लोगों की ही देन हैं।

सन् 1066 में जब विलियम द कांकरर ने इंग्लैंड पर अधिकार जमाया तब दरबारी भाषा फ्रेंच हो गई। 200 वर्षों तक फ्रेंच सरकारी कामकाज की भाषा रही और अंग्रेजी साधारण बोलचाल की। नार्मंडी के फ्रांस में मिल जाने के बाद नार्मनों का फ्रेंच से मोह टूट गया और उन्होंने अंग्रेजी को अपना लिया। पर इस समय तक सैकड़ों फ्रेंच शब्द अंग्रेजी में मिल चुके थे। इन फ्रेंच शब्दों के मेल से अंग्रेजी का जो रूप सामने आया उसे 'मिडल इंग्लिश' या मध्यकालीन अंग्रेजी कहते हैं। सन् 1100 से लेकर 1500 तक की अंग्रेजी का रूप यही था। फ्रेंच शब्दों के आ जाने पर भी पुरानी अंग्रेजी के उन्हीं अर्थों वाले पहले के शब्द भी साथ-साथ चलते रहे। आज भी हम इस तरह के एक ही अर्थ रखनेवाले शब्दों को अंग्रेजी में पाते हैं। इनमें से

कुछ नीचे दिए जा रहे हैं :

ऐंग्लो-सैक्सन	फ्रेंच	ऐंग्लो-सैक्सन	फ्रेंच
डीड (कार्य)	ऐक्ट	प्राउड (घमंडी)	वेन
किंगली (शाही)	रॉयल	शेप (शक्ल)	फॉर्म
हार्म (क्षति पहुंचाना)	हर्ट	स्ट्रीम (धारा)	रिवर

पिछले 400 वर्षों में यद्यपि इंग्लैंड पर किसीने विजय नहीं पाई, फिर भी वहां की भाषा अंग्रेजी में नये शब्द निरन्तर आते रहे हैं। इनमें से अनेक शब्द व्यापारियों और यात्रियों द्वारा लाए गए हैं। आज अंग्रेजी में दुनिया की अनेक भाषाओं के शब्द मिलते हैं। हिन्दी और उर्दू के भी बहुत-से शब्दों को अंग्रेजी ने अपना लिया है; जैसे बाज़ार, खाकी, पंडित, डाकू, लूट इत्यादि। अंग्रेजी में विभिन्न भाषाओं से आए हुए कुछ शब्द और उनकी मूल भाषाएं इस प्रकार हैं :

अंब्रेला (छाता)	— इटालवी	छींट	— हिन्दी
स्केट्स	— डच	सिगार	— स्पेनी
टी (चाय)	— चीनी	कोको	— पुर्तगाली
पोटैटो (आलू)	— स्पेनी	ट्यूलिप	— तुर्की

अंग्रेजी के कुछ शब्द प्राचीन लैटिन से आए हैं। इसका कारण यह है कि पहले लैटिन ही विश्वविद्यालयों और गिरजों में व्यवहार में आती थी।

आज की हज़ारों खोजों और अन्वेषणों के कारण अंग्रेजी भाषा में नित नये शब्द बनते जा रहे हैं। नये अंग्रेजी शब्द बनाने का एक ढंग यह है कि अंग्रेजी के पुराने दो शब्दों को एकसाथ रखकर एक नया शब्द गढ़ लिया जाता है। 'अंडरग्राउण्ड', 'एयरक्राफ्ट', 'रेलवे', 'मैन-होल', 'बाईपास', 'बालबीयरिंग'—ऐसे ही शब्द हैं। अनेक

शब्द लैटिन या ग्रीक शब्दों के आधार पर गढ़े गए हैं। 'टेलीफोन' ग्रीक भाषा के 'टेली' (बहुत दूर) और 'फोन' (वातचीत) इन दो शब्दों को मिलाकर बना है। इसी तरह 'मल्टीमिलियनेयर' (लखपती) लैटिन के 'अनेक' और 'हज़ारों' शब्दों को जोड़कर बनाया गया है।

कभी-कभी लैटिन और ग्रीक शब्दों को परस्पर जोड़कर एक नया अंग्रेजी शब्द गढ़ लेते हैं। 'आटोमोबाइल' शब्द में 'आटो' (अपने-आप) शब्द ग्रीक भाषा का है और 'मोबाइल' (चलना) शब्द लैटिन का है। कुछ अंग्रेजी शब्द एकदम नये गढ़ लिए गए हैं, जैसे 'रेयन'।

कालान्तर में अंग्रेजी के कुछ शब्द बोलचाल से हट गए। ये पुराने लेखकों की रचनाओं में ही पाए जाते हैं। आजकल इनके स्थान पर दूसरे शब्द प्रचलित हैं। अंग्रेजी भाषा की वाक्य-रचना में भी प्राचीन अंग्रेजी की वाक्य-रचना से अंतर आया है। उदाहरण के लिए प्राचीन अंग्रेजी में क्रियापद वाक्य के अंत में आता था, जैसे हिन्दी में या जर्मन भाषा में आज भी आता है। लेकिन आधुनिक अंग्रेजी में क्रियापद कर्ता के बाद आता है। पहले की अपेक्षा आज की अंग्रेजी के क्रियापद अधिक सरल हो गए हैं। कुछ शब्दों के हिज्जे (स्पेलिंग) में भी परिवर्तन आया है।

चूंकि अंग्रेजी विश्व के अनेक देशों में बोली जाती है, इसलिए यह भी स्वाभाविक है कि इसमें स्थानीय प्रभाव दिखाई दें। अंग्रेजी का उच्चारण हर देश में अलग-अलग है। कभी-कभी दो देशों में एक ही शब्द के दो हिज्जे भी पाए जाते हैं। हिज्जे और उच्चारण की दृष्टि से सबसे बड़ा अंतर अमरीका में देखने में आता है, जहां की अंग्रेजी इंग्लैंड में बोली और लिखी जानेवाली अंग्रेजी से कुछ भिन्न है। उदाहरणार्थ, अमरीकी 'ट्यूब' के स्थान पर

'सबवे', पेट्रोल के स्थान पर 'गैसोलिन', 'लेट' (किराये पर देना) के स्थान पर 'रेंट' शब्दों का प्रयोग करते हैं। वे अनेक शब्दों के हिज्जे दूसरी तरह से लिखते हैं। लेकिन इन समस्त भेदों के होते हुए भी अमरीका की अंग्रेजी और इंग्लैंड की अंग्रेजी में बहुत समानता पाई जाती है। यही बात दूसरे देशों के भी संबंध में कही जा सकती है। स्वयं भारत में बोली जानेवाली अंग्रेजी के उच्चारण में न केवल इंग्लैंड में बोली जानेवाली अंग्रेजी से अंतर रहता है बल्कि भारत के विभिन्न राज्यों में भी अंग्रेजी के उच्चारण में काफी अंतर रहता है।

आज चीनी के बाद अंग्रेजी के बोलनेवालों की संख्या संसार में सबसे अधिक है। अंग्रेजी भाषा आज 26,50,00,000 लोगों की मातृभाषा है। इसके अलावा लाखों लोग अपनी मातृभाषा के अतिरिक्त अंग्रेजी भाषा का प्रयोग करते हैं। किसी भी दूसरी भाषा के बोलनेवाले आज दुनिया-भर में इस तरह फैले हुए नहीं हैं जैसे कि अंग्रेजी के हैं।

अंग्रेजी साहित्यकार (ENGLISH WRITERS): चॉसर को अंग्रेजी साहित्य का जन्मदाता कहा जाता है। चॉसर ने जिस भाषा में अपनी कविताएं लिखीं उसे मध्यकालीन अंग्रेजी कहते हैं। चॉसर के पहले भी प्राचीन अंग्रेजी में छिटपुट रचनाएं हुई थीं। आज से 1000 वर्ष पूर्व 'बिओकुल्फ' नाम की एक कविता लिखी गई थी। यह कविता किसने लिखी, यह आज किसीको पता नहीं। प्राचीन अंग्रेजी में पहले-पहल काडमन और वीड ने कुछ रचनाएं कीं।

चॉसर के बाद से आज तक अंग्रेजी में अनेक महान कवि और लेखक हुए हैं। इनमें सबसे महान शेक्सपियर है जिसने बहुत सुन्दर कविताएं और नाटक लिखे। शेक्सपियर के बाद दूसरा महान साहित्यकार मिल्टन हुआ,

'द कैंटरबरी टेल्स'

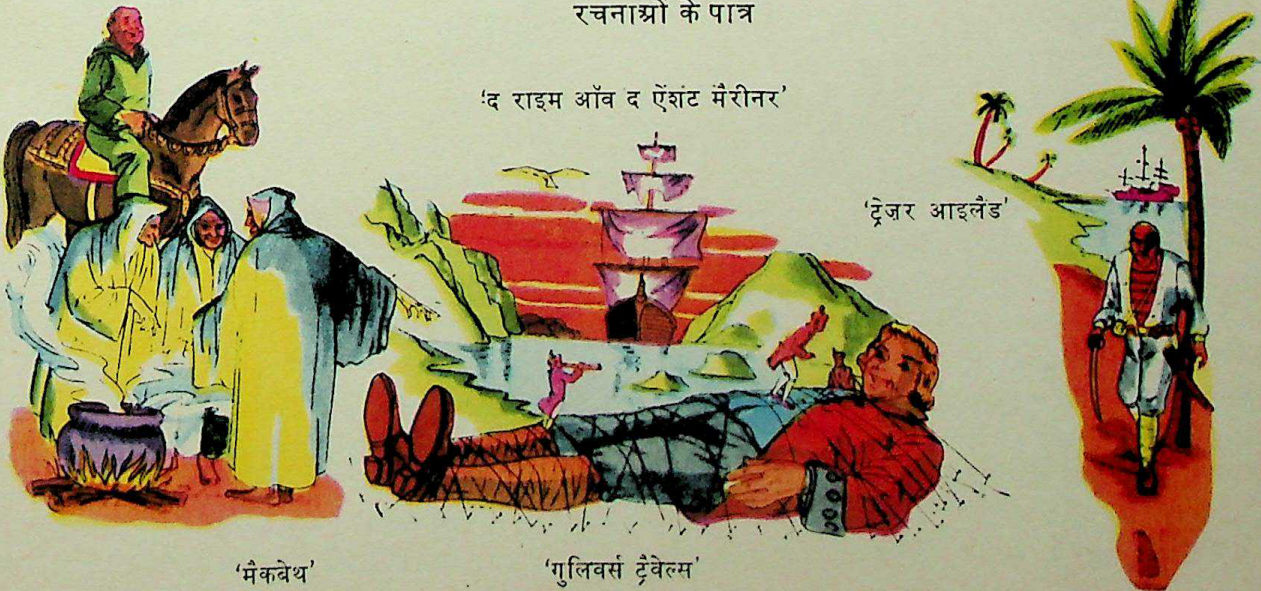
अंग्रेजी साहित्यकारों की कुछ प्रसिद्ध रचनाओं के पात्र

'द राइम ऑव द ऐंशंट मैरीनर'

'ट्रेज़र आइलैंड'

'मैकबेथ'

'गुलिवर्स ट्रैवल्स'



जिसने 'पैराडाइज़ लॉस्ट' की रचना की। मिल्टन के बाद कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक आदि के क्षेत्र में अनेक महान साहित्यकार हुए हैं।

(देखें: किप्लिंग; डिकेन्स; बनियन; शेक्सपियर; स्टीवेंसन)

कुछ प्रमुख अंग्रेजी साहित्यकार

नाम	काल	विधा
जियोफ्रे चॉसर	1340-1400	कविता
विलियम शेक्सपियर	1564-1616	कविता, नाटक
जॉन मिल्टन	1608-1674	कविता
जॉन बनियन	1628-1688	कहानी, उपन्यास
डेनियल डिफ्रो	1660-1731	कहानी, उपन्यास
जोनाथन स्विफ्ट	1667-1745	कहानी उपन्यास
ऑलिवर गोल्डस्मिथ	1728-1774	कविता, नाटक, कहानी
विलियम वड्सवर्थ	1770-1850	कविता
सर वाल्टर स्कॉट	1771-1832	कविता, उपन्यास
संम्युएल टेलर कौलरिज	1772-1834	कविता, निबन्ध
चार्ल्स लैम्ब	1775-1834	निबन्ध, कहानी
जेन ऑस्टिन	1775-1817	उपन्यास
पर्सि बिशे शेले	1792-1822	कविता
जॉन कीट्स	1795-1821	कविता
लार्ड टेनिसन	1809-1892	कविता
विलियम मेकपीस थैकरे	1811-1863	कहानी, उपन्यास
चार्ल्स डिकेन्स	1812-1870	कहानी, उपन्यास
रॉबर्ट ब्राउनिंग	1812-1889	कविता
चार्लट ब्रांटे	1816-1855	कहानी, उपन्यास
एमिली ब्रांटे	1818-1848	उपन्यास, कविता
जॉन रस्किन	1819-1900	कहानी, निबन्ध
जॉर्ज इलियट	1819-1880	कहानी, उपन्यास
क्रिस्टीना रोझेटी	1830-1894	कविता
लेविस कैरोल	1832-1898	कहानी
रॉबर्ट लुई स्टीवेंसन	1850-1894	कविता, उपन्यास
जॉर्ज बर्नार्ड शॉ	1856-1950	नाटक
रडयार्ड किप्लिंग	1865-1936	कविता, कहानी
समरसेट मॉम	1874-1965	कहानी, उपन्यास
टी० एस० इलियट	1888-1965	कविता, नाटक
एच० जी० वेल्स	1896-1946	कहानी, उपन्यास

अंत्याक्षरी (RHYME PLAY) : कबड्डी, फुटबॉल आदि खेलों से मनुष्य की शारीरिक शक्ति और चातुरी की परीक्षा होती है। कुछ खेल ऐसे भी हैं जिनसे व्यक्ति की मानसिक शक्ति की परीक्षा होती है। ऐसे खेलों में अंत्याक्षरी प्रमुख है। यह बहुत प्राचीन खेल है।

अंत्याक्षरी में स्मरणशक्ति की परीक्षा होती है।

इसे खेलने के लिए कम से कम दो व्यक्ति चाहिए। एक व्यक्ति कोई पद्य बोलता है। इसके अंतिम अक्षर से आरंभ होनेवाला पद्य दूसरे व्यक्ति को बोलना होता है। फिर इस पद्य के अंतिम अक्षर से आरंभ होनेवाला पद्य पहले व्यक्ति को बोलना होता है। इस प्रकार खेल चलता रहता है। जिस व्यक्ति की स्मरणशक्ति जवाब दे जाती है, जो ठीक पद्य नहीं बोल पाता, वह हार जाता है।

इसे अधिक व्यक्ति भी खेल सकते हैं। वे सब एक घेरा बनाकर बैठ जाते हैं और अपनी-अपनी बारी पर पद्य बोलते हैं। जो नहीं बोल पाता, वह हट जाता है।

दो दल बनाकर भी इसे खेला जाता है। एक दल का कोई भी व्यक्ति पद्य बोल सकता है। जब कोई भी नहीं बोल पाता, तब वह दल हार जाता है। इस रूप में प्रायः प्रतियोगिताएं आयोजित की जाती हैं। कभी-कभी प्रतियोगिता के लिए एक विशेष ग्रंथ ही निश्चित कर दिया जाता है—जैसे तुलसी रामायण। इसमें रामायण से ही दोहे और चौपाइयां बोलने होते हैं।

अंब्रोज़िया (AMBROSIA) : इसकी तुलना भारतीय पुराणों में वर्णित अमृत से की जाती है। इसके बारे में प्राचीन यूनानियों की धारणा थी कि यह अमरता प्रदान करता है।

प्राचीन यूनानियों और रोमवासियों के देवी-देवता अमर होने के अलावा बाकी बातों में मनुष्यों जैसे ही थे। पुराने ज़माने के यूनानियों और रोमवासियों का विश्वास था कि देवताओं की अमरता का कारण यही है कि वे अंब्रोज़िया खाते हैं।

भारतीय पुराणों में भी देवताओं की अमरता का कारण यही माना गया है कि वे अमृत पीते हैं।

अकिलीज़ (ACHILLES) : प्राचीन यूनानी कवि होमर के महाकाव्य 'इलियड' का एक प्रसिद्ध महारथी। 'इलियड' में ट्रॉजन युद्ध की कहानी है, जो यूनानियों और ट्रॉय-निवासियों में हुआ था।

अकिलीज़ थेतीज़ नामक समुद्री देवी का बेटा था। उसकी मां ने उसे अमर बनाने के लिए एक एड़ी से उठाकर स्टाइख नदी में डुबकी दी थी। इससे उसका सारा शरीर तो हथियारों की चोट से सुरक्षित हो गया, पर एड़ी फिर भी बची रही। ट्रॉय की लड़ाई में अकिलीज़ लगातार जीतता गया। लेकिन एक बार उसकी उसी एड़ी में एक जहरीला तीर आ लगा और वह मर गया।

अपभाषा (SLANG) : हम सब लिखने-पढ़ने या एक-दूसरे से बातचीत करने के लिए भाषा की सहायता लेते हैं। भाषा शब्दों से बनती है। हर भाषा की अपनी-अपनी शब्दावलियां हैं। पर एक भाषा बोलनेवाले सभी लोग एक ही तरह के शब्दों का इस्तेमाल नहीं करते। पढ़े-लिखे

व्यक्ति और अनपढ़ व्यक्ति की शब्दावली में थोड़ा फर्क होता है। इसी तरह एक व्यवसाय और दूसरे व्यवसाय के लोगों, वृद्धों और नवयुवकों तथा एक समुदाय और दूसरे समुदाय की शब्दावलियों में भी अन्तर होता है। एक वर्ग की शब्दावली के सभी शब्दों का सही अर्थ दूसरे वर्ग के लोगों को ठीक-ठीक ज्ञात नहीं होता। इसी प्रकार के अन्तरों से 'वर्ग-भाषाएं', 'समुदाय-भाषाएं' या 'व्यवसाय-भाषाएं' बनती रहती हैं।

'अपभाषा' भी कुछ इसी प्रकार का भाषा-भेद है। आजकल प्रायः अपभाषा का मतलब ऐसे शब्दों से समझा जाता है जिन्हें किसी सुपरिचित वस्तु, व्यक्ति या मुहावरे के रंगीले या ध्वन्यात्मक वर्णन के लिए गढ़ लिया जाता है। जैसे मोटरसाइकिल को साधारण बोलचाल में अक्सर 'फटफटी' कह देते हैं। 'चमचा' (चापलूस), मस्का लगाना (चापलूसी करना), आदि ऐसे ही प्रयोग हैं।

कोई सौ साल पहले अपभाषा के शब्दों का प्रयोग अशिष्ट और दोषपूर्ण माना जाता था। अपभाषा का बहुत अधिक प्रयोग करना भी नहीं चाहिए, नहीं तो दूसरे लोग आपकी बात का मतलब ही नहीं समझ पाएंगे। लेकिन सूझ-बूझ के साथ प्रयोग करने पर अपभाषा के शब्द साधारण भाषा को जानदार बना देते हैं, और हमारी बातचीत को वैयक्तिक पुट देते हैं।

अमरीकी साहित्यकारों
की कुछ प्रसिद्ध
रचनाओं के पात्र



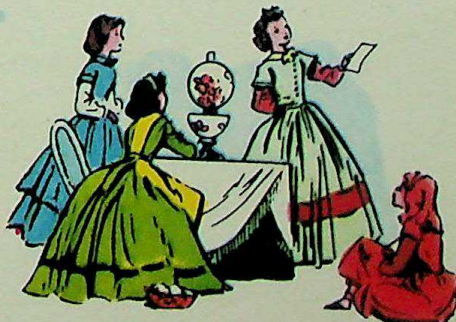
'द ऐडवेंचर्स ऑव
टॉम सायर्स'



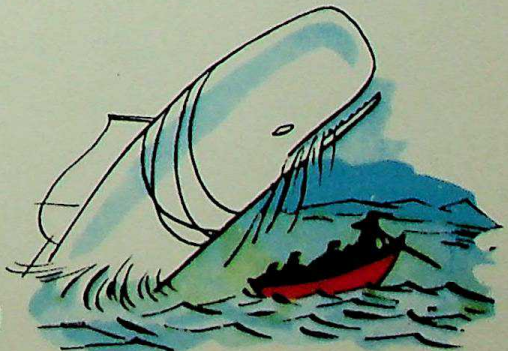
'अंकल रेमस'



'द ऐडवेंचर्स ऑव टॉम सायर्स'



'लिटल वीमन'



'मोबी डिक'

अपभाषा के कुछ शब्द तो अधिक प्रचलित हो जाने पर साधारण भाषा के शब्द बन जाते हैं। पर कुछ शब्द कुछ ही दिनों तक चल पाते हैं।

हर देश की अपनी-अपनी अपभाषाएं होती हैं। अमरीका में बोली और लिखी जानेवाली अंग्रेजी में बहुतायत से अपभाषा के शब्दों का प्रयोग होता है, जो धीरे-धीरे साधारण भाषा में भी स्वीकृत हो गए हैं।

अफ़लातून (PLATO 428-348 ई० पू०): संसार के प्रमुख दार्शनिकों में अफ़लातून या प्लेटो की गणना की जाती है। यह ईसा से पांच शताब्दी पहले यूनान में हुआ था। अपने यौवन के दिनों में ही यह सुकरात के सम्पर्क में आया। सुकरात यूनान का माना हुआ दार्शनिक था। उसके प्रभाव से अफ़लातून भी विचारक बन गया।

सुकरात की मृत्यु के बाद अफ़लातून विदेश-यात्रा पर चला गया। लौटने पर उसने एथेंस में 'अकादेमी' नाम से एक विश्वविद्यालय की स्थापना की। यहां वह अपने विद्यार्थियों को दर्शन की शिक्षा देता और पुस्तकें लिखता था। उसने एक आदर्श समाज-व्यवस्था की कल्पना की, जिसे 'यूटोपिया' कहा जाता है।

कुछ समय बाद सिराक्यूज़ के राजा ने अफ़लातून को अपने यहां बुलाकर अपनी शिक्षा का प्रयोग करने को कहा। अफ़लातून वहां गया पर उसका प्रयोग सफल नहीं हो सका। उसे बन्दी बना लिया गया।

छूटने पर वह एथेंस लौटा और अकादेमी में फिर शिक्षा देने लगा। यहीं 80 वर्ष की अवस्था में उसकी मृत्यु हुई।

अफ़लातून की 25 के लगभग रचनाएं उपलब्ध हैं। इनमें प्रमुख हैं 'रिपब्लिक', 'फ़ेद्रस', 'मार्मेनिदीस' आदि। उसके विचारों का संसार पर बड़ा प्रभाव पड़ा है।

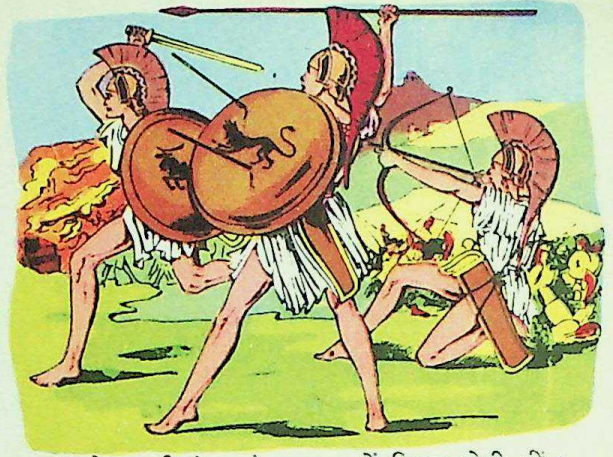
अमरीकी साहित्यकार (AMERICAN WRITERS): एक नये देश से यह आशा नहीं की जा सकती कि उसमें बहुत-से महान लेखक, चित्रकार या संगीतकार होंगे।

सन् 1800 तक अमरीकी एक नये राष्ट्र के निर्माण में ही व्यस्त रहे और साहित्य की रचना की ओर, जैसा कि स्वाभाविक था, अधिक ध्यान नहीं दिया जा सका। परन्तु उसके बाद अमरीका के कितने ही लेखकों का नाम सुनाई देने लगा और कविताओं, कहानियों, नाटकों, निबन्धों आदि की वहाँ खूब रचना होने लगी। उनमें से कुछ रचनाएं तो बहुत ही उच्च स्तर की हैं।

वाशिंगटन इविंग को प्रायः अमरीकी साहित्य का पिता कहा जाता है। उन्होंने कहानियाँ और स्केच लिखे। कई लेखकों ने विशेष रूप से बाल साहित्य की रचना की और उनकी अनेक कविताएँ और कहानियाँ बच्चों में आज भी बड़ी लोकप्रिय हैं। अमरीकी लेखकों द्वारा रचे गए कितने ही पात्र—जैसे कि हकल्बरी फ़िन, टॉम सायर, नन्ही अनाथ एनी, नन्हा बालक ब्ल्यू, चचा रेमस आदि हमें इतने परिचित लगते हैं मानो वे हमारे पड़ोसी ही हों। कितने ही अमरीकी लेखक विश्वविख्यात हैं।

कुछ प्रमुख अमरीकी साहित्यकार

नाम	काल	विधा
वाशिंगटन इविंग	1783-1859	कहानी, निबन्ध
जेम्स फ़ेनिमोर कूपर	1789-1851	कहानी
विलियम कलेन ब्रियांट	1794-1878	कविता
राल्फ़ वॉल्डो एमरसन	1803-1882	कविता, निबन्ध
नैथेनियल हॉथॉर्न	1804-1864	कहानी, उपन्यास
हेनरी वड्सवर्थ लांग्फ़ेलो	1807-1882	कविता
जॉन ग्रीनलीफ़ व्हिटर	1807-1892	कविता
ऑलिवर बेंडेल होम्स	1809-1894	कविता, निबन्ध
एडगर ऐलेन पो	1809-1849	कविता, कहानी
हेनरी डेविड थोरो	1810-1862	निबन्ध
हैरिएट बीचर स्टो	1811-1896	कहानी, उपन्यास
जेम्स रसेल लॉवेल	1819-1891	कविता
हरमन मेलविल	1819-1891	उपन्यास
वॉल्ट व्हिट्मैन	1819-1892	कविता
एडवर्ड एवरेट हेल	1822-1909	कहानी
लुइसा मे ऐल्काट	1832-1888	कहानी
मार्क ट्वेन	1835-1910	कहानी, उपन्यास
विलियम डीन हॉवेल्स	1837-1920	कहानी, निबन्ध
जोएल शैडलर हैरिस	1848-1908	कहानी, उपन्यास
रॉबर्ट फ़्रॉस्ट	1874-1963	कविता
सिन्क्लेयर लेविस	1885-1951	कहानी, उपन्यास
पर्ल बक	1892-	कहानी, उपन्यास
अर्नेस्ट हेमिंग्वे	1899-1962	कहानी, उपन्यास
जॉन स्टाइनबेक	1902-	कहानी, उपन्यास
विलियम फ़ॉकनर	1897-1962	कहानी, उपन्यास



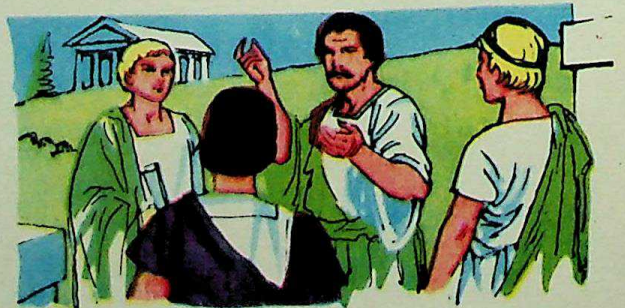
अमेज़न वीरांगनाएँ युद्धकला में निपुण होती थीं।

अमेज़न (AMAZONS): प्राचीन यूनानी पौराणिक गाथाओं में अमेज़न नामक वीरांगनाओं की बहुत चर्चा आती है। इनके देश में पुरुष नहीं थे। इनपर शासन भी एक स्त्री ही करती थी। अमेज़नों के पति पास के देशों में रहते थे। अमेज़न स्त्री यदि किसी लड़के को जन्म देती तो उसे देश के बाहर भेज दिया जाता था, लड़कियाँ ही वहाँ रखी जाती थीं। इन लड़कियों को हथियार चलाने, लड़ने, शिकार करने तथा खेती-बाड़ी करने की शिक्षा दी जाती थी। ये बड़ी लड़ाकू स्त्रियाँ थीं।

दक्षिणी अमरीका की अमेज़न नदी को अपना नाम इन्हीं वीरांगनाओं से मिला है।

अरस्तू (ARISTOTLE 384-322 ई० पू०): इस दार्शनिक की गणना प्राचीन यूनान के सबसे बड़े विद्वानों में की जाती है। अरस्तू की विद्वत्ता की इतनी धाक थी कि जो बात उनकी बात से मेल नहीं खाती थी, उसे गलत ही माना जाता था। अरस्तू की मृत्यु के कोई दो हजार साल बाद तक उनके ज्ञान और विद्वत्ता का ऐसा ही दबदबा यूरोप पर छाया रहा। आज भी अरस्तू की गणना संसार के सबसे बड़े विचारकों और दार्शनिकों में की जाती है।

अरस्तू के पिता मकदूनिया के राजा फिलिप के चिकित्सक थे। इसी फिलिप का पुत्र इतिहास में सिकंदर महान के नाम से प्रसिद्ध है। बचपन से ही अरस्तू हर चीज़ के बारे



अरस्तू संसार के महानतम विचारकों में माने जाते हैं।

में जानने के इच्छुक रहते थे। सत्रह वर्ष की अवस्था में वे एथेंस गए और अफ़लातून या प्लेटो के शिष्य बने। बीस वर्ष तक वे एथेंस ही में रहे। इस बीच उन्होंने काफी-कुछ लिखा भी। अपने गुरु के वे घनिष्ठ मित्र बन गए, यद्यपि दोनों में कई बातों के बारे में मतभेद भी था।

अफ़लातून की मृत्यु के बाद राजा फिलिप ने अरस्तू को वापस मकदूनिया बुला लिया और अपने पुत्र सिकंदर का अध्यापक बना दिया। सात साल तक अरस्तू सिकंदर को पढ़ाते रहे और उसे उन्होंने यूनानी विद्याओं में निपुण बना दिया। इसके बाद अरस्तू एथेंस वापस चले गए और वहां अपना विद्यालय चलाने लगे। इस विद्यालय में दर्शन-शास्त्र की शिक्षा दी जाती थी। उस ज़माने में विज्ञान भी दर्शनशास्त्र का ही एक अंग था।

अलिफ़लैला (ARABIAN NIGHTS) : यह बहुत-सी कहानियों का एक संग्रह है। कहा जाता है कि अलिफ़लैला की कहानियां बगदाद के एक सुलतान को उसकी एक बेगम ने सुनाई थीं। सुलतान बड़ा ही निर्दय और क्रूर था। वह रोज़ एक शादी करता और अगले दिन उस बेगम का सिर कटवा देता।

सुलतान को कहानी सुनने का शौक था।

लेकिन इस बेगम ने शुरू से ही अपनी जान बचाने की तरकीब कर ली। पहली ही रात को उसने सुलतान को एक दिलचस्प कहानी सुनाई और अगली रात को एक और कहानी सुनाने का वायदा किया। अगली कहानी के शौक में सुलतान ने उसे अगले दिन नहीं मारा। रोज़-रोज़ यही होता रहा और बेगम 1001 रात तक उसे एक-एक कहानी सुनाती रही। सुलतान को इस बेगम से इतना प्यार हो गया कि उसने उसकी जान बख़्श दी।

जाहिर है कि सुलतान और बेगम की यह दास्तान भी एक कोरी कहानी ही है। अलिफ़लैला की कहानियां

सिंदबाद जहाज़ी की कहानी अलिफ़लैला की एक अत्यन्त लोकप्रिय कहानी है।



बाज़ के पंजों में जकड़ा
सिंदबाद जहाज़ी

आधुनिक कला के कुछ नमूने



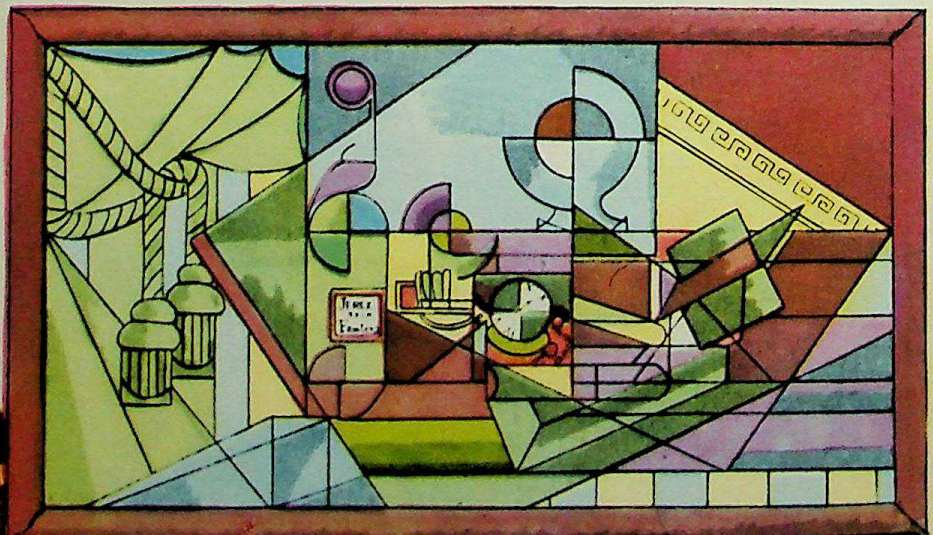
किसी एक व्यक्ति की रची हुई नहीं हैं। असल में ये कहानियां कितने ही लोगों की और कितने ही देशों की हैं और मौखिक रूप से यहां से वहां घूमती रही हैं। आखिर इनको एक-साथ इकट्ठा लिख दिया गया और इस तरह अलिफ़लैला या 'दास्ताने हज़ार रात' तैयार हो गई।

अलिफ़लैला की सबसे प्रसिद्ध कहानी सिंदबाद की है। अलादीन के जादुई चिराग की कहानी भी इसी किताब की है।

आधुनिक कला (MODERN ART) : यदि हम धरती से हज़ारों फुट ऊपर वायुयान से नीचे की ओर दृष्टि डालें तो हमें मैदानों के धुंधले पटल पर जहां-तहां नन्हे-नन्हे रंगीन बिंदु दिखाई देंगे। वे और कुछ नहीं, मकान हैं; खलिहान हैं। हमें सड़कों का सीधा, सफेद फीता-सा भी दिखाई देता है और कहीं दीखती है बल खाती रुपहली एक रेखा—नदी। मतलब यह कि ऊपर से हमें जो कुछ भी दिखाई देता है वह चित्र से कम, पर मानचित्र से अधिक मिलता-जुलता होता है। कम से कम वह हमारे खेतों, सड़कों और नदी-नालों की हबहू तस्वीर नहीं होती। इसके बजाय वह एक अमूर्त ढांचा होता है। आजकल के बहुत-से चित्रकार हरे, लाल, नीले और अन्य रंगों के अमूर्त आकार को चित्रित करना अधिक पसंद करने लगे हैं। वे इन्हें सत्यरूप चित्र से कहीं अधिक महत्व देते हैं।

आधुनिक चित्रकार न केवल प्राकृतिक दृश्यों के बल्कि स्त्री-पुरुषों, फल-फूलों और पेड़-पौधों के भी अमूर्त चित्र (Abstract Paintings) बनाने लगे हैं। सामान्य से सामान्य अमूर्त चित्रण में भी विचारशीलता और सचेत योजना की बड़ी आवश्यकता होती है। रंगीन फोटोग्राफी से अमूर्त कला को विशेष प्रोत्साहन मिला है। कलाकार ने सोचा कि हबहू चित्र तो कैमरा भी खींच लेता है, अतः मुझे उसपर तूलिका

जुआन ग्रिस रचित तैलचित्र 'द वाच'



चलाने की आवश्यकता नहीं। मैं वह काम कर दिखाऊंगा जो कैमरे से संभव नहीं।

कुछ आधुनिक कलाकारों का भुकाव ऐसे चित्र बनाने की ओर होता जा रहा है जो आंशिक रूप से अमूर्त या अमूर्तवत् हों। किसी व्यक्ति के अमूर्तवत् चित्र में हमें वृत्तों, चतुर्भुजों, त्रिभुजों और रेखाओं के साथ-साथ उसकी अधूरी-सी शक्ल और अधूरे-से हाथ दिखाई देंगे—सब एक नमूने में ढले हुए।

आधुनिक चित्रकला की भांति आधुनिक मूर्तिकला भी बहुत हद तक अमूर्त है। अमूर्त चित्रण की भांति वह भी युग की अनुभूतियों और प्रवृत्तियों के अनुरूप ढलती चली जा रही है।

आधुनिक कलाकारों का एक दल सचल पैटर्न या नमूने बनाने की फ़िर्क में है। कुछ-एक ने तो सचल पैटर्न बनाए भी हैं। कुछ दूसरे कलाकारों ने सिनेमा की फिल्मों पर भी डिज़ाइन और पैटर्न के चित्रण का प्रयोग किया है। जब इस प्रकार की किसी फिल्म को प्रोजेक्टर के ज़रिये दिखाया जाता है तो पर्दे पर डिज़ाइन या पैटर्न का सचल चित्र दिखाई देता है।

हमें यह न समझना चाहिए कि केवल चित्र और मूर्तिकला ही आधुनिक कला के विषय हैं। आधुनिक कलाकार तो पैकिंग के कागज़, भित्तिपत्र और कपड़ों तक का रूपांकन करने लगे हैं। वे शीशे और मिट्टी के बर्तन भी कलात्मक ढंग से बनाने लगे हैं। यही हाल भवनों, मोटरों, रसोईघर की आलमारियों और फर्नीचर आदि का है। कला हमारे दिन-प्रतिदिन के जीवन में प्रवेश पा चुकी है।

कुछ आधुनिक कलाएं जनसाधारण की समझ से बाहर की वस्तु हैं। फर्नीचर और भवनों में प्रदर्शित आधुनिक कला को समझ लेना सरल है, क्योंकि आधुनिक भवन, कुसियां और मेजें देखने में सचमुच भवन, कुसियां और

मेजें ही रहेंगी। किन्तु आधुनिक चित्रकला में ढलकर वस्तुएं वैसी नहीं रहतीं जैसीकि लोग आशा करते हैं। उदाहरण के लिए जब लोग देखते हैं कि आधुनिक मूर्तिकार द्वारा निर्मित एक मुखाकृति पर नाक ही नदारद है, या एक आंख ही गायब है, तो वे कह उठते हैं, “छिः, मेरे सामने आधुनिक कला का नाम न लीजिए!” पर उन्हें कौन समझाए कि कलाकार ने उन चित्रों को सुन्दर-सुडौल बनाने में कितना श्रम किया है?

आधुनिक डिज़ाइनकार उपयोगिता और सरलता का बहुत ध्यान रखते हैं। घनी नक्काशी वाला जो फर्नीचर पुरानी हवेलियों के लिए उपयुक्त था, वह आधुनिक छोटे घरों के लिए ठीक नहीं है। अब बड़े मकानों की अपेक्षा ऐसे मकानों को पसंद किया जाता है जिनकी देखभाल सरलता से की जा सकती है।

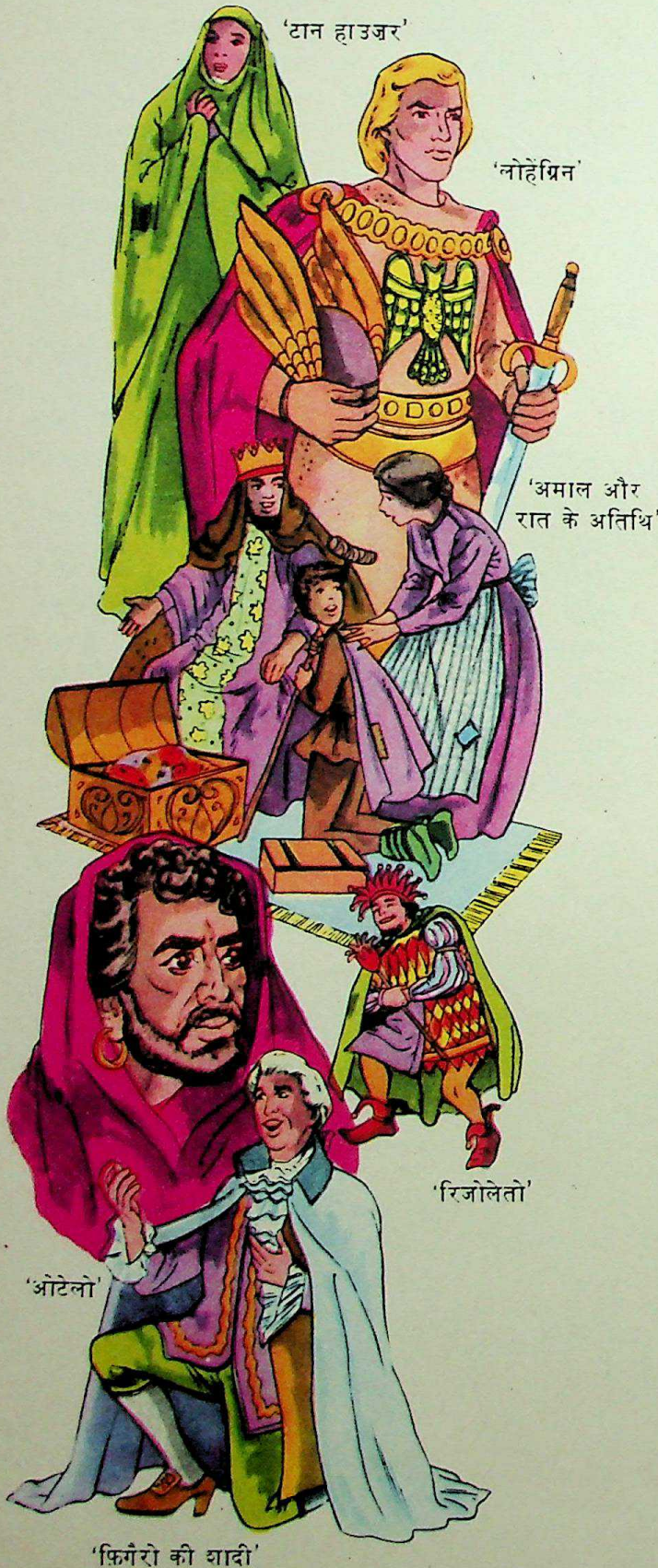
नित नये आविष्कारों से भी कला में नये-नये परिवर्तन आते रहते हैं। जब भीमकाय यात्री-विमान बने तो उनकी भीतरी सजावट के विषय में नये विचार उत्पन्न होने भी स्वाभाविक थे। वैज्ञानिकों ने देखा कि आकाश की बहुत ऊंचाई पर कुछ-एक रंगों से यात्री ऊब जाते हैं। अतः विमान के भीतरी रंगों की योजना बनाते समय उन्हें ध्यान रखना पड़ता है कि बादलों के ऊपर उड़ते समय सूर्य-किरणों की चमक तेज़ होती है तथा बादलों के बीच में उड़ते समय धुंधली। तूफान में अंधेरा छा जाता है। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि हमारी नित नई आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए भी आधुनिक कला में नित नये परिवर्तन हो रहे हैं।

ऑपेरा (OPERA) : चित्र में ‘हांसेल और ग्रेटल’ नामक ऑपेरा का एक दृश्य दिया गया है। ऑपेरा (संगीत-नाटक) की कहानी का अभिनय उसी तरह होता है जैसे नाटक में होता है। लेकिन ऑपेरा में अधिकांश या लगभग समूचे

‘हांसेल और ग्रेटल’ नामक ऑपेरा का एक दृश्य



कुछ प्रसिद्ध ऑपेरा के पात्र



संवाद गीतों में होते हैं। ऑपेरा यूरोप में बहुत लोकप्रिय है।

ऑपेरा भी नाटकों की तरह अंकों और दृश्यों में बंटा रहता है। ऑपेरा में अनेक गायकों की जरूरत पड़ती है। मुख्य पात्रों की आवाज़ ऊंची और सुरीली होनी चाहिए। दूसरे गायक सहगान में भाग लेते हैं। ऑपेरा में बहुत बड़े मंच, अधिक दृश्यों और अनेक पोशाकों की जरूरत पड़ती है। गायकों के अतिरिक्त कुछ 'एक्स्ट्रा' होते हैं। इन्हें कुछ भी गाना नहीं पड़ता। ये पोशाक पहनकर दृश्य में उपस्थित हो जाते हैं और उसे अधिक सजीव बना देते हैं।

ऑपेरा का एक प्रमुख भाग सहनृत्य (बैले) होता है। एक ऑपेरा मंडली में वाद्यवृंद (आर्केस्ट्रा) की अच्छी व्यवस्था होती है। हर ऑपेरा में कुछ संगीत ऐसा होता है जिसमें गाने की कोई आवश्यकता नहीं होती। उदाहरण के लिए, ज्योंही पर्दा ऊपर उठता है, प्रस्तावना-संगीत बजाया जाता है।

'हांसेल और ग्रेटल' नामक ऑपेरा ग्रिम की एक कहानी पर आधारित है। हांसेल और ग्रेटल भाई-बहन हैं। ये एक गरीब भाड़ू बनानेवाली औरत के बच्चे हैं। स्ट्राबेरी की तलाश में ये एक जंगल में जाते हैं और खो जाते हैं। इस जंगल में एक दुष्ट डाइन रहती है। उसका घर मिठाइयों से बना है और उसके चारों ओर मीठी रोटियों का घेरा बना हुआ है। वह डाइन इन्हें पकड़ लेती है। लेकिन ये वहां से भाग निकलते हैं। इस ऑपेरा को एंजल्वर्ट हम्परडिक ने लिखा था।

'हांसेल और ग्रेटल' से भी अधिक प्रसिद्ध ऑपेरा 'आइडा' है, जिसे इटली के संगीतकार वर्डी ने रचा था। इसमें मिस्र की एक राजकुमारी, इथियोपिया के एक गुलाम तथा मिस्र के एक कप्तान की कहानी है।

एक दूसरा प्रसिद्ध ऑपेरा 'विलियम टेल' है जिसे इटली के संगीतकार रोजिनी ने रचा था। इसमें स्विट्ज़रलैंड के एक देशभक्त की कहानी है।

ऑपेरा का प्रारंभ सोलहवीं सदी में हुआ था। इटली के फ्लोरेंस नगर के कुछ विद्वानों और संगीतकारों ने नाटक और संगीत को मिलाकर एक नई विधा तैयार करने का निर्णय किया। इस दल के सदस्यों में एक गैलिली भी थे, जो मशहूर वैज्ञानिक गैलिलियो के पिता थे।

आज जो सबसे पुराना ऑपेरा खेला जाता है, वह 350 वर्ष से भी अधिक पुराना है। इसे मोंटेवर्डी ने रचा था।

'फाउस्ट' और 'कारमेन' दो अन्य बहुत लोकप्रिय ऑपेरा हैं। दोनों की रचना फ्रांसीसी संगीतकारों ने की थी। इनका नाम था चार्ल्स गोनोद और जार्ज बिंजे।

जर्मनी में ऑपेरा का पहला महत्वपूर्ण रचयिता था मोजार्ट। उसीने 'डॉन जियोवानी' की रचना की। कुछ लोग यह मानते हैं कि यह सर्वश्रेष्ठ ऑपेरा है। जर्मनी में मोजार्ट के बाद बेटोवेन और वैग्नर तथा रिचार्ड

स्ट्रॉस का नाम आता है। रूस में भी ऑपेरा ने काफी उन्नति की। अमरीकी और अंग्रेज लेखकों ने भी कुछ सुन्दर ऑपेरा रचे हैं।

दुनिया के लगभग सभी भागों में ऑपेरा के अच्छे रचयिता पैदा हुए हैं। इधर भारत में भी ऑपेरा लिखने की ओर लेखकों ने कुछ रुझान दिखाया है।

(देखें : ऑपरेटा)

ऑपरेटा (OPERETTA) : यह ऑपेरा का ही एक छोटा रूप है। इसमें न तो ऑपेरा जैसे बड़े वाद्यवृन्द की जरूरत पड़ती है, न उतने बड़े मंच की और न ऑपेरा जैसी ऊंची आवाज की। इसके अलावा ऑपरेटा केवल हंसी, खुशी का होता है, इसमें दुःख और त्रास नहीं दिखाया जाता, जैसा कभी-कभी ऑपेरा में होता है। ऑपेरा और ऑपरेटा का एक और महत्वपूर्ण अंतर यह है कि ऑपरेटा में बहुतेरे वाक्य बोले भी जाते हैं, जबकि ऑपेरा में सबको गाया जाता है।

एक प्रकार के ऑपरेटा में कथा को बहुत महत्व दिया जाता है। बीच-बीच में नृत्य और गान होता है, जिससे दर्शकों को ऑपरेटा के चरित्रों की भावनाओं को समझने में सहायता मिलती है। इसे संगीत-कामेदी भी कहते हैं।

कभी-कभी दो व्यक्ति—एक लेखक और एक संगीतकार मिलकर ऑपरेटा की रचना करते हैं। इस तरह के ऑपरेटाओं में रोजर्स और हैमस्टीन, या गिल्बर्ट और सुलिवन द्वारा रचित ऑपरेटा बहुत प्रसिद्ध हैं।

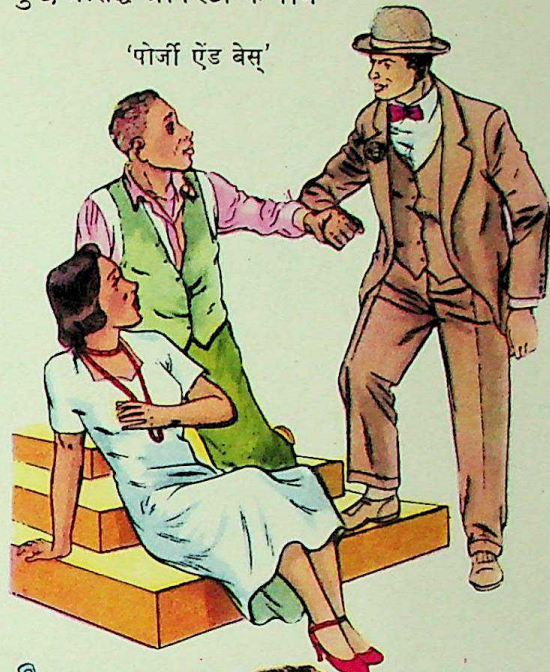
(देखें : गिल्बर्ट और सुलिवन)

ऑरगन (ORGAN) : पाइप ऑरगन सभी बाजों से बड़ा होता है। कभी-कभी एक पाइप ऑरगन में सैकड़ों, या हजारों पाइप लगे होते हैं। अमरीका के एक बड़े पाइप ऑरगन में 40,000 पाइप लगे हैं। पाइप ऑरगन में लगे हुए पाइप विभिन्न शक्तों और आकारों के होते हैं। हर पाइप से एक अलग आवाज निकलती है।

पाइप ऑरगन की शुरुआत नरकुल के एक पोर में

कुछ प्रसिद्ध ऑपरेटा के पात्र

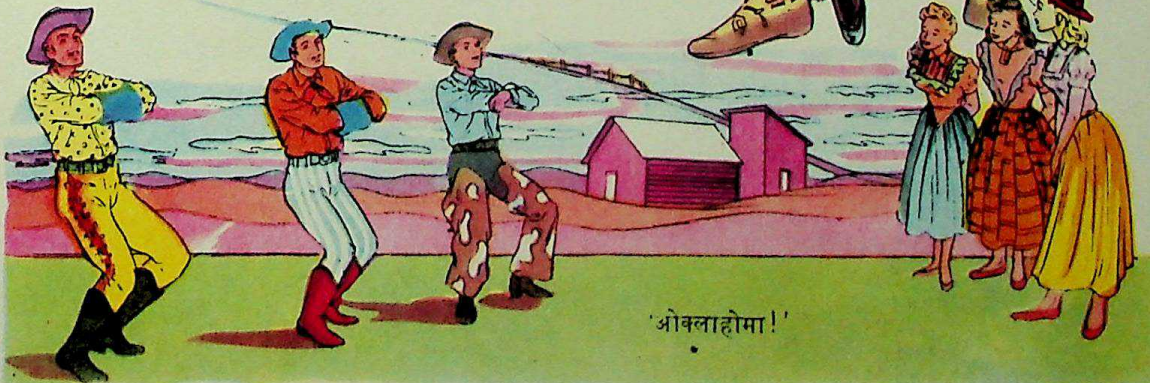
'पोजी एंड बेस्'



'ऐनी गेट यूर गन'



'ओकलाहोमा!'





एक ज़माने में पाइप ऑर्गन में हाथ से हवा भरी जाती थी।

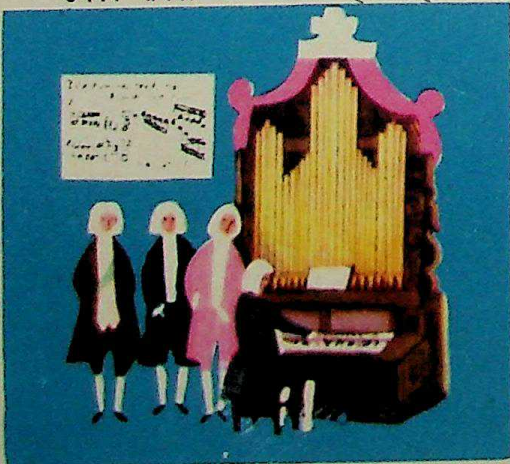
आर-पार फूंकने से हुई है। इस तरह फूंकने से बड़ी अच्छी आवाज़ पैदा होती है।

पाइप ऑर्गन में एक ऐसा खाना होता है, जिसमें हवा भरी होती है। इसमें बिजली के पंखे से या एक बड़ी धौकनी से हवा भरी जाती है। बिजली के आविष्कार से पहले हर पाइप ऑर्गन में धौकनी से ही हवा भरी जाती थी। इंग्लैंड में तो एक इतना बड़ा पाइप ऑर्गन था कि उसमें हवा भरने और धौकनी चलाने के लिए 75 आदमियों की जरूरत पड़ती थी।

पाइप ऑर्गन बजाने के लिए वादक पहले एक पाइप या एक पर्दे से जुड़े हुए कुछ पाइपों में हवा भरता है। ऑर्गन पर अनेक पर्दे लगे होते हैं। वादक हारमोनियम के पर्दों की तरह इन्हें क्रमशः दबाता जाता है।

पाइप ऑर्गन बजाना बहुत कठिन है, लेकिन इसके समान सुरीली आवाज़ दूसरे किसी वाजे की नहीं होती।

कुछ ऑर्गनों में दुहरे पर्दे लगे होते हैं। उनके पाइप काफी लम्बे होते हैं और उनकी संख्या भी अधिक होती है।



आल्हा (AALHA) : यह एक लोककाव्य है जो उत्तर भारत के हिन्दीभाषी प्रदेशों में बहुत लोकप्रिय है। इसमें आल्हा और ऊदल नामक दो भाइयों के वीरतापूर्ण युद्धों का वर्णन है। इसे महाकवि जगनिक ने 13वीं शताब्दी में लिखा था। जगनिक कलिंजर के राजा परमाल के राजकवि थे।

यह काव्य जनता में इतना लोकप्रिय हुआ कि अनेक बोलियों में इसका रूपान्तर होता गया। इसे जनता के बीच गानेवालि लोग पेशेवर हो गए और उन्हें 'अल्हैत' कहा जाने लगा। इसमें बावन लड़ाइयों का वर्णन है जिसमें नैनागढ़ की लड़ाई सबसे रोचक और शौर्यपूर्ण है। आल्हा की तुलना महाभारत के युधिष्ठिर और ऊदल की अर्जुन से की जा सकती है।

जिन बोलियों में आल्हा मिलता है वे हैं : खड़ी बोली, कन्नौजी, बुंदेली, बैसवाड़ी, अवधी, भोजपुरी और मगही। आजकल खड़ी बोली का रूप अधिक प्रचलित है।

'लाइफ ऑव कोलम्बस'



'रिप वान विकल'
स्केच बुक

वाशिंगटन इर्विंग की रचनाएं आज भी लोकप्रिय हैं।

इर्विंग, वाशिंगटन (WASHINGTON IRVING 1783-1859) : पश्चिमी देशों के बच्चों में रिप वान विकल की कथा बहुत लोकप्रिय है। वाशिंगटन इर्विंग ने इस कथा को आज से लगभग 150 साल पहले लिखा था। इर्विंग अमरीकी साहित्य के जनक माने जाते हैं। वे पहले अमरीकी लेखक थे जिन्हें यूरोप में सम्मान मिला।

बचपन में वे न्यूयार्क नगर में रहते थे। वे बहुत दुबले-पतले थे। उन्हें न्यूयार्क में पहले-पहल बसनेवाले डचों के वंशधरों की कहीं हुई कहानियां सुनने का बड़ा शौक था। बाद में जब उन्होंने लिखना शुरू किया तो अपने असली नाम के स्थान पर एक डच नाम, 'डायड्रिक निकरबोकर' अपनाया।

अमरीका को विषय बनाकर लिखी गई उनकी पुस्तकों में उनकी बचपन की सुनी हुई कहानियां भरी पड़ी हैं। उनकी सबसे अच्छी कहानियों का संकलन 'स्केच बुक' (रेखाचित्र) है।

ईसप (AESOP): कहा जाता है कि ईसप का जन्म अब से लगभग ढाई हजार साल पहले हुआ था। वह बड़ा पढ़ा-लिखा और बुद्धिमान आदमी था, पर किस्मत के फेर ने उसे गुलाम बना दिया और जीवन-भर वह प्राचीन यूनान में गुलाम बनकर रहा।

ईसप की कहानियां दुनिया-भर में मशहूर हैं। ये नीतिकथाएं कहलाती हैं और बड़ी शिक्षाप्रद हैं। ज्यादातर कहानियां जानवरों के बारे में हैं, जो आदमियों की तरह बात करते हैं, जैसे 'लोमड़ी और अंगूर' या 'खरगोश और कछुए' की कहानियां।

ईसप ने ये कहानियां लिखी नहीं थीं। उसकी कही हुई इन कहानियों को लोगों ने वर्षों जबानी याद रखा और इस तरह ये पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलती हमारे जमाने तक आ गई। उसके मरने के कोई दो हजार साल बाद ये लिखी गई और आज भी हम सबका मनोरंजन करती हैं।

उपन्यास (NOVEL): लेखन की दो मुख्य विधाएं हैं: पद्य और गद्य। गद्य के अंतर्गत लेख, कहानी, उपन्यास और नाटक आते हैं। उपन्यास में मनुष्य-जीवन और समाज का कथात्मक चित्रण होता है। कहानी में भी यही वस्तु होती है, परंतु कहानी छोटी होती है—उपन्यास उसकी तुलना में बहुत बड़ा होता है। कहानी में प्रायः एक ही घटना का चित्रण किया जाता है, उपन्यास में बहुत-से पात्र और बहुत-सी घटनाओं के माध्यम से जीवन के एक काफी बड़े टुकड़े का चित्र खींचा जाता है।

उपन्यास का विकास आधुनिक युग में ही हुआ है। प्राचीन काल में कहानियां तो बहुत लिखी जाती थीं, परंतु उपन्यास नहीं लिखे जाते थे। काव्य जहां कल्पना और आदर्श की ओर उन्मुख होते हैं, उपन्यास यथार्थ से प्रेरित होता है।

जनता में उपन्यासों का प्रचार बहुत है। उनसे मनोरंजन तो होता ही है, सोचने-विचारने की सामग्री भी प्राप्त होती है। आधुनिक युग में वैज्ञानिक प्रगति के साथ-साथ उपन्यास का विकास होता गया। विज्ञान ने मनुष्य के जीवन में कुछ मौलिक परिवर्तन किए। एक यह कि उसने

मनुष्य तथा अन्य प्रकार के जीवन की अलौकिकता को कम किया और उसे सामान्य यथार्थवादी दृष्टि से समझने की प्रेरणा दी। दूसरे यह कि उसने मनुष्य की भावप्रवणता कम करके उसके स्थान पर बौद्धिकता को स्थान दिया। साहित्य में इन बातों का प्रभाव हुआ कविता के स्थान पर गद्य की प्रतिष्ठा में और गद्य में भी उपन्यास के विकास में।

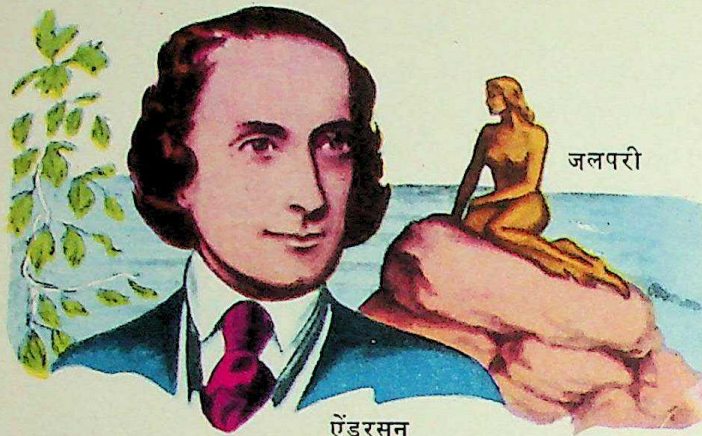
साहित्यकार जब कवि से उपन्यासकार बन गया, तब उसके ऊपर कुछ उत्तरदायित्व आ गए। अब वह कोरी भावना में न बहकर सामाजिक दृष्टि से विचार करने के लिए बाध्य हो गया। जिस अनुपात में यह सामाजिक चेतना बढ़ती गई, उसी अनुपात में उपन्यास का भी विकास होता गया।

मनोविज्ञान के विकास ने उपन्यास में एक नया आयाम जोड़ा। अब उपन्यास मनुष्य के कार्यों की गहरी मानसिक प्रेरणाओं तथा विवशताओं का विश्लेषण करने लगे। इससे मानवी व्यवहार को समझने में सुविधा होने लगी और उसके अनेक रहस्य खुलने लगे। आधुनिक युग में उपन्यास मानव-मन को उद्घाटित करने का बहुत बड़ा साधन है।



एकोर्डियन और कंसर्टिना नाविकों के प्रिय बाजे हैं।

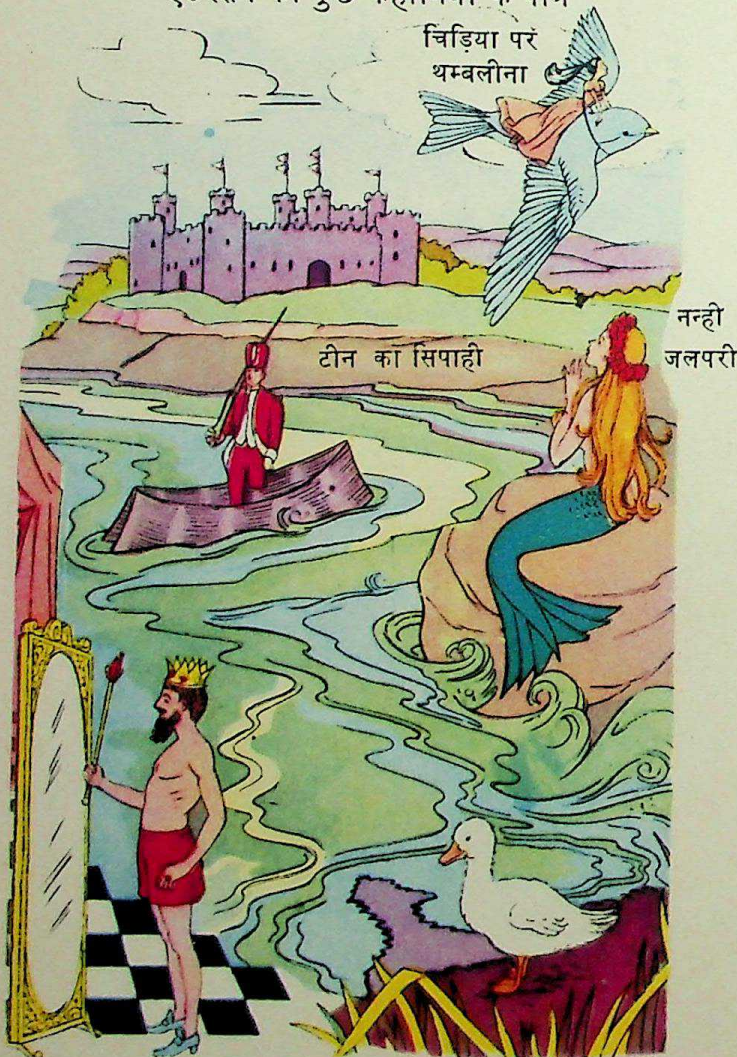
एकोर्डियन (ACCORDION): यह हारमोनियम की तरह का एक बाजा है, जिसे हाथों में लेकर बजाया जाता है। इसके एक सिरे पर आवाज निकालने के पर्दे होते हैं। सिरों को पास लाने से इसकी धौंकनी पिचक जाती है और सिरों को दूर ले जाने से उसमें हवा भर जाती है। हर पर्दा एक-एक पत्ती या रीड से जुड़ा होता है। पर्दे के दवाने से हवा उससे जुड़े रीड से लगकर निकलने लगती है और इससे वह रीड कंपन करने लगता है। हर रीड के कंपन से एक खास तरह की आवाज पैदा होती है। सधे हुए हाथ अलग-अलग पर्दों को दाबकर आवाजों के संयोग से बड़ी सुरीली धुनें पैदा कर सकते हैं।



ऍंडरसन

ऍंडरसन, हांस क्रिश्चियन (HANS CHRISTIAN ANDERSEN 1805-1875) : इनका जन्म डेनमार्क में हुआ था। इनके पिता जूते बनाने का काम करते थे। काम न होने पर वे हांस को कहानियां पढ़-पढ़कर सुनाया करते।

ऍंडरसन की कुछ कहानियों के पात्र



राजा के नये कपड़े

वदसूरत बत्तख

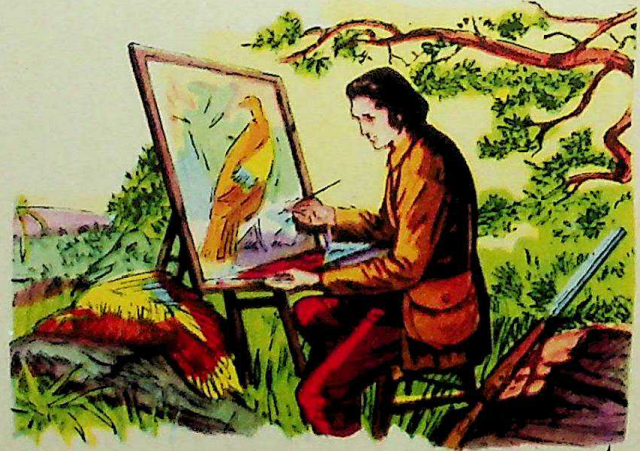
ऍंडरसन अभी ग्यारह वर्ष के ही थे कि इनके पिता का देहांत हो गया और इनपर अपनी रोज़ी कमाने का भार आ पड़ा। इन्होंने तरह-तरह के काम किए। पर कोई काम इन्हें पसंद न आया। आखिर इन्होंने नाटकों में अभिनेता बनने का फैसला किया और चौदह वर्ष की अवस्था में ये डेनमार्क की राजधानी कोपेनहेगन जा पहुंचे। तीन वर्ष तक वहां ये नाटकों में काम करते रहे। फिर इन्होंने लिखना शुरू किया। डेनमार्क के बादशाह को इनकी रचनाएं पसंद आईं। बादशाह ने ऍंडरसन को स्कूल में भरती करवा दिया और बाद में धूमने के लिए पैसा दिया।

ऍंडरसन ने पहले अपनी यात्राओं के बारे में ही लिखा। इसी समय इन्होंने बच्चों के लिए परियों की कहानियां लिखना शुरू किया। ये कहानियां बहुत ही लोकप्रिय हुईं। ऍंडरसन की परियों की कहानियों का संसार की सभी भाषाओं में अनुवाद हो चुका है।

ऐल्काट, लुइसा मे (LOUISA MAY ALCOTT 1832-1888) : इस लेखिका का जन्म अमरीका में हुआ था। ऐल्काट के पिता अमीर न थे, इसलिए इसने पंद्रह वर्ष की आयु से ही अपने परिवार की सहायता करना आरंभ कर दिया था।

लुइसा मे ऐल्काट ने कई पुस्तकें लिखीं। इसकी कहानियां बच्चों में बहुत पसंद की गईं। इसकी सबसे प्रसिद्ध पुस्तक 'नन्ही महिलाएं' (लिटिल वीमन) है, जो खास कर लड़कियों के लिए लिखी गई थी। यह असल में इसकी अपनी कहानी है।

ओदूबों, जॉन जेम्स (JOHN JAMES AUDUBON 1785-1851) : अमरीका के महानतम चित्रकारों में ओदूबों की गणना की जाती है। इनके आरंभिक जीवन की अधिकांश बातें अज्ञात हैं। विश्वास किया जाता है कि इनका जन्म



पक्षियों के हबूहू चित्र बनाने के लिए ओदूबों अपना सारा सामान लेकर जंगल में जाते थे और वहीं काम करते थे।

फ्रांस में हुआ था और 1794 में एक फ्रांसीसी जहाजी कप्तान ने इन्हें गोद ले लिया था। 18 वर्ष की उम्र में ओढ़वों अमरीका आकर बस गए।

अमरीका में ओढ़वों ने कितने ही काम किए। उनकी दिलचस्पी पशु-पक्षियों के चित्र बनाने में ही ज्यादा थी। उनके बनाए अमरीकी पक्षियों के चित्र आज भी बड़े मूल्यवान माने जाते हैं।

उनके सम्मान में अमरीका में पक्षी-जीवन के प्रेमियों ने अपनी संस्था का नाम ओढ़वों सोसाइटी रखा है।

कबीर (KABIR) : महात्मा कबीर मध्ययुग के प्रसिद्ध संत, कवि तथा समाज-सुधारक थे। उनका स्वभाव फक्कड़ था और उन्होंने धार्मिक रूढ़ियों, मूर्तिपूजा तथा छुआछूत का तीव्र खंडन किया। उनके पद और बानियां बड़ी ही निराली हैं। उनकी मृत्यु के बाद कबीर पंथ नाम से एक संप्रदाय भी चल पड़ा जिसके अनुयायी आज भी पाए जाते हैं।

कबीर के जीवन के विषय में बड़ा मतभेद है। कोई उन्हें हिन्दू परिवार में उत्पन्न मानता है, कोई मुस्लिम परिवार में। परन्तु प्रचलित मत यह है कि वे किसी विधवा ब्राह्मणी के गर्भ से उत्पन्न हुए थे और उसने उन्हें लहरतारा नामक तालाब के किनारे छोड़ दिया था। तालाब से एक जुलाहा उन्हें उठा लाया और उसने उनका पालन-पोषण किया। बड़े होकर कबीर ने भी जुलाहे का व्यवसाय अपनाया। पढ़े-लिखे न होने पर भी इनकी साखियां, सबद और रमैनी बड़ी लोकप्रिय हुईं।

कबीर के गुरु के विषय में भी मतभेद है। पर सामान्य-तया स्वामी रामानन्द को उनका गुरु माना जाता है। फिर उनके अपने शिष्य भी बने और उनका अलग संप्रदाय

चल पड़ा। वे अधिकतर काशी में ही रहे, कभी-कभी देशाटन भी करते थे। उनकी पत्नी का नाम लोई और पुत्र तथा पुत्री का नाम कमाल और कमाली था। कबीर कपड़ा बुनकर ही परिवार का भरण-पोषण और साधुओं की अतिथि-सेवा करते थे।

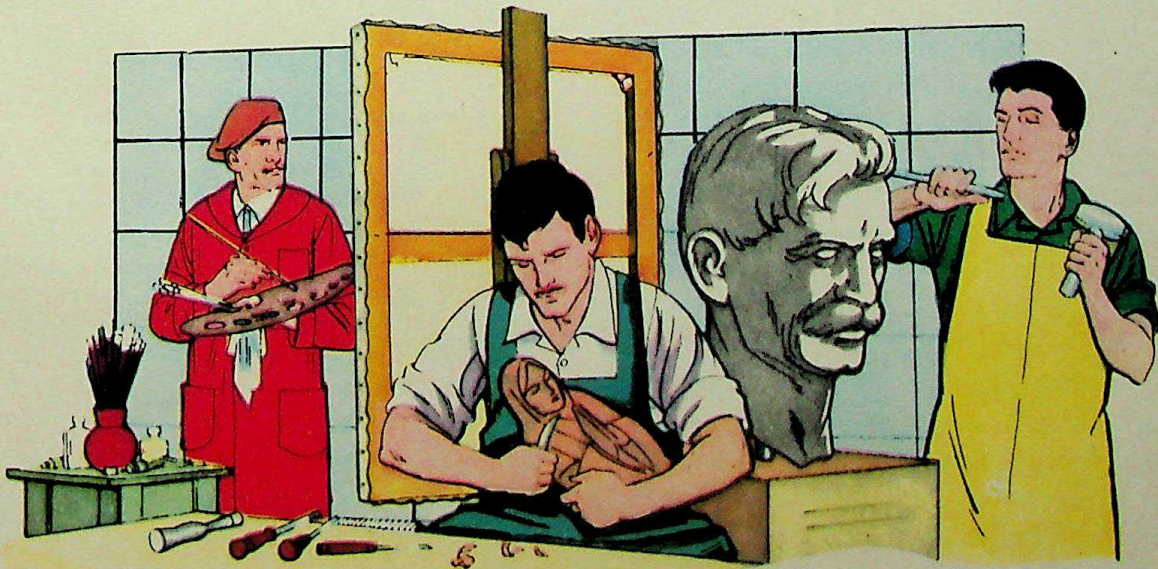
मगहर में कबीर का देहांत हुआ। उनके बाद उनके मार्ग पर संतों की एक स्वतंत्र परंपरा चल निकली और संत मत आरंभ हुआ।

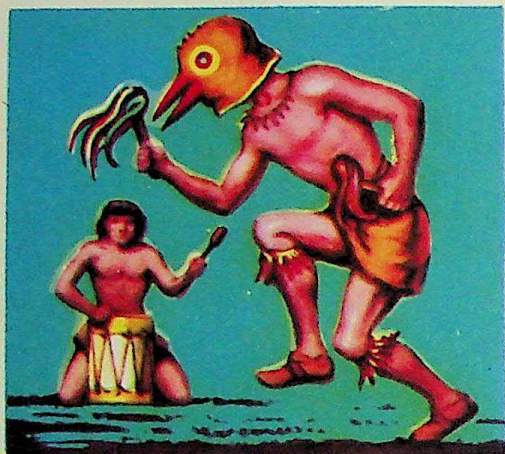
‘बीजक’ में कबीर की रचनाओं का संकलन है।

कला (ARTS) : साथ के चित्र में तीन कलाकार अपने-अपने काम में लगे दिखाए गए हैं। एक, जो चित्र बना रहा है, चित्रकार है। दूसरा, जो पत्थर को तराशकर मूर्ति बना रहा है, मूर्तिकार है। तीसरा, जो लकड़ी की मूर्ति बना रहा है, काष्ठशिल्पी है। चित्रकला, मूर्तिकला और काष्ठ-शिल्प—ये तीनों ही कलाएं हैं। संगीत, नृत्य, अभिनय आदि की गणना भी कलाओं में ही की जाती है।

असल में कलाओं और हमारे दैनिक जीवन के अन्य कई कार्यों में भेद करना बड़ा कठिन है। अगर टोकरी बनाने-वाले का इरादा बस एक मजबूत और बड़ी टोकरी बनाने-भर का है, जिसमें दस किलो आलू भरकर ले जाए जा सकें, तो उसे कलाकार नहीं कहा जा सकता और न उसकी रचना को ही कलाकृति कहा जा सकेगा। लेकिन अगर वह टोकरी की बुनाई में कोई आकर्षक डिजाइन तैयार करे या टोकरी को कोई सुन्दर आकृति दे दे, तो उसे कलाकार कहा जाएगा। कुम्हार के साधारण काम को—घड़े या कुल्हड़ बनाने को—कोई कला नहीं कहेगा, लेकिन वही मिट्टी कलाकार के हाथों में पड़कर सुन्दर आकृतियां पा लेगी और मृत्तिका शिल्प (Clay Work) की सुन्दर-सुन्दर

चित्रकला, मूर्तिकला और काष्ठशिल्प—ये तीनों ही कलाएं हैं।





जन जातियों में संगीत और नृत्य द्वारा पूजा की जाती है।



लड़कियों के लिए संगीत सीखना महत्वपूर्ण माना जाता है।

कृतियां सामने आ जाएंगी। गुसलखाने में गुनगुनाना या आरती गा लेना और बात है, पर गायक इसी स्वर को जो रूप दे देता है, वह गायनकला या संगीत बन जाता है। इसी तरह रंगाई, छपाई, भवन-निर्माण, बुनाई—हर चीज कला का रूप ले भी सकती है और नहीं भी ले सकती है।

यह कहना मुश्किल है कि सबसे पुरानी कला कौन-सी है। हजारों साल पहले, असभ्य अवस्था में, गुफाओं में रहनेवाला मनुष्य अपनी गुफाओं में चित्रकारी किया करता था और अपने हड्डी, पत्थर और धातु के हथियारों पर आकृतियां बनाया करता था। हजारों साल पहले, प्राचीन भारत, मिस्र और बेबीलोनिया में रहनेवाले लोग सुन्दर और विशाल भवन बनाया करते थे, चित्रकारी करते थे, मिट्टी के सुन्दर बर्तन बनाते थे और सुन्दर कपड़ा बुना करते थे। ये सारे काम कला-विषयों में ही गिने जाते हैं। इसी तरह संगीत और नृत्य भी प्राचीन कलाएं हैं। लेकिन यह कौन बता

सकता है कि खोखली लकड़ी पर थपकियां देकर या खोखले बांस में फूंक मारकर आवाज पैदा करने से लेकर संगीत के नाना प्रकार के वाद्य-यंत्र बनने तक कितना समय लगा होगा। यही बात नृत्य के बारे में भी है।

प्रारंभिक मनुष्य के जीवन में कला और धर्म आपस में बड़ी घनिष्ठता से जुड़े हुए थे। कई विद्वानों का विश्वास है कि आदिम गुफाओं की चित्रकारी प्राचीन मनुष्यों की उपासना का ही एक अंग है। इसी तरह वे नाच-गाकर देवताओं को प्रसन्न करने की कोशिश किया करते थे।

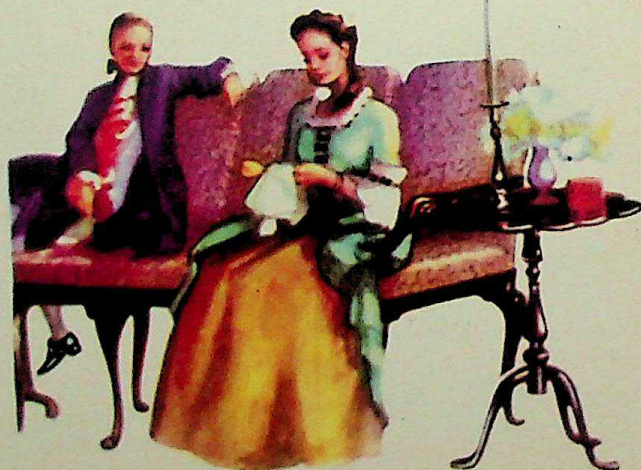


प्राचीन मिस्रवासी संगीत का पूजा में उपयोग करते थे।

आज भी संसार-भर की आदिम जातियों में संगीत और नृत्य को उपासना का अंग ही माना जाता है।

मनुष्य अपने आसपास पाई जानेवाली चीजों से ही सुन्दर चीजें बनाने की कोशिश करता है। पहाड़ों पर, जहां ऊन बहुतायत में उपलब्ध है, लोग बढ़िया शाल, पट्टू और कालीन बनाएंगे, पर मलमल बनाने की कोशिश वे नहीं करेंगे।

कुछ वर्ष पहले तक लगभग हर घर में स्त्रियां कशीदाकारी करती थीं। कशीदाकारी भी एक कला है।



कलाकार कलाकृति में अपने विचार को रूप देता है। किसी-किसी कलाकृति में तो बड़ी गहन भावनाएं रहती हैं। सुन्दर कलाकृति से उसके निर्माता और दर्शक या श्रोता को समान आनन्द की अनुभूति होती है। हम यह कह सकते हैं कि कला एक ऐसी भाषा है जिसे समझना बहुत-से लोगों के लिए बोलचाल की भाषा को समझने की अपेक्षा कहीं अधिक आसान होता है।

कहानी (SHORT STORY) : कहानी गद्य की वह विधा है जिसमें 10-12 पृष्ठों में जीवन की किसी घटना का वर्णन होता है। उपन्यास से कहानी इस अर्थ में भिन्न है कि उपन्यास कहानी से बहुत बड़ा होता है और उसमें अनेक घटनाएं तथा पात्र होते हैं। कहानी पद्य में भी होती है, यद्यपि ऐसी कहानियां कम ही लिखी जाती हैं।

कहानी की रचना बहुत पुराने समय से होती रही है। इसका कारण यह है कि मनुष्य के मन में आपबीती सुनाने और जगबीती सुनने की इच्छा मौलिक रूप से विद्यमान है। प्राचीन काल में धार्मिक उपदेशों को जनता में फैलाने के लिए भी कहानी का साधन अपनाया गया। पुराणों में कहानियों की भरमार है।

आधुनिक कला के रूप में कहानी का विकास 19वीं शताब्दी से आरंभ हुआ। अब कहानी जीवन के अधिक निकट आ गई है और उसका यथार्थ चित्रण करती है।

कहानी का प्रारंभिक रूप लोक-कथाओं, पौराणिक आख्यानों, धार्मिक और नैतिक कथाओं तथा पशु-पक्षियों के आधार पर रचित बोध-कथाओं में प्राप्त होता है। इनमें पुराण, जातक, बाइबिल की कहानियां और पंचतंत्र, हितोपदेश, कथासरित्सागर आदि आते हैं। फ़ारसी और अरबी में 'दास्ताने हजार रात' या अलिफ़लैला प्रसिद्ध हैं। यूनान में ईसप की कहानियां बड़ी लोकप्रिय हुईं।

मध्ययुग में यूरोप के विभिन्न देशों में कथा का कुछ और विकास हुआ। इसमें फ्रांस के चारणों तथा इटली के लघु-उपन्यास लेखकों ने योग दिया। इटली में बोकाशियो ने 'देकामेराँन' लिखी जो रोचकता और प्रवाह की दृष्टि से बड़ी लोकप्रिय हुई। यह पुस्तक उस युग के अनेक लेखकों का आदर्श बनी।

उन्नीसवीं शताब्दी में बाल्ज़क, पुश्किन, गोगोल, पो, हॉथार्न आदि लेखकों ने कहानी को उसका आधुनिक रूप देना आरंभ किया। यथार्थ और मनोविज्ञान इसकी प्रमुख विशेषताएं हैं। चेखव और मोपासां की कहानियां सारे संसार में बड़ी लोकप्रिय हुईं। फिर तो कहानी की बाढ़ आ गई और वह नये-नये प्रयोग करती आगे बढ़ती जा रही है।

भारत में आधुनिक कहानी की प्रेरणा पश्चिम से ही ली गई। सर्वप्रथम बंगला ने यह प्रभाव लिया और रवीन्द्र-नाथ टैगोर तथा शरत्चन्द्र चटर्जी ने कहानियां लिखीं। फिर



रूसी कथाकार अंतोन चेखव (1860-1904)
आधुनिक कहानी के जन्मदाता माने जाते हैं।

यह प्रभाव हिन्दी में आया और प्रेमचन्द जैसे प्रसिद्ध कथाकार उत्पन्न हुए। इसी तरह अन्य भारतीय भाषाओं में भी कहानीकार हुए। आज तो इतनी ज्यादा कहानियां लिखी और पढ़ी जा रही हैं कि लगता है जैसे कहानी ही साहित्य की प्रमुख विधा हो। अनेक पत्रिकाओं में तो केवल कहानियां ही प्रकाशित होती हैं जो खूब बिकती भी हैं।

कहावत (PROVERBS) : कहावत उस सारगर्भित उक्ति को कहते हैं जिसमें जीवन का अनुभव संचित रहता है। ऐसी उक्तियां जनता में बड़ी लोकप्रिय हो जाती हैं और सदियों तक चलती रहती हैं। लोग बात-बात में उनका प्रयोग करते हैं और उनसे अपना कथन सिद्ध करते हैं।

दुनिया के सभी देशों और समाजों में कहावतों का महत्वपूर्ण स्थान है। कोई भी भाषा ऐसी नहीं है जिसमें कहावतों का प्रयोग न होता हो।

कहावत के तीन गुण हैं—उसका छोटा होना, भाव-गंभीर होना, और चुटीलापन। जिसमें इनमें से एक भी वस्तु की कमी होगी, वह कहावत नहीं हो सकती। इन्हीं गुणों के सहारे वह जनता में लोकप्रिय हो सकती है।

कहावतों के विषय में यह पता नहीं चलता कि उन्हें किसने बनाया। वे परम्परा से लोगों के द्वारा व्यवहृत होती चली जाती हैं। परंतु यह बिलकुल जरूरी नहीं कि उन्हें बनानेवाले पढ़े-लिखे व्यक्ति हों—वस्तुतः उन्हें वे ही लोग बनाते हैं जो पढ़ने-लिखने के नाम पर भले ही कोरे हों, पर गुने जरूर हों और जीवन की वास्तविकताओं में अच्छी तरह डूबे हों।

कांस्टेबल, जॉन (JOHN CONSTABLE 1776-1837) : जॉन कांस्टेबल ब्रिटेन के सफाँक नामक स्थान में पैदा हुए थे। यहाँ के प्राकृतिक दृश्य बहुत सुन्दर हैं। उनके पिता आटा पीसने की चक्की चलाते थे। वे चाहते थे कि उनका पुत्र भी यही काम करे।

पर जॉन कांस्टेबल चित्रकार बनना चाहते थे। 1799 में वे रॉयल ऐकेडेमी में चित्रकला सीखने के लिए भर्ती हुए। उनके सर्वोत्तम चित्र सफाँक के प्राकृतिक दृश्यों के हैं। ये चित्र इतने प्रसिद्ध हुए कि लोग सफाँक को कांस्टेबल प्रदेश कहने लगे। 'घास की गाड़ी', 'मक्का का खेत' उनके बहुत प्रसिद्ध चित्रों में से हैं।

कॉमेडी (COMEDY) : उन नाटकों को कॉमेडी या सुखांत नाटक कहते हैं जिनमें आनन्द, मनोरंजन और हास्य की प्रधानता होती है। इन नाटकों में पात्रों के कार्यों तथा कथनों से आनन्द की प्राप्ति होती है।

परंतु हंसी उत्पन्न करनेवाला प्रत्येक नाटक कॉमेडी नहीं होता। केवल हंसानेवाले नाटक को 'फार्स' या प्रहसन कहते हैं। कॉमेडी का एक गंभीर उद्देश्य भी है—जीवन का परिष्कार। अच्छी कॉमेडी में जीवन के कुरूप और हास्यास्पद पहलुओं का इस प्रकार चित्रण किया जाता है कि उससे शिक्षा मिलती है।

कॉमेडी का जन्म प्राचीन यूनान में हुआ। वहाँ के लोग बड़े उत्साहप्रिय थे। वे मदिरा के देवता दायोनिसस की आराधना करते थे और उन्मत्त होकर नाचते-गाते थे। इसी वृत्ति की एक अभिव्यक्ति कॉमेडी में हुई। कॉमेडी का विकास बड़ी तेजी से हुआ। टेरेन्स और प्लाटस आदि लेखकों ने अनेक उत्तम कॉमेडियों की रचना की।

मध्ययुग में कॉमेडी का अर्थ और भी विस्तृत हो गया। अब इसमें पद्यबद्ध कथाओं को भी लिया जाने लगा। दांते की 'ला कामेदिया दीवीने' प्रसिद्ध है। फिर रोमांटिक कॉमेडी का विकास हुआ, जिसका अच्छा उदाहरण शेक्सपियर के नाटकों में मिलता है। फिर और भी तरह-तरह की कॉमेडियां विकसित हुईं, जैसे 'कॉमेडी ऑव ह्यूमर्स', 'कॉमेडी ऑव मैन्स', 'सेंटीमेंटल कॉमेडी' इत्यादि। बेन जॉनसन, मोलियेर, कांग्रीव इत्यादि ने इस तरह की अच्छी कॉमेडियां लिखी हैं।

आधुनिक युग में कॉमेडी का ह्रास हुआ है। अब गंभीर समस्या-प्रधान नाटक लिखे जाते हैं।

कालिदास (KALIDASA) : कालिदास संस्कृत के श्रेष्ठतम कवि और नाटककार माने जाते हैं। उनके समय के संबंध में बड़ा मतभेद है। परंपरा के अनुसार वे ईसा से कुछ समय पूर्व हुए और किसी विक्रमादित्य के नवरत्नों में से एक थे। परंतु इतिहासकार उन्हें पाँचवीं शताब्दी में हुआ मानते हैं। उनका जन्म संभवतः समुद्रगुप्त के शासनकाल

में हुआ और वे चन्द्रगुप्त द्वितीय से कुमारगुप्त के शासनकाल तक जीवित रहे।

कालिदास के चार काव्य तथा तीन नाटक प्रसिद्ध हैं। काव्य हैं : 'रघुवंश', 'कुमारसंभव', 'मेघदूत' और 'ऋतुसंहार' तथा नाटक हैं : 'अभिज्ञान शाकुन्तल', 'विक्रमोर्वशी' और 'मालविकाग्निमित्र'। 'अभिज्ञान शाकुन्तल' संस्कृत नाटक साहित्य की श्रेष्ठतम कृति है। इसकी गणना संसार के सर्वोत्तम नाटकों में की जाती है।

'अभिज्ञान शाकुन्तल' सात अंकों में है। इसमें शकुन्तला और दुष्यन्त के गंधर्व विवाह, वियोग और मिलन की कथा है। 'विक्रमोर्वशी' में पुरुषा और उर्वशी के प्रणय की कहानी है। 'मालविकाग्निमित्र' में पुष्यमित्र शुंग के पुत्र अग्निमित्र और उसकी प्रिया मालविका की कहानी है। मालविका विदर्भ-नरेश की बहन है जिसे दस्युओं के कारण अग्निमित्र के महल में गुप्त रूप से शरण लेनी पड़ती है। दोनों में प्रेम हो जाता है, पर रहस्य बाद में खुलता है। तब दोनों परिणय कर लेते हैं।

'रघुवंश' 19 सर्गों का महाकाव्य है जिसमें सूर्यवंश के राजाओं का इतिहास वर्णित है। 'कुमारसंभव' में शिव और पार्वती के विवाह और मिलन की कथा है। 'मेघदूत' खंडकाव्य है, जिसमें एक विरही के अपनी प्रिया को मेघ के द्वारा संदेश भेजने का वर्णन है। 'ऋतुसंहार' में भारत की छः ऋतुओं का मधुर चित्रण है।

काव्य (POETRY) : पद्य में लिखी साहित्यिक कृति को काव्य कहते हैं। गद्य से काव्य इस अर्थ में भिन्न होता है कि उसे छन्द और लय के नियमों के अनुसार लिखा जाता है। काव्य संगीतमय होता है, उसे गाया जा सकता है, गद्य को गाया नहीं जा सकता। परंतु आधुनिक युग में बहुत-सी कविता छन्द, लय, ताल सभीसे अलग हटकर लिखी जा रही है। परंतु फिर भी वह गद्य नहीं होती, क्योंकि उसका प्रत्येक चरण स्वतंत्र पंक्ति के रूप में लिखा जाता है।

सभी देशों का प्राचीन साहित्य प्रायः कविता में ही है। भारत में वेद, पुराण, महाभारत तथा अन्य ग्रंथ काव्य ही हैं। आरंभ में तो ये लिखे भी नहीं जाते थे, जबानी याद करके गाए जाते थे। वेदों का यही इतिहास है। फिर बहुत समय बाद उन्हें संकलित करके लिखित रूप में प्रस्तुत किया गया।

काव्य के तत्त्व हैं कल्पना, भावना और विवेक। इन सबमें भी भावना सबसे प्रमुख है। इसे रसात्मक अनुभूति भी कहते हैं। साहित्य के प्राचीन आचार्यों ने 'रस' की बड़ी महिमा बताई है। उसे ही कविता का प्राण माना है। उन्होंने रस की तुलना ब्रह्मानन्द, अर्थात् ब्रह्म की अनुभूति के आनंद से की है।

काव्य के दो मुख्य भेद हैं—वर्णनात्मक और अनुभूति-प्रधान। वर्णनात्मक काव्य में जीवन के किसी अंश

का वर्णन किया जाता है। इसके दो उपभेद हैं—महाकाव्य (एपिक) और पद्यकथा (बैलेड)। महाकाव्य भी दो प्रकार के होते हैं—परंपरा से विकसित होनेवाले, जैसे 'भागवत' और 'महाभारत', और कलात्मक जैसे 'रामचरित मानस', 'शिशुपालवध' आदि। बैलेड में वीरता या प्रेम की गाथा रहती है। यूरोप में बैलेड बहुत लिखे गए और लोकप्रिय भी हुए। भारत में भी 'आल्हा' जैसी चीजें लिखी गई हैं।

अनुभूति-प्रधान काव्य व्यक्तिगत होता है और हृदय की गहराइयों से लिखा जाता है। इसे अंग्रेजी में 'लिरिक' कहते हैं। पश्चिम में इसके अनेक उपभेद हैं, जैसे 'ओड' (संबोध गीत), 'सॉनेट' (चतुर्दशपदी), 'एलेजी' (शोक-गीत) 'सैटायर' (व्यंग्य गीत) आदि।

किर्पलिंग, रडयार्ड (RUDYARD KIPLING 1865-1936): अंग्रेजी के प्रसिद्ध कवि और लेखक किर्पलिंग का जन्म बम्बई में हुआ था। इनके पिता चित्रकला के अध्यापक थे। बचपन में इन्होंने भारतीय धार्यों से जंगली जानवरों की बहुत-सी कहानियां सुनी थीं। जब ये छः साल के हुए तो इन्हें पढ़ने के लिए इंग्लैंड भेजा गया। वहां जाकर ये बीमार पड़ गए और फिर पांच साल तक स्कूल नहीं जा सके। जब ये कालेज में भर्ती होनेवाले थे तो इनके माता-पिता ने इन्हें भारत वापस बुला लिया।

लाहौर में ये एक अखबार में काम करने लगे। यहीं पर इन्होंने अनेक कहानियां और कविताएं लिखीं। 1887 में ये एक दूसरे अखबार में काम करने के लिए इलाहाबाद चले गए। अपना खाली समय ये कहानियां लिखने में बिताते थे।

26 की अवस्था होने तक ये एक प्रसिद्ध लेखक हो गए। किर्पलिंग ने एक अमरीकी लड़की से शादी की और कुछ समय तक ये अमरीका में भी रहे।

खुद अपने बच्चों के लिए इन्होंने 'द जंगल बुक', 'द सेकंड जंगल बुक' और 'जस्ट सो स्टोरीज' आदि पुस्तकें लिखीं।

किर्पलिंग की कहानियों के कुछ पात्र



'हाउ द एलिफेंट गॉट हिज टूक'

'रिक्की-टिक्की-टावी'

अमरीका में रहते हुए इन्होंने 'कैप्टेन्स करेजियस' की रचना की।

कुमारस्वामी, डा० आनंद (Dr. ANANDA COOMARASWAMY 1877-1947): ये भारतीय कला के सुप्रसिद्ध आलोचक थे। इन्होंने भारतीय कला की व्याख्या इस रूप में की कि उसका भारतीय दर्शन तथा धर्म से संबंध स्पष्ट हुआ। इनके लेखों, व्याख्यानों तथा पुस्तकों के फलस्वरूप विदेशों में भारतीय कला के विविध रूपों—चित्रकला, मूर्तिकला, वास्तुकला आदि—के प्रति आदर का भाव उत्पन्न हुआ।

डा० कुमारस्वामी के पिता तमिल थे और लंका में बस गए थे। उनका कम उम्र में ही देहांत हो गया। तब आनंद केवल दो वर्ष के थे। इन्होंने वनस्पतिशास्त्र तथा भूविज्ञान का अध्ययन किया। 1906 में इन्होंने डी० एस०सी० की उपाधि प्राप्त की।

इनको लंका में मिनरालॉजिकल सर्वे का डायरेक्टर नियुक्त किया गया। परंतु इसी बीच इनकी रुचि ललित कलाओं में हुई और इन्होंने समस्त दक्षिण-पूर्वी एशिया का भ्रमण करके प्राचीन मूर्तियों और चित्रों का अध्ययन किया। इसके पश्चात् ये कला के विविध पक्षों पर व्याख्यान देने लगे और लेख लिखने लगे, जिनका बड़ा प्रभाव पड़ा। इन्होंने लंदन में कुछ अन्य विद्वानों के साथ मिलकर 'इंडिया सोसाइटी' की नींव डाली। इस संस्थाने कला के अध्ययन और शोध के संबंध में बड़ा कार्य किया। अब यह संस्था 'रॉयल इंडिया, पाकिस्तान एण्ड सीलोन सोसाइटी' के

'द जंगल बुक'

नाम से प्रसिद्ध है।

कला-संबंधी अपने कार्य के आधार पर ये 1917 में बोस्टन (अमरीका) के ललित कला-संग्रहालय में भारतीय विभाग के अध्यक्ष नियुक्त किए गए। कुमारस्वामी मृत्युपर्यंत अमरीका में रहे और भारतीय कला में शोध करते रहे। इन्होंने समस्त संसार का भ्रमण किया और अंग्रेजी तथा फ्रेंच में अनेक महत्वपूर्ण पुस्तकें लिखीं। उनमें से कुछ प्रसिद्ध पुस्तकें ये हैं : 'द एम्स ऑव इंडियन आर्ट', 'आर्ट्स एण्ड क्राफ्ट्स ऑव इंडिया एण्ड सीलोन', 'द डान्स ऑव शिव', 'द हिस्ट्री ऑव इंडियन एण्ड इंडोनेशियन आर्ट', इत्यादि।

डा० कुमारस्वामी ने वेद, उपनिषद्, बौद्ध धर्म आदि पर भी दार्शनिक ग्रंथों की रचना की। इनकी बड़ी प्रशंसा की गई। पश्चिम के विद्वान इन्हें 'वाइज़ मैन ऑव द ईस्ट' कहते थे।

कैरोल, लेविस (LEWIS CARROLL 1832-1898) : बच्चों के लिए लिखी गई अनेक काल्पनिक कहानियों पर लेविस कैरोल का नाम देखने में आता है। लेकिन लेविस कैरोल एक उपनाम है। इन कहानियों के लेखक का असली नाम चार्ल्स लुटविज डॉगसन था। वे ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में गणित के प्राध्यापक थे। हालांकि डॉगसन ने कभी शादी नहीं की, फिर भी बच्चों से उन्हें बहुत प्रेम था।

एक बार गर्मी के दिनों में वे अपने एक मित्र की तीन छोटी बच्चियों को लेकर टेम्स नदी में नौका-विहार के लिए गए। उनमें एक बच्ची का नाम एलिस था। इन

बच्चियों के दिल-बहलाव के लिए उन्होंने एलिस नाम की एक लड़की की कहानी कहनी शुरू की, जो पाताल लोक में अनेक आश्चर्यजनक चीजें देखती है। गर्मी के पूरे मौसम-भर वे इस कहानी को क्रमशः कहते रहे। बच्चियों को इस कहानी से बहुत प्रेम हो गया।

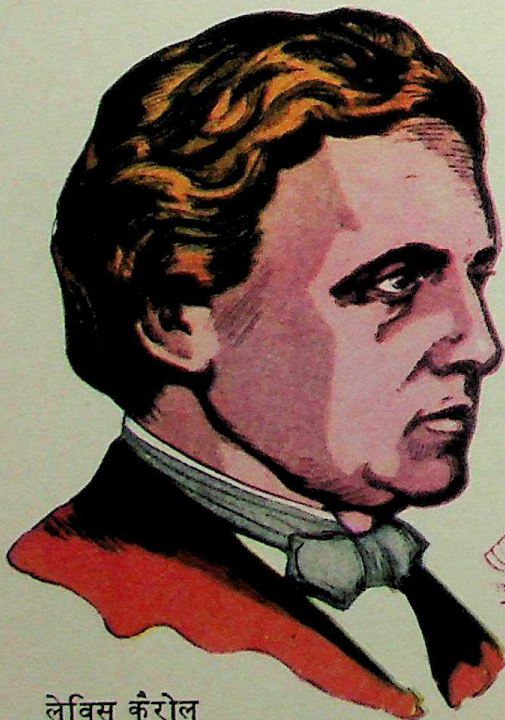
बाद में डॉगसन ने इस कहानी को एक पुस्तक का रूप दे दिया। उन्होंने पुस्तक का नाम रखा 'आश्चर्यलोक में एलिस' (एलिस इन वंडरलैंड)। सन् 1865 में यह पुस्तक प्रकाशित हुई। इसके चरित्रों—पगला हैटवाला (मैड हैटर), ऊंधनेवाला चूहा (द डॉरमाउस), और बैसाखी खरगोश (मार्च हेयर) के बारे में पढ़कर बच्चे और जवान सबको हंसी आ जाती है। पुस्तक बहुत ही लोकप्रिय हुई। डॉगसन ने एलिस और उसके साहसिक कार्यों के बारे में एक और पुस्तक लिखी। जब ये पुस्तकें प्रकाशित हुईं तो इनके लिए चित्र प्रसिद्ध चित्रकार सर जॉन टेनिएल ने बनाए। ये चित्र भी लगभग उतने ही प्रसिद्ध हैं।

आजकल 'आश्चर्यलोक में एलिस' की मूल पाण्डुलिपि लन्दन के ब्रिटिश म्यूजियम में है। इसका मूल्य 20,000 पाँड लगाया जा चुका है।

खय्याम, उमर (OMAR KHAYYAM 1049-1132) : यह फ़ारसी का प्रसिद्ध कवि है जिसकी रुबाइयाँ सारे संसार में बड़ी लोकप्रिय हुई हैं। उनका अनेक भाषाओं में अनुवाद हुआ है।

उमर खय्याम का पूरा नाम अबुलफ़तह उमर बिन इब्राहीम अल खय्यामी था। उसके जीवन के बारे में अधिक पता नहीं है। केवल यह पता है कि वह बारहवीं शताब्दी में हुआ था और सुलतान जलालुद्दीन मलिकशाह की वेधशाला का अधिकारी था।

उमर खय्याम कवि के अतिरिक्त ज्योतिषी, वैज्ञानिक



लेविस कैरोल



कैरोल की रचनाओं के कुछ पात्र

बैसाखी खरगोश ऊंधने वाला चूहा

और दार्शनिक भी था। उसने सुलतान के नाम से एक पंचांग तैयार किया और एक बीजगणित भी लिखा था। ज्यामिति तथा गणित के अनेक विषयों पर उसकी शोधें भी बड़ी महत्वपूर्ण थीं। उसने दर्शन के भी कई ग्रंथ लिखे जिनमें द्वैत और अद्वैत के सिद्धांतों की मीमांसा है।

राजदरबार में वह चिकित्सक के रूप में भी विख्यात था। अरबी में भी उसने कुछ कविता लिखी है।

खुसरो, अमीर (AMIR KHUSRO 1253-1325) : ये फ़ारसी और हिन्दी के प्रमुख कवि थे। इनका जन्म उत्तर प्रदेश के एटा जिले में तेरहवीं शताब्दी में हुआ था। इनके पिता तुर्कों के सरदार थे और अलतमश के जमाने में भारत में आकर बस गए थे।

खुसरो जब दस वर्ष के थे, तभी उनके पिता का देहांत हो गया। तब नाना ने उनका पालन-पोषण किया। खुसरो निजामुद्दीन औलिया के शिष्य हो गए।

बचपन से ही खुसरो ने कविता लिखना आरंभ कर दिया था। शीघ्र ही उनकी प्रतिष्ठा बढ़ने लगी और वे शाही परिवार के सम्पर्क में आए। क़ैकुबाद जब सुलतान हुआ तब उसने खुसरो को अपने दरबार में स्थान दिया। इसके बाद जीवन-भर खुसरो सुलतान की सेवा करते रहे। जब उनके गुरु निजामुद्दीन औलिया की मृत्यु हुई तब उन्हें बड़ा शोक हुआ। छः महीने बाद उनका भी देहांत हो गया। उन्हें गुरु की कब्र के पैताने दफनाया गया।

खुसरो की प्रतिभा बहुमुखी थी। वे कवि, विद्वान, गायक, संत, सभी कुछ थे। उनकी गणना फ़ारसी के फ़िरदौसी, सादी और हाफ़िज़ की कोटि में की जाती है। हिन्दुस्तानी संगीत को भी उनकी महत्वपूर्ण देन है।

खुसरो के कई दीवान (कविता-संग्रह) तथा अन्य ग्रंथ प्रकाशित हुए हैं। उन्होंने हिन्दी में भी एक दीवान लिखा था। तब हिन्दी भाषा बन ही रही थी। इसलिए उसके विकास में भी खुसरो का महत्वपूर्ण योग माना जाता है।

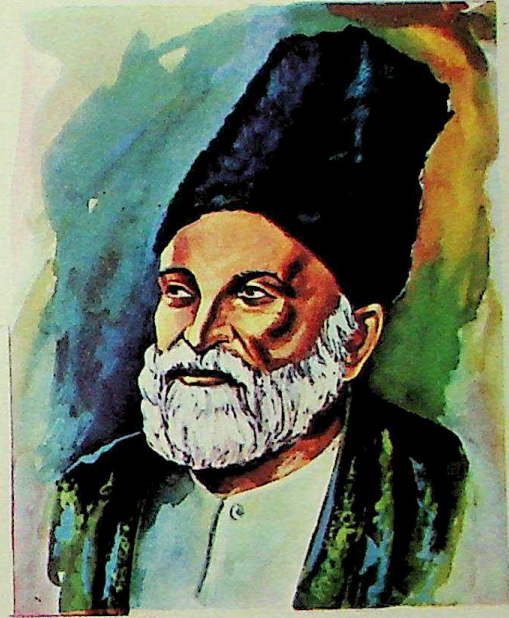
गॉग, विन्सेंट वान (VINCENT VAN GOGH 1853-1890): आधुनिक चित्रकला में विन्सेंट वान गॉग का महत्वपूर्ण स्थान है। उसे चित्रकला के उत्तर प्रभाववादी आन्दोलन का जनक माना जाता है।

वान गॉग हॉलैंड में 1853 में पैदा हुआ था। उसके पिता पादरी थे। वान गॉग की प्रवृत्ति बचपन से ही चित्रकला की ओर थी। वह चित्र-विक्रेताओं की दुकानों पर नौकरी करता रहा। फिर वह भी पादरी बन गया और गरीब खदान मजदूरों में रहकर काम करने लगा। इसके साथ ही फुरसत के समय वह चित्र बनाता था।

वान गॉग का स्वभाव बड़ा सरल और भावुक था। इसलिए जीवन-भर वह दुःखी रहा। उसे प्रेम में कभी

सफलता नहीं मिली। इसके लिए उसने एक स्त्री को अपना कान भी काटकर दे दिया। उसे अस्पताल ले जाया गया। फिर उसपर पागलपन के दौरे पड़ने लगे। 37 साल की अवस्था में उसने आत्महत्या कर ली।

मृत्यु के बाद वान गॉग के बनाए चित्रों की ओर लोगों का ध्यान गया। उन्हें उनमें एक नई शैली के दर्शन हुए। उनका मूल्य बढ़ा और यहां तक बढ़ा कि एक-एक चित्र लाखों डालर में बिकने लगा। यह नियति का व्यंग्य है कि वान गॉग स्वयं जिन्दगी-भर दाने-दाने का महताज रहा।



मिर्जा गालिब

गालिब (GHALIB 1769-1869) : मिर्जा असदुल्ला खां गालिब उर्दू के सबसे प्रसिद्ध कवि हैं। उर्दू में यद्यपि इन्होंने थोड़ा ही लिखा, परन्तु उतना ही इन्हें सदा के लिए प्रसिद्ध कर देने को पर्याप्त था। इनके शेर बहुत ही लोक-प्रिय हैं।

मिर्जा गालिब का जन्म आगरा में हुआ था। इनके पिता अलवर नरेश की सेना में थे। वे युद्ध में मारे गए। तब गालिब अपने चाचा के यहां रहने लगे। जब चाचा भी कुछ समय बाद मर गए तो गालिब को ननसाल जाना पड़ा। वहां इन्होंने फ़ारसी और उर्दू की शिक्षा प्राप्त की।

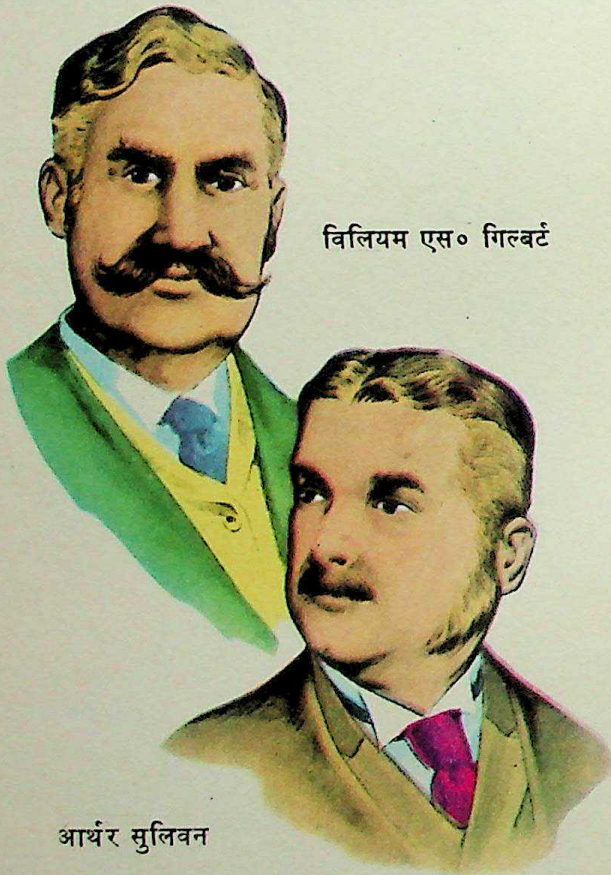
गालिब ने पहले फ़ारसी में शायरी शुरू की, फिर उर्दू में। शीघ्र ही इन्होंने ऐसी चीजें लिखना आरंभ कर दिया जो मार्मिक होते हुए भी सभी की समझ में आ सकती थीं। इन्होंने उर्दू में गद्य भी लिखा जो बहुत मंजा हुआ था।

आरंभ में इनका जीवन आर्थिक कष्ट में बीता। पर कुछ समय बाद नवाब रामपुर इनपर मुग्ध हो गए और इन्हें अपने यहां बुलाकर रखा। दिल्ली के दरबार से भी

इनको 'नज़मुद्दौला दबीरुलमुल्क निज़ाम जंग' की पदवी मिली, जिसके साथ पचास रुपये मासिक की वृत्ति भी थी। फिर इनको दिल्ली कालेज में फ़ारसी की प्रोफ़ेसरी भी पेश की गई, पर इसे इन्होंने मंज़ूर नहीं किया।

मृत्युपर्यंत ये दिल्ली में ही रहे। इनकी कब्र सुप्रसिद्ध संत ख्वाजा निज़ामुद्दीन औलिया के मकबरे के पास बनाई गई।

फ़ारसी के कुलियात में इनकी फ़ारसी कविताओं का संग्रह है। उर्दू की कविताओं का संग्रह 'दीवान-ए-ग़ालिब' के नाम से प्रख्यात है। गद्य रचनाओं में 'दस्तबू' प्रसिद्ध है, जिसमें सन् 1857 के विद्रोह का वर्णन है।



विलियम एस० गिल्बर्ट

आर्थर सुलिवन

गिल्बर्ट और सुलिवन (GILBERT AND SULLIVAN): गिल्बर्ट अंग्रेज़ी का कवि था और सुलिवन संगीतकार। इन दोनों ने मिलकर लगभग एक दर्जन ऑपरेटा (संगीत नाटक) रचे। लोगों ने इन्हें बड़ा पसन्द किया। इसी कारण ये दोनों ही बड़े प्रसिद्ध हो गए। लेकिन आपस में इनकी बनी नहीं। सन् 1896 में आखिरी ऑपरेटा लिखने के बाद दोनों अलग हो गए।

गिल्बर्ट और सुलिवन के ऑपरेटाओं में 'द मिकाडो', 'द पाइरेट्स ऑव पेनज़ान्स' और 'एच० एम० एस० पाइनाफ़ोर' बहुत प्रसिद्ध हैं। ये सभी सुखान्त हैं। हर वर्ष ये बार-बार खेले जाते हैं। लन्दन का सेवॉय नामक नाटक-

घर तो केवल गिल्बर्ट और सुलिवन के ऑपरेटाओं के लिए ही बनाया गया था।

गोथिक कला (GOTHIC ART): वास्तुकला की एक प्रसिद्ध शैली, जिसका यूरोप में प्रचार मध्ययुग में हुआ। इस शैली की मूल प्रेरणा जर्मनों की गोथ नामक जाति द्वारा बनाई इमारतों से प्राप्त हुई और बाद में यह विकसित होती चली गई।

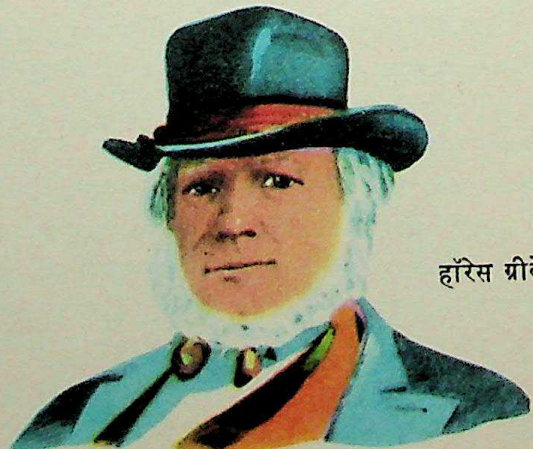
इस शैली की पहचान यह है कि इसके शिखर पतले और नुकीले होते हैं। बाहर की ओर इनकी दीवारें पुश्तों से मज़बूत की होती हैं। इस शैली में बनी इमारतों की खिड़कियों में रंगीन कांच का प्रयोग होता है, और प्रायः उनसे पशु-पक्षियों और पेड़-पौधों की आकृतियां बनाई जाती हैं। जो गिरजे इस शैली में बने होते हैं उनमें ईसा तथा देवी-देवताओं के चित्र भी रंगीन कांचों से बनाए जाते हैं। भारत में इस प्रकार के गिरजे और भवन बहुसंख्या में हैं।

इस शैली का प्रचार बारह से पंद्रहवीं शताब्दी तक रहा।

ग्रीले, हॉरेस (HORACE GREELEY 1811-1872): एक अखबार के सम्पादक की हैसियत से अमरीका में जितने प्रसिद्ध हॉरेस ग्रीले रहे हैं उतना शायद ही कोई और रहा हो। ग्रीले को कोई बहुत अधिक शिक्षा नहीं मिली थी। वे 14 साल की उम्र में ही एक प्रेस में काम करने लगे थे।

ग्रीले को अपना अखबार निकालने की धुन सवार हो गई। उन्होंने न्यूयार्क से एक अखबार निकाला जो केवल तीन सप्ताह चला। फिर दूसरा अखबार शुरू किया। उसका भी वही परिणाम रहा। तब उन्होंने 'डेली ट्रिब्यून' निकाला। वह इतना जमा कि 83 साल तक चलता रहा और 1924 में 'हेरल्ड' अखबार में मिल गया।

ग्रीले ने अपने अखबार द्वारा दास-प्रथा के विरुद्ध ज़बर्दस्त संघर्ष किया।



हॉरेस ग्रीले

चारण (TROUBADOURS) : मध्ययुग में भारत की तरह यूरोपीय देशों में भी कुछ चारण गांव-गांव घूमा करते थे। वे किलों में जाकर सामंतों को गीत सुनाते थे और कभी-कभी जन-साधारण के लिए भी गाते थे। अलग-अलग स्थानों में इन भ्रमणशील गायकों के लिए अलग-अलग नाम प्रचलित थे। फ्रांस में इन्हें त्राउबादूर, आयरलैंड में मिन्स्ट्रैल, स्कैंडिनेविया के देशों में स्काल्ड और जर्मनी में मिनीसिगर कहते थे। धीरे-धीरे इन सबके लिए यूरोप में 'त्राउबादूर' शब्द का प्रयोग होने लगा।

त्राउबादूर कई प्रकार के गीत गाते थे। इनमें युद्ध के गीत, सामयिक घटनाओं पर रची गई तुकबंदियां और चरवाहों के प्रेमगीत प्रमुख होते थे। ये सुन्दरियों की प्रशंसा में लिखे गए गीत और धार्मिक भजन आदि भी गाते थे।

भारत में इस प्रकार के लोगों के लिए बंदी, मागध, सूत, भाट, चारण आदि अनेक नाम प्रचलित थे। मध्य-युग में भारत छोटे-छोटे राज्यों में बंटा हुआ था। हर राजा के दरबार में चारण होते थे, जिनका काम अपने राजा का गुणगान करना और युद्धकाल में जनता में युद्ध के लिए उन्माद जगाना था। भारतीय इतिहास में इन भाटों और चारणों का बहुत महत्व है।

भारत में कई चारण कवि बहुत प्रसिद्ध हुए हैं। वे राजा की भूठी-सच्ची प्रशंसा में गीत ही नहीं गाते थे, बल्कि उसके मित्र, सलाहकार और वीर सामंत भी थे। इस प्रकार के चारणों में अंतिम हिन्दू सम्राट पृथ्वीराज चौहान के चारण चंदवरदाई का नाम चोटी पर आता है। चंदवरदाई द्वारा रचित 'पृथ्वीराज रासो' हिन्दी साहित्य का पहला महत्वपूर्ण काव्य-ग्रंथ माना जाता है। महोबा के परमार राजा के दरबार के चारण जगनिक का नाम भी

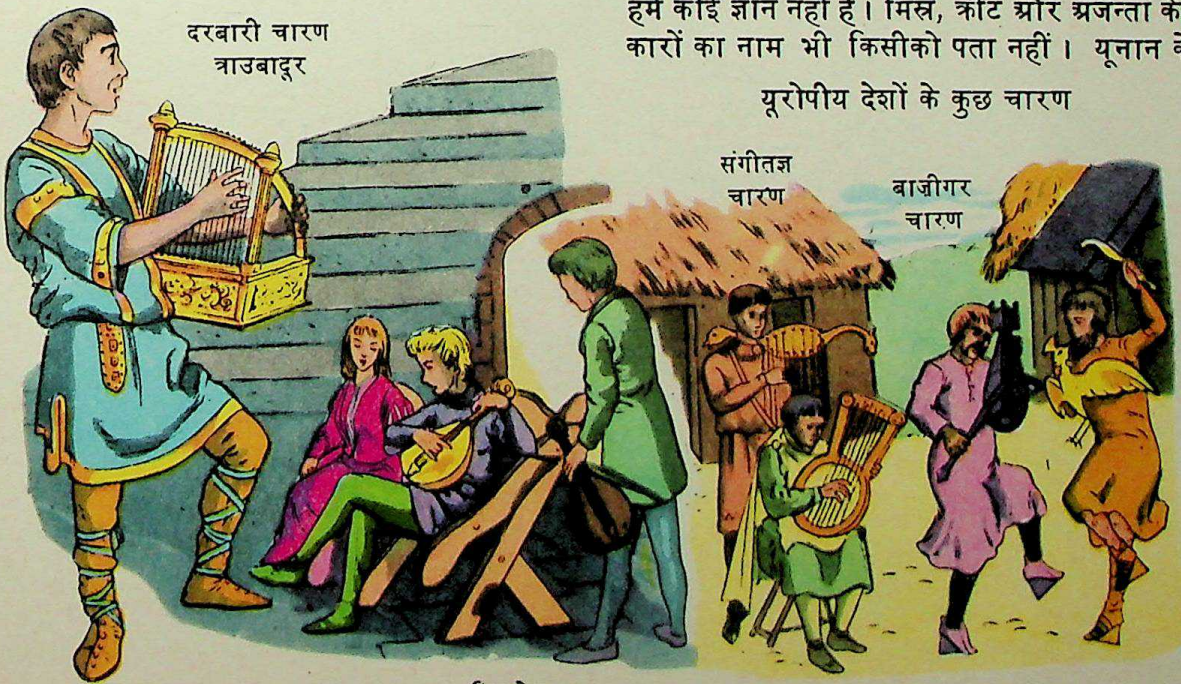
बहुत महत्वपूर्ण है। इस कवि ने 'आल्ह खंड' की रचना की थी, जो किसी ज़माने में देश के बच्चे-बच्चे की ज़बान पर था।

चित्रकला और चित्रकार (PAINTING AND PAINTERS) : अजन्ता और एलोरा के चित्र दुनिया-भर में मशहूर हैं। इन चित्रों में कुछ आज से दो हजार वर्ष पुराने हैं। अजन्ता के चित्रों से भी पुराने चित्र हमारे देश में हड़प्पा और मोहनजोदड़ो में प्राप्त हुए हैं। ये चित्र अधिकतर बर्तनों और मटकों पर बनाए गए हैं। मध्य भारत और मिर्जापुर की गुफाओं में इनसे भी पुराने चित्र मिले हैं जो दसियों हजार वर्ष पुराने हैं। इनको बनानेवाले मनुष्य गुहावासी थे। गुहावासी मनुष्यों के बनाए हुए चित्र केवल भारत में ही नहीं, बल्कि दूसरी जगहों पर भी पाए गए हैं।

मिस्र में चित्रकला पत्थर की नक्काशी को सुन्दर बनाने के लिए शुरू हुई। आज से 3,500 वर्ष पहले मिस्र के निवासी दीवारों पर सुन्दर चित्र बनाने लगे थे। इनके कुछ चित्र बहुत सजीले हैं। सबसे प्राचीन भित्तिचित्र क्रीट देश के निवासियों द्वारा राजमहल की दीवारों पर बनाए गए थे। इसी तरह यूनानी लोग अपनी मूर्तियों को रंगते थे। यूरोप में अंधयुग में ईसाई संन्यासियों ने किताबों को सजाने के लिए कुछ बहुत सुन्दर चित्र बनाए थे। ईसाई संन्यासियों की तरह ही भारत के महायान सम्प्रदाय के बौद्ध संन्यासी अपने धर्मग्रन्थों पर देवी-देवताओं के सुन्दर चित्र बनाते थे। ये चित्र तालपत्र पर बने हैं।

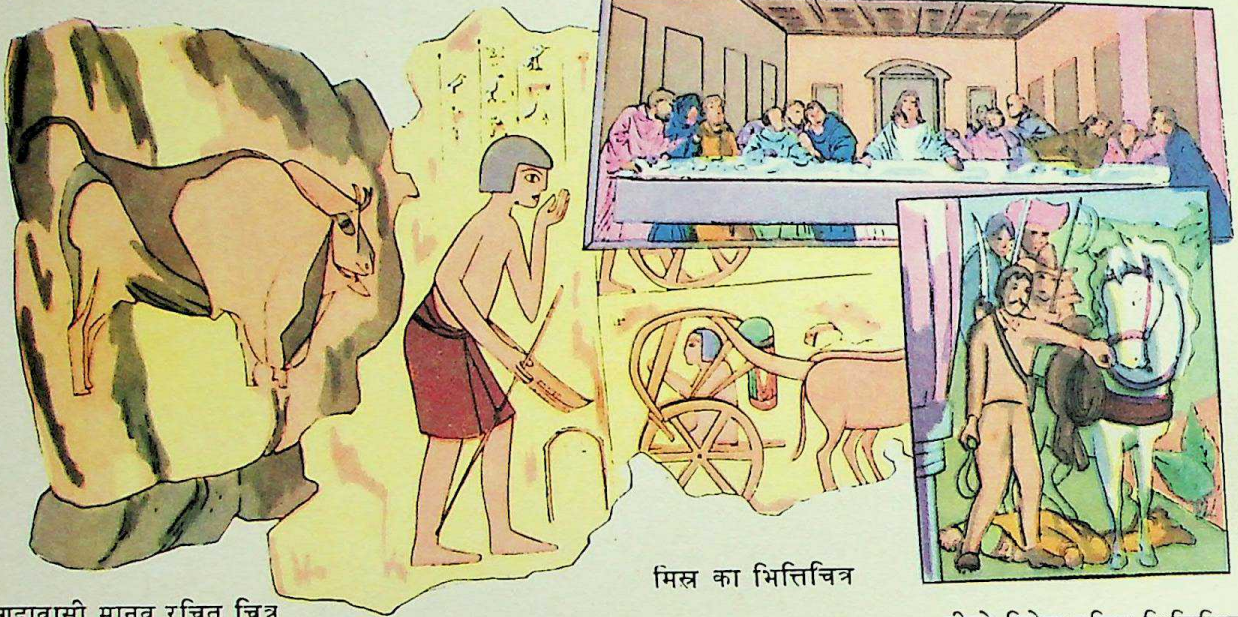
प्रारंभिक चित्रों के बारे में जितना ज्ञान आज हमें है उतना उनके चित्रकारों के बारे में नहीं है। जिन गुहावासी मनुष्यों ने अपनी गुफाओं को चित्रित किया, उनके बारे में हमें कोई ज्ञान नहीं है। मिस्र, क्रीट और अजन्ता के चित्रकारों का नाम भी किसीको पता नहीं। यूनान के कुछ

यूरोपीय देशों के कुछ चारण



मिन्स्ट्रैल

लियोनार्दो दा विंची रचित चित्र 'द लास्ट सपर'



गुहावासी मानव रचित चित्र

मिस्र का भित्तिचित्र

डिगो रिवेरा रचित भित्तिचित्र

चित्रकारों का नाम हम जानते हैं, लेकिन उनके बारे में अधिक जानकारी हमें नहीं है। किसी प्रसिद्ध रोमन चित्रकार का भी आज पता नहीं चलता। लेकिन आज से 650 वर्ष पहले यूरोप में पुनर्जागरण काल के साथ ही चित्रकला ने नया मोड़ लिया। इसकी शुरुआत इटली में हुई और वहां से यह यूरोप के दूसरे देशों में फैली।

भारतीय चित्रकला का पुनरुत्थान मध्ययुग में मुगल और राजपूत कला के साथ हुआ। बाद में इसकी कई स्थानीय शैलियों का विकास हुआ।

यूरोप में पुनर्जागरण काल में जितने महान चित्रकार हुए उतने महान चित्रकार एक ही युग में न तो उसके पहले कभी हुए, न उसके बाद ही। पुनर्जागरण काल के चित्रकार ऐसे चित्र बनाते थे जो एकदम सच्चे मालूम होते थे। कुछ अपनी सुन्दर रेखाओं के लिए मशहूर हैं, तो कुछ शैली और दृश्य के लिए। वेनिस के चित्रकार अपने रंगों की स्पष्टता के लिए मशहूर हैं।

'द लास्ट सपर' आज से लगभग साढ़े चार सौ वर्ष पूर्व बना था। यह एक विश्व-प्रसिद्ध चित्र है। इसमें ईसा मसीह को अपने बारह शिष्यों के साथ अन्तिम बार भोजन करते हुए दिखाया गया है। यह चित्र मिलान के एक गिरजाघर की दीवार पर बना है। इसे बनानेवाला कलाकार लियोनार्दो दा विंची था। मैक्सिको का चित्रकार डिगो रिवेरा भी एक प्रसिद्ध भित्तिचित्रकार था।

आज से 3,000 वर्ष पहले से भित्तिचित्र कच्चे पलस्तर पर ही रंग लगाकर बनाए जाते रहे हैं। लेकिन भित्तिचित्र बनाने के लिए बहुत तेजी से रंगने की जरूरत होती है, नहीं तो पलस्तर सूख जाने का डर रहता है।

जल में घुलनेवाले रंग ग्राम तौर पर पारदर्शी होते हैं। इन्हें बनाने के लिए भी बहुत फुर्ती की जरूरत पड़ती है। जल-रंग (वाटर कलर) से चित्र बनाना बहुत कठिन काम है।

तैलचित्र सबसे आसानी से बनाए जा सकते हैं। तैलचित्र का रंग तेल में मिला होता है। यह बहुत धीरे-धीरे सूखता है। अगर चित्रकार से कोई भूल हो जाए तो वह रंग को उतारकर चित्र फिर बना सकता है। अनेक प्राचीन चित्रकार अपने चित्रों पर कई पर्तें रंग लगाते थे।

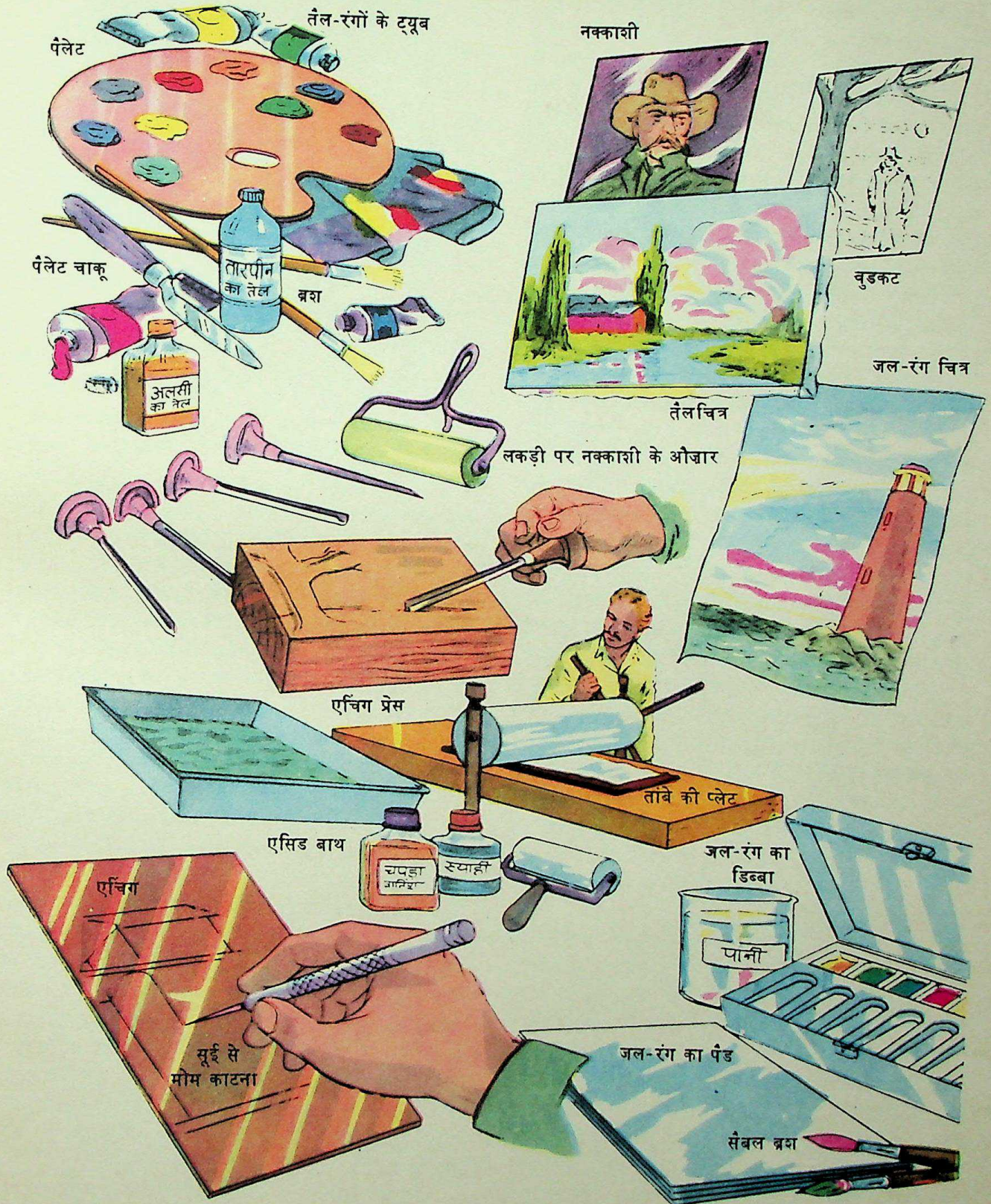
चित्रकारों ने चित्र बनाने की कई शैलियों को जन्म दिया है। कुछ चित्र तूलिका को स्वतंत्र रूप से चलाते हुए बनाए जाते हैं। इसमें तूलिका की हर लकीर साफ दीखती है। कुछ चित्रकार केवल छोटे-छोटे बिन्दु लगाते हुए चित्र बनाते हैं। कुछ इधर-उधर छोटी-छोटी रेखाएं खींचते हुए चित्र बनाते हैं। कुछ इस तरह रंग लगाते हैं कि फलक बहुत चिकना हो जाता है। दूसरे फलक को खुरदरा रखते हैं। वे तैल-रंग को तूलिका की जगह छुरी के फल से लगाते हैं।

कुछ चित्र यथार्थवादी होते हैं। कुछ चित्रों को अमूर्त चित्र (एब्स्ट्रैक्ट पेंटिंग) कहते हैं। दूसरे कुछ चित्र फोटो की तरह होते हैं। कुछ चित्रों में चित्रकार अपने चित्र के द्वारा कोई संदेश देना चाहता है।

पश्चिमी देशों में अनेक महान चित्रकार हुए हैं। भारत में भी कुछ चित्रकार बहुत प्रसिद्ध हुए हैं। रविवर्मा, अवनीन्द्रनाथ ठाकुर, नन्दलाल बोस, यामिनी राय आदि भारत के प्रसिद्ध चित्रकार हैं। आज अनेक चित्रकार विभिन्न दिशाओं में प्रयोग में लगे हुए हैं। अमृता शेरगिल, गगनेन्द्रनाथ ठाकुर, बेन्द्रे, मकबूल फिदा हुसेन आदि बाद

चित्रकला और चित्रकार

29



की पीढ़ी के कुछ समर्थ चित्रकार हैं। (देखें : ओदूबों ; कांस्टेबल ; जिओत्तो ; टर्नर ; माइकेलेंजेलो ; रेन्वा ; रेम्ब्रां ; विंची)

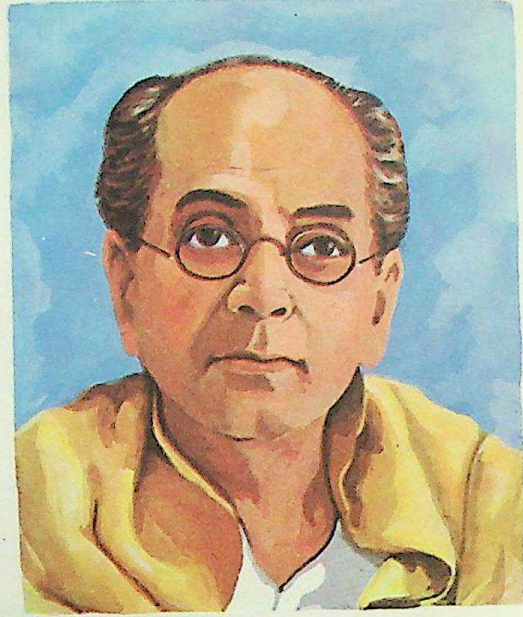
चित्रकला, भारतीय (INDIAN PAINTING) : चित्रकला का आरंभ कुछ लोग टोने-टोटे के से मानते हैं। लोगों का अनुमान है कि आज से बीस-पच्चीस हजार वर्ष पूर्व जब मनुष्य गुफाओं में निवास करता था, तब भी वह अपनी गुफाओं की दीवारों पर शिकार के जानवरों के चित्र बनाया करता था। इस तरह की गुफाएं भारत में मध्य भारत और मिर्जापुर में पाई गई हैं। इसके बाद की चित्रकारी के नमूने सिन्धु घाटी की सभ्यता के हैं। ये चित्र मोहनजोदड़ो, हड़प्पा और नाल में मिले हैं, और वर्तनों, मटकों आदि पर बने हुए हैं।

भारतीय चित्रकला का स्वर्ण-युग गुप्तकाल है। इस काल में ही अजन्ता के सर्वश्रेष्ठ चित्रों की रचना हुई। अजन्ता के चित्रों को तीन युगों में बांटा गया है : गुप्त युग, वाकाटक युग, और चालुक्य युग। गुप्त युग तीसरी-चौथी से छठी सदी तक माना जाता है। अजन्ता के भित्तिचित्रों की गणना विश्व के श्रेष्ठतम चित्रों में की जाती है। इनमें देवता, दैत्य, गंधर्व, विद्याधर, किन्नर, यक्ष, अप्सराएं, राजा, रंक, गृहस्थ, पशु-पक्षी, वृक्ष, लता आदि के सजीव चित्र हैं। बुद्ध के संबंध में जातक कथाओं पर आधारित अनेक चित्र बने हुए हैं। बुद्ध का महाभिनिष्क्रमण, यशोधरा का भगवान बुद्ध को राहुल का दान, इत्यादि चित्र बहुत प्रसिद्ध हैं।

अजन्ता के बाद भारतीय चित्रकला के पूर्व-मध्ययुग में वाघ, बादामी, सित्तनवासल, एलोरा, आदि के चित्र बने। इन चित्रों में उतनी सजीवता और स्वाभाविकता नहीं है जो अजन्ता में देखने में आती है। उत्तर-मध्ययुग सन् 900 से 1200 तक माना जाता है। इस युग में दो शैलियों का विकास हुआ जिनमें एक को पूर्वी शैली और दूसरी को पश्चिमी या जैन शैली कहते हैं। पश्चिमी शैली की एक शाखा कश्मीर की ओर चली गई जो कश्मीरी शैली के नाम से विख्यात है।

पन्द्रहवीं शताब्दी तक आते-आते चित्रकला में एक नया परिवर्तन आया। इस युग के चित्रों में जिस शैली का विकास हुआ उसे राजस्थानी शैली या कलम कहा जाता है। इसकी कुछ विशेषताएं उत्तर-मध्ययुग की पश्चिमी शैली जैसी ही हैं। इस शैली का आरंभ संभवतः गुजरात में हुआ था। राजस्थानी कलम के केंद्र उदयपुर, नाथद्वारा, बूंदी, जोधपुर, जयपुर, आदि थे। धीरे-धीरे इसका विस्तार दक्षिण में तंजोर और रामेश्वरम् तक हो गया।

भारत में मुगल-शासन के प्रारंभ से एक नई चित्रकला का आगमन हुआ। यह ईरानी चित्रकला थी जिसका प्रभाव भारतीय चित्रकला पर पड़ा और एक नई शैली का विकास हुआ जिसे मुगल शैली या कलम कहते हैं। ये चित्र



अवनीन्द्रनाथ ठाकुर ने आधुनिक भारतीय चित्रकला के विकास में महत्वपूर्ण योग दिया।

अधिकतर पोथियों पर बने हुए हैं। जैसे ईरानी कला और राजपूत कला का मिश्रण मुगल कलम में हुआ था, उसी तरह जहांगीर के युग में मुगल कलम और यूरोपीय चित्रकला का मिश्रण होकर एक नया विकास हुआ। अकबर के युग के प्रसिद्ध चित्रकार मीर सैयद अली, ख्वाजा अब्दुस्समद, दसवन्त और बसावन थे। जहांगीर के युग में विशनदास, मनोहर, गोवर्धन, आदि चित्रकारों के नाम उल्लेखनीय हैं। शाहजहां के युग में विदेशी प्रभाव और गहरा हुआ। शाहजहां के दरबार में बहुत बड़ी संख्या में कुशल चित्रकार रहते थे। इनमें चतुर्भुज, अनूप चतुर, बालचन्द, होनहार, विचित्र आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

अकबर के युग में ही भारतीय चित्रकला में एक नई लहर दक्षिण भारत में भी उठी। बहमनी राज्य और हैदराबाद इसके प्रधान केन्द्र बने रहे।

मुगल साम्राज्य के उखड़ जाने के बाद सैकड़ों वर्ष तक चित्रकारों को कोई संरक्षक नहीं मिला। फिर उनको सबसे अधिक आश्रय पहाड़ी रियासतों में मिला और वहीं इसका विकास हुआ। इसीलिए इसे पहाड़ी शैली या कलम भी कहा जाता है। पहाड़ी कलम के केन्द्र चंबा, मंडी, कांगड़ा, नाहन, सिरमौर, टिहरी, गढ़वाल आदि थे। इनमें से अधिकतर केन्द्र कांगड़ा दून में थे, इसलिए इसका नाम कांगड़ा शैली भी पड़ गया। पहाड़ी शैली का युग अठारहवीं शताब्दी के मध्य से उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक माना जाता है। इस युग में गढ़वाल का भोलाराम एक प्रसिद्ध चित्रकार हो चुका है।

प्राचीन काल में भारतीय चित्रकला ने मध्य एशिया के कुछ भाग, चीन, कोरिया, जापान, तिब्बत, बर्मा, स्याम, कम्बुज, जावा, सुमात्रा, बाली और सिंहल आदि अनेक

देशों को प्रभावित किया था।

बाद में पाश्चात्य चित्रकला का प्रभाव भारतीय चित्रकला पर दो रूपों में दृष्टिगोचर हुआ। एक प्रभाव को तो पटना शैली कहते हैं, जिसमें मुगल शैली को पाश्चात्य शैली से बहुत कुशलतापूर्वक मिला दिया गया था। बनारस के दल्लूलाल, लालचन्द और गोपालचन्द पटना कलम के प्रसिद्ध चित्रकार थे। आरा के ईश्वरीप्रसाद भी इसी घराने में आते हैं। इस शैली की शाखाएं दिल्ली, लखनऊ, मुशिदाबाद, पूना आदि में फैलीं। दूसरा प्रभाव दक्षिण में बम्बई और त्रिवेन्द्रम में देखने में आया। इसमें भारतीय और पाश्चात्य कला का कुछ बेढंगा-सा मेल हुआ। रवि-वर्मा इसके कुशल चित्रकारों में माने जाते हैं।

उन्नीसवीं शताब्दी के पुनर्जागरण और भारत में खुलने-वाले पाश्चात्य आर्ट स्कूलों के प्रभाव से अजन्ता की शैली की ओर भारतीय चित्रकारों का ध्यान गया। अवनीन्द्रनाथ ठाकुर के चित्रों में अजन्ता, मुगल, पहाड़ी, चीनी और जापानी शैलियों पर उनका अधिकार प्रकट होता है। उन्होंने कुछ असाधारण ओजस्वी चित्रकार पैदा किए जिनमें नन्दलाल बोस, असित हालदार, मुकुल दे, देवी-प्रसाद रायचौधरी, आदि का नाम उल्लेखनीय है।

इस युग के प्रारंभिक क्रान्तिकारी चित्रकारों में यामिनी राय और अमृता शेरगिल प्रमुख हैं। पश्चिमी देशों के कुछ कलाकारों का प्रभाव भारतीय चित्रकला पर विशेष रूप से पड़ा। गगनेन्द्रनाथ ठाकुर ने सेजान का प्रभाव ग्रहण किया। आरा, बेन्द्रे, मकबूल फिदाहुसेन आदि कुछ अन्य प्रमुख चित्रकार हैं, जिन्होंने आधुनिक भारतीय चित्रकला को काफी आगे बढ़ाया है।

चैकोवस्की, पेत्र इलिच (PETR ILICH TSCHAIKOWSKY 1840-1893) : चैकोवस्की की गणना रूस के सर्वाधिक प्रसिद्ध संगीतज्ञों में की जाती है। 'द नटक्रैकर सूट' उनकी विश्वविख्यात रचना है। इसे उन्होंने एक बैले के रूप में लिखा था। इसका संगीत इतना लोकप्रिय हुआ कि पश्चिमी संसार का लगभग प्रत्येक संगीतप्रेमी इस बैले के संगीत से परिचित है। इस रचना के अलावा उनके दो

और बैले अत्यंत लोकप्रिय हैं : 'स्वान लेक' और 'स्लीपिंग ब्यूटी'। उनकी बनाई एक सिम्फनी भी बहुत प्रसिद्ध है। इसे सिम्फनी नं० 6 या 'द पैथेटिक' कहते हैं। चैकोवस्की के कुछ पियानो कन्सर्टो भी बहुत प्रसिद्ध हैं।

चैकोवस्की का जन्म यूराल पर्वतमाला के वोतकिन्स्क नामक छोटे-से कस्बे में हुआ। लड़कपन से ही चैकोवस्की की रुचि संगीत में थी। लेकिन उन्होंने इसे जीविका का साधन न बनाकर वकालत पढ़ने का निश्चय किया। पर संगीत ने उन्हें शीघ्र ही अपनी ओर आकृष्ट कर लिया और उन्होंने वकालत पढ़ना छोड़कर सेंट पीटर्सबर्ग में संगीत सीखना प्रारंभ किया। पांच साल बाद वहां से ग्रेजुएट होने पर उन्हें मास्को संगीत विद्यालय में प्रोफेसर बना दिया गया। यहां पढ़ाने के साथ-साथ उन्होंने संगीत-रचना भी की।

वे कुल 53 वर्ष की उम्र में ही चल बसे। लेकिन उनके मरने के पहले ही उनका संगीत दूर-दूर के देशों में धूम मचाने लगा था।

जलपरी (MERMAIDS) : जलपरियों की बहुत-सी पुरानी कहानियां हैं जो दुनिया के विभिन्न भागों में प्रचलित हैं। जलपरियों के बहुत-से चित्र भी मिलते हैं। किन्तु सचमुच की जलपरियां कभी देखने-सुनने में नहीं आईं।

ऐसा माना जाता है कि जलपरियां आधी स्त्री होती हैं और आधी मछली। लोगों की कल्पना थी कि वे समुद्र के नीचे महलों में रहती हैं। उनके जो चित्र बनाए गए

पहले यह माना जाता था कि जलपरियां नाविकों को लुभाकर खतरनाक चट्टानों की ओर ले जाती हैं।



वे बहुत सुन्दर थे। कहानियों में वे प्रायः समुद्र से बाहर निकलकर तट पर सुस्ताने आती हैं और अपने लंबे सुनहरे बाल संवारती हैं।

जलपरियों की कल्पना का आधार समुद्र का कोई ऐसा स्तनपायी जीव रहा होगा जिसे लोगों ने बहुत पहले कभी देखा होगा। कुछ लोगों का विचार है कि जिस स्तनपायी ने लोगों को जलपरी का विचार दिया वह कोई समुद्री गाय थी। किन्तु ऐसी कोई समुद्री गाय भी तो कभी दिखाई नहीं दी जिसके लंबे सुनहरे बाल हों।

जातक कथाएं (JATAKA TALES): जिस प्रकार हिन्दुओं के पुराणों में भांति-भांति की, धार्मिक और लौकिक कथाएं हैं, उसी प्रकार बौद्धों के जातक भी विविध प्रकार की कथाओं से भरपूर हैं। वैसे 'जातक' का अर्थ है भगवान बुद्ध के पूर्वजन्म की कथाओं का संकलन। जातकों की संख्या सैकड़ों में है। कथाएं हजारों की संख्या में हैं।

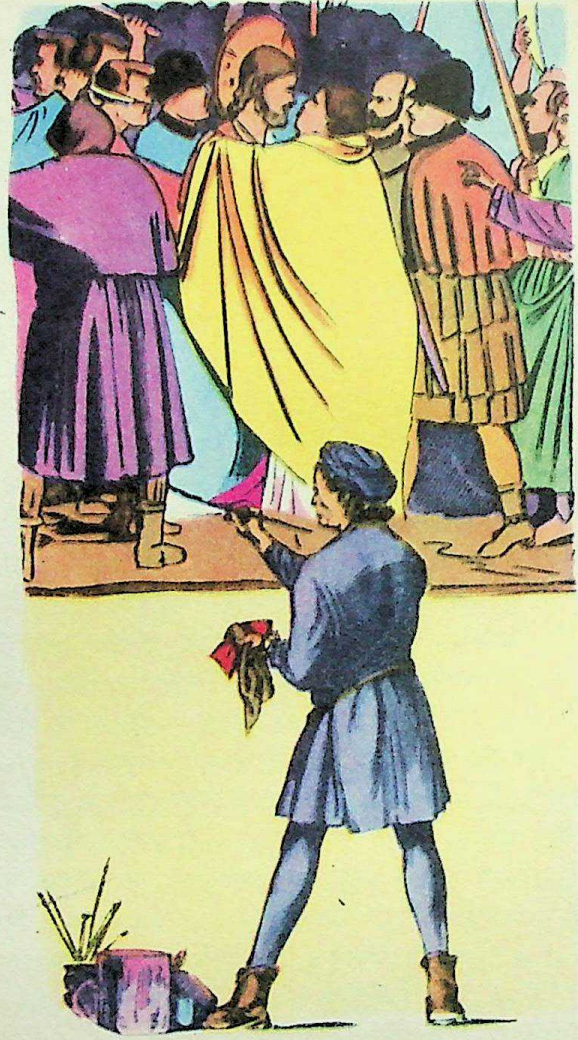
जातकों की कथाएं धार्मिक ही नहीं हैं, अन्य प्रकार की भी हैं। इनमें व्यावहारिक चातुरी की कथाएं हैं, पशु-पक्षियों से संबंधित काल्पनिक कथाएं हैं, हास्य-विनोद की कथाएं हैं, रोमांचक कथाएं हैं, नीतिपरक कथाएं हैं, और कहावतें आदि भी हैं। धार्मिक कथाएं भी केवल बुद्ध और बौद्ध धर्म से संबंधित नहीं हैं, अपितु रामायण, महा-भारत आदि हिन्दू धर्म की कथाएं भी हैं।

जिओत्तो (GIOTTO 1266-1337): इटली में फ्लोरेन्स नगर के पास एक गांव के बाहर एक छोटा-सा लड़का भेड़ें चराता था। जब भेड़ें चरने में लग जातीं तो वह रेत में अपनी उंगलियों से रेखाचित्र बनाया करता था। कभी-कभी पत्थर के तेज टुकड़े से वह चट्टानों पर भी चित्र खोदता था।

एक दिन ऐसे ही जब जिओत्तो भेड़ का चित्र बना रहा था, एक घुड़सवार उधर से आ निकला। चित्र पर नज़र पड़ते ही घुड़सवार को लगा कि यह बालक बड़ा प्रतिभाशाली है। वह जिओत्तो से बोला, "तुम मेरे साथ फ्लोरेन्स चलो और चित्रशाला के काम में मेरी मदद करो।" यह घुड़सवार अपने समय का सबसे प्रसिद्ध कलाकार, चिमाबू था।

उस समय जिओत्तो मुश्किल से दस साल का था। वह चित्रशाला में ब्रशों को साफ करता, रंग पीसता और चित्र बनाता। उन दिनों गीले प्लास्टर पर जल-रंगों से चित्र बनाए जाते थे। तैलचित्र तब नहीं बनते थे। चिमाबू को अपने चित्रों में जब भी भेड़ें बनानी होतीं, वह उनकी हमेशा जिओत्तो से ही बनवाता। जिओत्तो भेड़ों के सबसे अच्छे चित्र बनाता था, क्योंकि उसने बचपन में भेड़ों के हर रूप को बड़े ध्यान से देखा था।

बड़े होने पर जिओत्तो ने अपनी चित्रशाला खोल ली।



जिओत्तो 'ईसा का जीवन' चित्रित करते हुए।

कुछ समय बाद उसे रोम बुलाया गया। वहां उसने ईसा मसीह का 'मोज़ेक' चित्र बनाया, जिसमें उन्हें समुद्र पर चलते दिखलाया गया था। 'मोज़ेक' चित्र रंगीन कांच या पत्थरों के छोटे टुकड़ों को जड़कर बनाया जाता है। चित्रकला के अलावा जिओत्तो ने वास्तुशिल्प भी सीखा। उसने फ्लोरेन्स के गिरजाघर का घंटियों वाला स्तंभ तैयार किया।

पेदुआ नाम के कस्बे के गिरजाघर में जिओत्तो के बनाए 38 महान भित्तिचित्र हैं। इन्हें जिओत्तो ने छः वर्ष में बनाया था। जिओत्तो ने इनमें ईसा के जीवन की भांक्तियां दिखलाई हैं। उसके द्वारा चित्रित मनुष्यों को देखकर ऐसा लगता है जैसे वे अभी बोल पड़ेंगे। हर्ष, दुःख, पीड़ा, अधीरता सभी भावों को इस कलाकार ने बड़ी अच्छी तरह प्रकट किया है। पेदुआ के चित्रों में हलके गुलाबी, नीले तथा हरे रंगों का प्रयोग किया गया है। कुछ लोग जिओत्तो को अब तक का सबसे बड़ा चित्रकार मानते हैं।

जिब्रान, खलील (KHALIL GIBRAN 1883-1931): ये एक प्रसिद्ध लेखक थे जिन्होंने संसार को प्रेम का संदेश दिया। इनकी रचनाएं संसार की प्रायः सभी भाषाओं में अनूदित होकर बड़ी लोकप्रिय हुईं।

जिब्रान अरब थे और लेबनान में उत्पन्न हुए थे। बचपन में ही वे अपने परिवार के साथ अमरीका चले गए। वहीं उन्होंने शिक्षा प्राप्त की। जब वे 20 वर्ष के थे, तब लगभग एकसाथ उनकी बहिन, भाई और मां का देहांत हो गया। इस घटना का उनपर बड़ा प्रभाव पड़ा और वे रहस्यवादी हो गए।

उन्होंने चित्रकला और मूर्तिकला की भी शिक्षा प्राप्त की। उनकी कहानियां इतनी प्रेरणादायी होती थीं कि वे शीघ्र ही बड़ी लोकप्रिय होने लगीं। वे न्यूयार्क में रहते थे और लिखने-पढ़ने में अपना जीवन व्यतीत करते थे। 48 वर्ष की अवस्था में उनका देहांत हुआ।

उनकी कुछ प्रमुख रचनाएं ये हैं: 'द प्रॉफेट', 'फोररनर', 'सैंड एण्ड फ़ोम', 'जीसस द सन ऑव मैन' आदि।

जीलोफोन (XYLOPHONE): यह एक तरह का बाजा है। इसमें एक ओर से दूसरी ओर तक लकड़ी की चपटियां जड़ी होती हैं, जो क्रमशः छोटी होती जाती हैं। बाजा बजानेवाला इनपर लकड़ी की छोटी डंडियों से चोट करता जाता है। चोट पड़ने पर हर चपटी अपना अलग स्वर देती है। छोटी चपटियों से बड़ी चपटियों की अपेक्षा अधिक तेज स्वर निकलते हैं।

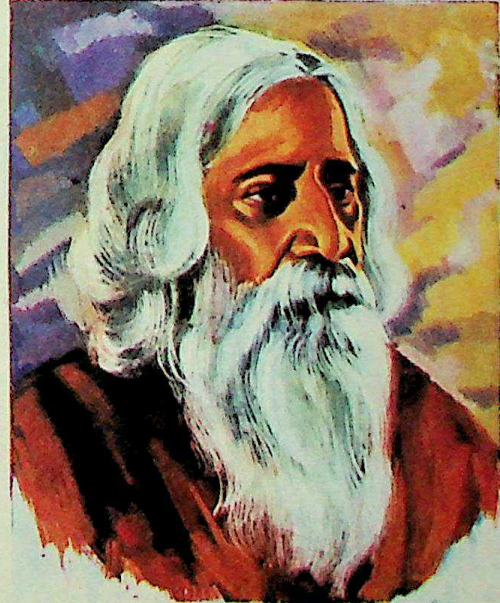


जीलोफोन की हर चपटी अपना अलग स्वर देती है।

जीलोफोन शब्द दो ग्रीक शब्दों से बना है जिनका अर्थ होता है, 'लकड़ी' और 'आवाज'। आधुनिक जीलोफोन को 'मैरिबा' भी कहते हैं।

टर्नर, जोसेफ एम० डब्ल्यू० (JOSEPH M. W. TURNER 1775-1851): टर्नर प्राकृतिक दृश्य (लैंडस्केप) और समुद्र-दृश्य (सीस्केप) अंकित करनेवाले इंग्लैंड के महानतम चित्रकार थे। उन्हें तैल और जल-रंगों पर समान

अधिकार प्राप्त था। उनके चित्रों ने इंग्लैंड की चित्रकला में एक नये युग का सूत्रपात किया। केवल चौबीस वर्ष की अवस्था में उन्हें रॉयल एकेडेमी का सदस्य बना लिया गया। लंदन-स्थित टैट गैलरी और नेशनल गैलरी में उनके अनेक चित्र देखे जा सकते हैं। उनकी सबसे प्रसिद्ध कृतियां 'द फाईटिंग टेमेरेयर', 'क्रासिंग द ब्रुक' और 'डीडो बिल्डिंग कार्थेज' आदि हैं।



गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर

टैगोर, रवीन्द्रनाथ (RABINDRANATH TAGORE 1861-1941): रवीन्द्रनाथ टैगोर विश्व के एक महान कवि और विचारक माने जाते हैं। गांधीजी तक उन्हें गुरुदेव कहा करते थे।

रवीन्द्रनाथ का जन्म बंगाल के अति प्रतिष्ठित 'ठाकुर' (टैगोर) परिवार में हुआ था। उनकी शिक्षा अधिकतर घर पर ही हुई। घर का वातावरण ऐसा था कि वहां दिन-रात साहित्य, कला, संस्कृति, धर्म और देश की चर्चा होती रहती थी।

रवीन्द्रनाथ वास्तव में जन्मजात कलाकार थे। वे छोटी आयु में ही कविता करने लगे। ग्यारह वर्ष की आयु में उन्होंने शेक्सपियर के नाटक मेकबेथ का बंगला में अनुवाद कर डाला। कुछ दिन बाद उनके भाइयों ने 'भारती' पत्रिका निकाली। रवीन्द्रनाथ उसके लिए कविताएं, लेख आदि लिखने लगे।

सत्रह वर्ष की आयु में वे विदेश गए। वहां से लौटने पर वे दिन-रात साहित्य और कविता में मग्न रहने लगे। उन्होंने कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, आदि सभी कुछ लिखा और साहित्य की खूब श्रीवृद्धि की।

1901 में उन्होंने शांतिनिकेतन में एक विद्यालय स्थापित किया। यहां छात्रों और अध्यापकों का व्यवहार परस्पर

मित्रों का सा था। खुली जगह में पेड़ों के नीचे कक्षाएं लगती थीं। जात-पात का कोई भेद नहीं था। विद्यार्थियों में विश्वप्रेम की भावनाएं भरी जाती थीं। धीरे-धीरे यह विद्यालय विश्वभारती विश्वविद्यालय में परिणत हो गया।

1912 में रवीन्द्रनाथ जब दूसरी बार विदेश गए तो उन्होंने 'गीतांजलि' की अपनी कुछ कविताओं के अंग्रेजी अनुवाद छपवाए। इनपर उन्हें 1913 में नोबेल पुरस्कार मिला। एशिया-भर में सबसे पहले उन्हींको यह पुरस्कार मिला था। 'गीतांजलि' और कई अन्य पुस्तकों का विश्व की अनेक भाषाओं में अनुवाद हुआ और वे देखते-देखते विश्वविख्यात हो गए। उन्हें अमरीका, फ्रांस, जर्मनी, चेकोस्लोवाकिया, चीन, जापान आदि अनेक देशों में बुलाया गया। हर कहीं उनका अभूतपूर्व स्वागत हुआ।

रवीन्द्रनाथ की प्रतिभा बहुमुखी थी। वे अपने नाटकों में स्वयं भी अभिनय करते थे। अपने गीतों को वे एक विशेष शैली में गाते थे। इससे 'रवीन्द्र संगीत' संगीत की एक अलग शैली ही बन गई। अर्धे उम्र में उनका भुकाव चित्रकला की ओर हो गया। शीघ्र ही उन्होंने उसमें भी विलक्षण प्रतिभा दिखलाई। कला-पारखियों ने उनके चित्रों को खूब सराहा।

रवीन्द्रनाथ केवल कवि और कलाकार ही नहीं, एक महान देशभक्त भी थे। अंग्रेजों ने जब जलियांवाला बाग में निहत्थे भारतीयों पर गोली चलाई, तो उन्होंने अंग्रेजों द्वारा दी हुई 'सर' की अपनी उपाधि लौटा दी। हमारा राष्ट्र-गान, 'जन-गण-मन अधिनायक...' उन्हींकी रचना है।

ट्रॉय का युद्ध (TROJAN WAR) : ट्रॉय के युद्ध की कथा होमर के प्रसिद्ध महाकाव्य 'इलियड' में आई है। कहानी इस प्रकार है :

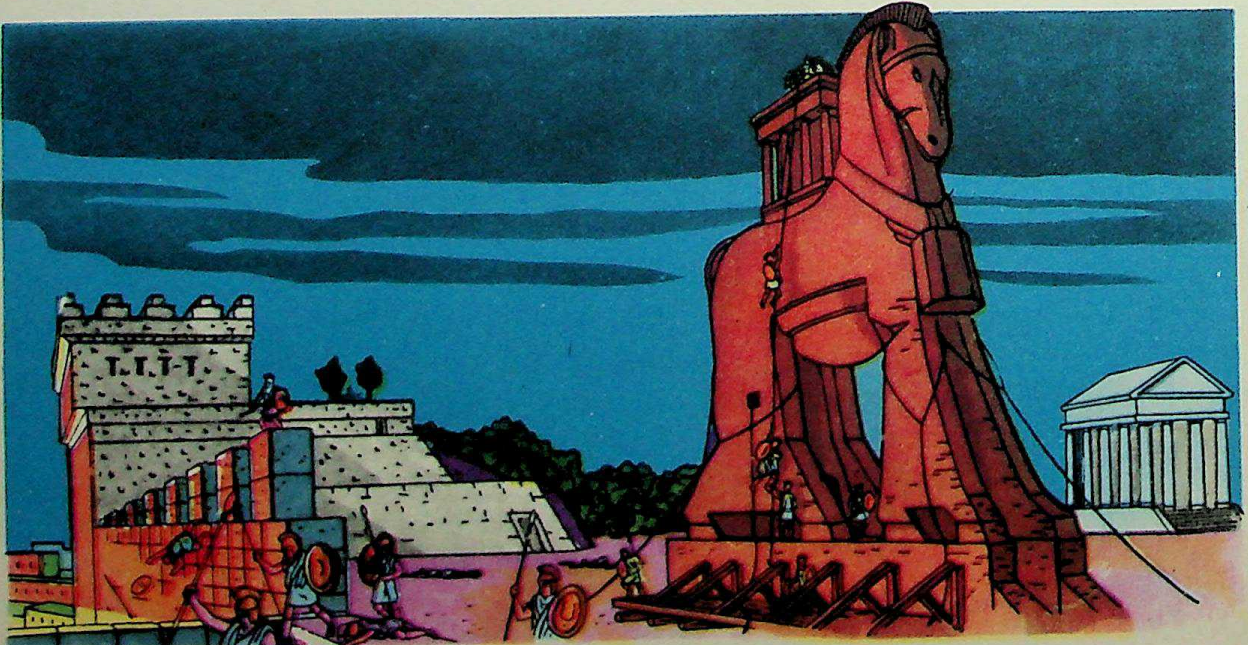
एक बार तीन देवियों में एक सौंदर्य प्रतियोगिता हुई, जिसमें ट्रॉय के सम्राट का लड़का पैरिस निणयिक बना। उसने आफ्रोदीती नामक देवी को विजेता घोषित किया। इसके पुरस्कार-स्वरूप इस देवी ने पैरिस को संसार की सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी देने का वादा किया। लेकिन विश्व की सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी हेलन यूनान के एक भाग के राजा मेनेलस की रानी थी। फिर भी आफ्रोदीती की सहायता से पैरिस उसे ट्रॉय में भगा लाया।

मेनेलस ने पैरिस को उसकी करनी का फल चखाने के लिए दूसरे यूनानी राजाओं से सहायता मांगी। परिणाम-स्वरूप दो वर्ष बाद जहाजों में हजारों योद्धा ट्रॉय-विजय के लिए चल दिए।

नौ साल से भी अधिक समय तक युद्ध चला, लेकिन हार-जीत का फैसला न हो सका। ट्रॉय के किले की ऊंची और मजबूत दीवारों के आगे यूनानियों की एक न चली।

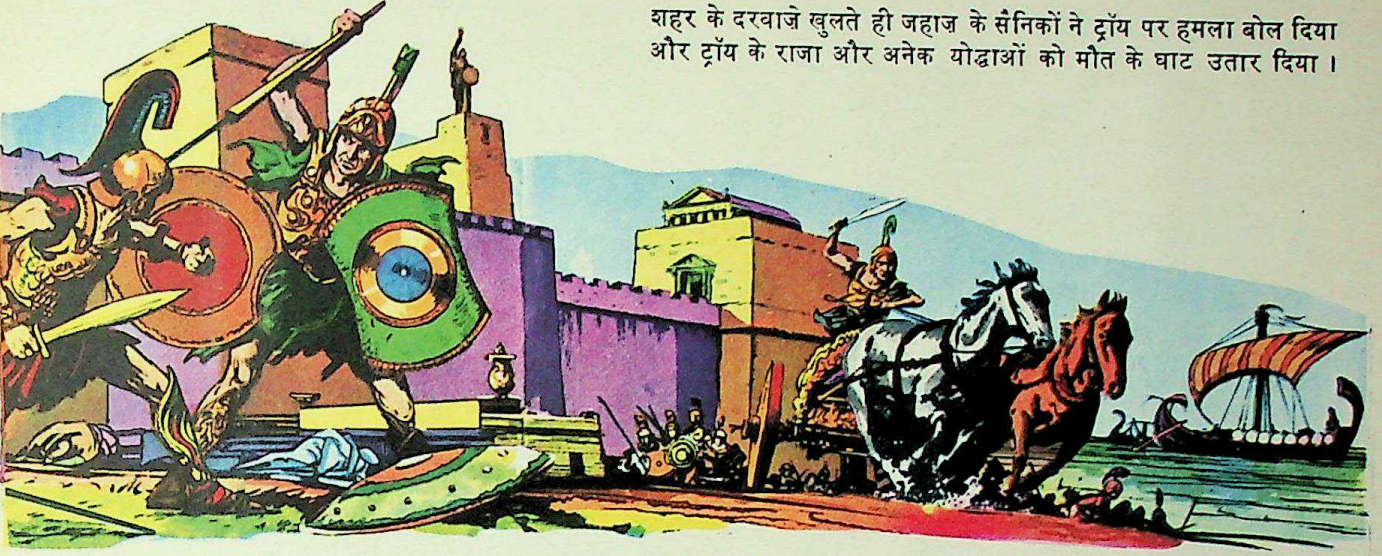
अंत में ओडिसस को एक चाल सूझी। उसके सुभाव के अनुसार यूनानियों ने लकड़ी का एक बहुत बड़ा खोखला घोड़ा बनवाया। घोड़ा इतना बड़ा था कि उसके अंदर सौ योद्धा खड़े हो सकते थे। यूनानी सैनिकों ने घोड़े को किले की दीवार के पास पहुंचा दिया। तब उन्होंने ऐसा अभिनय किया जैसे वे जहाजों में बैठकर वापस यूनान जा रहे हों। वास्तव में वे अपने जहाजों को वहां से हटाकर इतना पीछे ले गए कि ट्रॉय वालों को वे दिखाई न दे सके।

ट्रॉयवासियों ने सोचा कि यह शानदार घोड़ा उनके लिए उपहार-स्वरूप छोड़ दिया गया है। वे उसे किले में ले आए। रात के समय घोड़े के अंदर छिपे यूनानी योद्धा बाहर निकल आए और उन्होंने शहर के दरवाजे खोल दिए। अब तक यूनानी सैनिकों के जहाज फिर किनारे आ लगे थे। यूनानी सैनिकों ने दरवाजे खुले पाकर



रात के अंधेरे में यूनानी योद्धा घोड़े में से निकल आए और उन्होंने शहर के दरवाजे खोल दिए।

शहर के दरवाजे खुलते ही जहाज के सैनिकों ने ट्रॉय पर हमला बोल दिया और ट्रॉय के राजा और अनेक योद्धाओं को मौत के घाट उतार दिया।



ट्रॉय पर हमला बोल दिया। उन्होंने ट्रॉय के राजा और उसके अनेक योद्धाओं को मौत के घाट उतार दिया। शहर में आग लगा दी और उसे बर्बाद कर दिया।

बहुत दिनों तक लोग ट्रॉय के युद्ध की कथा को कवि-कल्पना मानते रहे। किन्तु सन् 1870 में जर्मन वैज्ञानिक हेनरिख श्लीमैन ने एशिया माइनर के तट के निकट एक पहाड़ी पर खुदाई कराई तो उसमें ट्रॉय नगर के भग्नावशेष प्राप्त हुए। ये अवशेष 4,000 वर्ष से अधिक पुराने थे। अब लोग मानने लगे हैं कि ट्रॉय के युद्ध की कथा का कम से कम एक अंश अवश्य सच है। (देखें : होमर)

ट्रैजेडी (TRAGEDY) : उन नाटकों को ट्रैजेडी या दुःखांत नाटक कहते हैं जिनका अंत, नायक के अंत अथवा दुःख में होता है। इनमें प्रतिकूल परिस्थितियों के विरुद्ध नायक का संघर्ष दिखाया जाता है। ये नायक उदात्त गुणों से विभूषित और अच्छे कुलों में उत्पन्न होते हैं। संघर्ष के समय भी ये अपने चरित्र और गरिमा को बनाए रखते हैं। ट्रैजेडी में हास्य और मनोरंजन के लिए स्थान नहीं होता। उन्हें देखने या पढ़ने से मन में करुणा तथा आदर्शवादी भाव उत्पन्न होते हैं।

ट्रैजेडी का आरंभ प्राचीन यूनान में हुआ। भारत की परंपरा में सुखांत नाटक को ही उत्तम और आदर्श माना गया, इसलिए यहां दुःखांत नाटकों का विकास नहीं हुआ। आरंभिक काल की ट्रैजेडी में नृत्य की प्रमुखता होती थी। फिर इसमें अभिनय और संवाद का प्रवेश हुआ। ईसा पूर्व पांचवीं शताब्दी में कुछ ऐसे ट्रैजेडीकार हुए जिनकी कृतियां आज भी संसार में खेली जाती हैं। इनमें सोफोक्लीज, यूरिपिदीज और एजकिलस का स्थान प्रमुख है।

ट्रैजेडी जब लोकप्रिय हो गई तो दार्शनिकों ने उसके मूल आधारों का विवेचन भी किया। अरस्तू ने कहा कि

ट्रैजेडी का मनुष्य पर प्रभाव उसकी रेचन प्रवृत्ति के कारण होता है। तात्पर्य यह कि जब वह ट्रैजेडी देखता है तो उसके मन में भय और करुणा का आवेग नियंत्रित होता है और दुःखद भावनाओं का परिष्कार होता है।

मध्ययुग में फिर दुःखांत नाटकों ने जोर पकड़ा, यद्यपि अब इनका रूप पहले से कुछ बदल गया था। शेक्सपियर, मालो, काल्डरान, कार्नील, रासीन आदि के नाटक बड़े प्रसिद्ध हुए। फिर घरेलू जीवन की समस्याओं को लेकर भी अच्छे दुःखांत नाटक लिखे गए। इब्सेन के नाटक इस दृष्टि से बड़े लोकप्रिय हुए हैं।

ट्रैजेडी के दो मुख्य प्रकार हैं—शास्त्रीय और स्वच्छंद। शास्त्रीय ट्रैजेडी में नियमों का कठोरता से पालन किया जाता है, भले ही प्रभाव की एकता कम हो जाए। इसके विपरीत स्वच्छंद ट्रैजेडी में प्रभाव की एकता को प्रमुखता दी जाती है, शास्त्रीय नियमों का उल्लंघन किया जाता है। शेक्सपियर की ट्रैजेडी इसी कोटि की हैं।

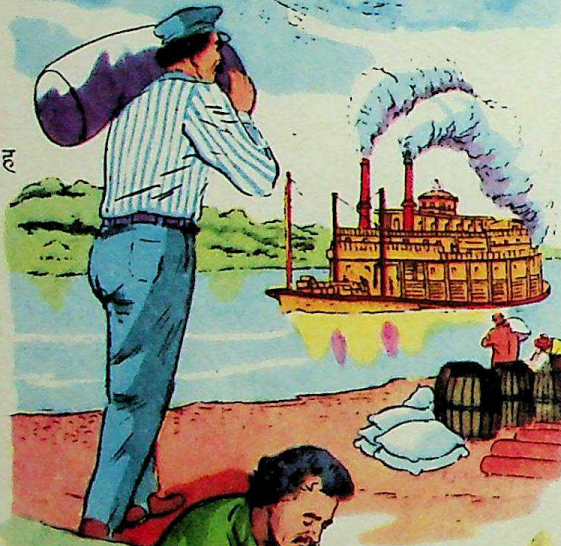
इसके अतिरिक्त ट्रैजेडी के कुछ अन्य रूप भी हैं, जैसे सामाजिक ट्रैजेडी, मनोवैज्ञानिक ट्रैजेडी आदि। आधुनिक युग में ये रूप बड़े लोकप्रिय हुए हैं।

ट्वेन, मार्क (MARK TWAIN 1835-1910) : प्रसिद्ध अमरीकी लेखक मार्क ट्वेन का असली नाम सैम्युएल लैंगहॉर्न क्लीमेंस था। उनका जन्म अमरीका के मिसौरी राज्य के एक छोटे-से कस्बे में हुआ था। उनका लड़कपन हेनीबाल शहर में बीता, जो मिसिसिपी नदी के किनारे है। बड़े होकर वे नदी में चलनेवाले छोटे जहाजों पर मल्लाह का काम करने लगे। बाद में वे वर्जीनिया सिटी, निम्बादा, चले गए और वहां एक पत्र के संवाददाता बन गए। यहीं उन्होंने अपना नाम मार्क ट्वेन रख लिया और फिर इसी नाम से लिखते रहे।

मार्क ट्वेन का जीवन

मिसिसिपी में
मछली का शिकार

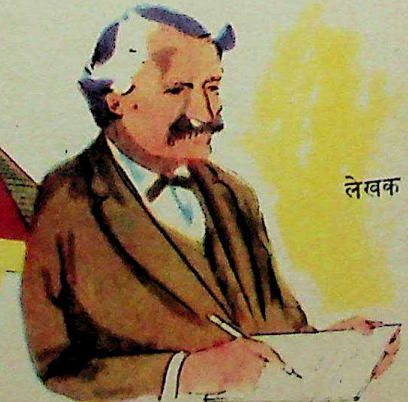
मल्लाह

निवादा में
सोने की खुदाई

सम्पादक



यात्री



लेखक

सन् 1876 में उन्होंने 'द ऐडवेंचर्स ऑव टॉम सॉयर' नामक पुस्तक प्रकाशित कराई। उनकी एक दूसरी प्रसिद्ध पुस्तक 'द ऐडवेंचर्स ऑव हकलबरी फिन' है। इन दोनों कहानियों पर फिल्में भी बन चुकी हैं। मार्क ट्वेन की अन्य प्रसिद्ध पुस्तकें 'जोन ऑव आर्क', 'द प्रिंस ऐंड द पॉपर', 'लाइफ ऑन द मिसिसिपी', 'ए कनेक्टिकट यांकी इन किंग आर्थर्स कोर्ट' और 'इन्नोसेंट्स ऐबॉड' हैं।

डायोजेनीज (DIOGENES) : लगभग दो हजार साल से भी पहले प्राचीन यूनान में डायोजेनीज नामक एक दार्शनिक रहते थे। उनका विचार था कि लोगों को बहुत सादा जीवन बिताना चाहिए। यह दिखाने के लिए कि मनुष्य को आरामदेह चीजों की जरूरत नहीं है, उन्होंने कुछ दिनों तक एक बहुत बड़े घड़े में रहकर अपने दिन काटे थे। डायोजेनीज के बारे में कई कहानियां प्रसिद्ध हैं। उनमें से तीन इस प्रकार हैं :

एक दिन डायोजेनीज हाथ में एक जलता हुआ दीया लेकर ऐथेंस की सड़कों पर निकले। लोगों ने पूछा कि तुम दिन में दीया लेकर क्यों घूम रहे हो, तो उन्होंने उत्तर दिया, "मैं किसी ईमानदार आदमी की खोज में हूँ।"

डायोजेनीज ने एक कम्बल, एक थैला और एक प्याले को छोड़कर अपनी सभी चीजें त्याग दी थीं। एक दिन डायोजेनीज ने एक बच्चे को हाथ की अंजुलि से पानी पीते देखा। उन्हें लगा कि प्याले की भी जरूरत नहीं है और उन्होंने अपना प्याला भी फेंक दिया।

एक बार डायोजेनीज की भेंट सिकन्दर से हुई। सिकन्दर ने कहा कि मैं तुम्हारी हर मांग पूरी करने के लिए तैयार हूँ। डायोजेनीज ने उत्तर दिया, "मेरी सिर्फ इतनी-सी मांग है कि तुम मेरे और सूरज के बीच में न खड़े होओ।" सिकन्दर को यह उत्तर बहुत अच्छा लगा। उसने कहा, "अगर मैं सिकन्दर न होता तो मैं डायोजेनीज बनना पसन्द करता।"

डिकेन्स, चार्ल्स (CHARLES DICKENS 1812-1870) : अंग्रेजी के महान उपन्यासकार चार्ल्स डिकेन्स ने कई प्रसिद्ध उपन्यास लिखे हैं। उन्होंने अपनी रचनाओं के लिए

चरित्रों आदि का चुनाव करते समय अपने निजी जीवन के, विशेष रूप से अपने बचपन के, अनुभवों से काफी लाभ उठाया। उनका जन्म पोर्ट्समाउथ में हुआ था। उनके पिता नौसेना विभाग में क्लर्क थे। उन दिनों डिकेन्स परिवार की आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी नहीं थी, फिर भी किसी तरह काम चल जाता था। चार्ल्स के बचपन के ये ही कुछ अच्छे दिन थे। जब उनके पिता की नौकरी छूट गई तो उनपर कर्ज का भार बढ़ता गया और आखिर कर्ज अदा न कर सकने के कारण उन्हें जेल भेज दिया गया। उस समय की प्रथा के अनुसार बाद में उनका आठ सदस्यों का परिवार भी उनके साथ रहने के लिए जेल पहुंच गया। बचपन में चार्ल्स को एक फैक्टरी में काम करना पड़ा। यहां उन्हें बड़े कटु अनुभव हुए।

चार्ल्स डिकेन्स ने 15 साल की उम्र में एक वकील के यहां क्लर्क की तरह काम करना शुरू किया। फिर वे समाचारपत्रों को अदालती समाचार देने लगे। इसके बाद वे पार्लैमेंट के समाचार देने लगे। साथ ही उन्होंने 'बोज़' उपनाम से पत्रिकाओं के लिए व्यंग्यपूर्ण रचनाएं लिखना भी आरंभ किया। 'पिकविक पेपर्स' नामक पुस्तक के प्रकाशन से उन्हें काफी प्रसिद्धि मिली।

इसके बाद तो एक लेखक के रूप में डिकेन्स को एक के बाद एक सफलता मिलती गई। उनके अधिकांश उपन्यास पत्रिकाओं में धारावाहिक रूप से निकले। 'डेविड कॉपरफील्ड', 'ओलिवर ट्विस्ट', 'ए टेल ऑफ़ टू सिटीज', 'ए क्रिस्मस कैरोल' आदि उनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं।

डिफ़ो, डेनियल (DANIEL DEFOE 1661-1731): अंग्रेजी के प्रसिद्ध उपन्यासकार डेनियल डिफ़ो बचपन में जब लन्दन के एक स्कूल में पढ़ते थे तभी उन्होंने लेखक बनने



जहाज़ डूब गया और क्रूसो एक द्वीप पर जा पड़ा।

का निश्चय कर लिया था। आरंभ में उन्होंने छोटी-छोटी पुस्तकें लिखीं। उनकी एक पुस्तिका ने कुछ सरकारी अधिकारियों को अप्रसन्न कर दिया और उन्हें जेल में डाल

दिया गया। जेल से छूटने पर उन्होंने फिर से लिखना शुरू कर दिया।

डिफ़ो की सबसे प्रसिद्ध पुस्तक है, 'रॉबिन्सन क्रूसो'। डिफ़ो ने अपनी यह पुस्तक अलेक्जेंडर सेल्किर्क नामक एक



क्रूसो को बालू पर किसीके पैर के निशान मिले।

जहाज़ी की सच्ची कहानी के आधार पर लिखी। सेल्किर्क का जहाज़ डूब गया था और वह एक रेगिस्तानी टापू पर जा पड़ा था। लेकिन डिफ़ो ने इसमें अपनी कल्पना से भी बहुत-कुछ जोड़ा है।

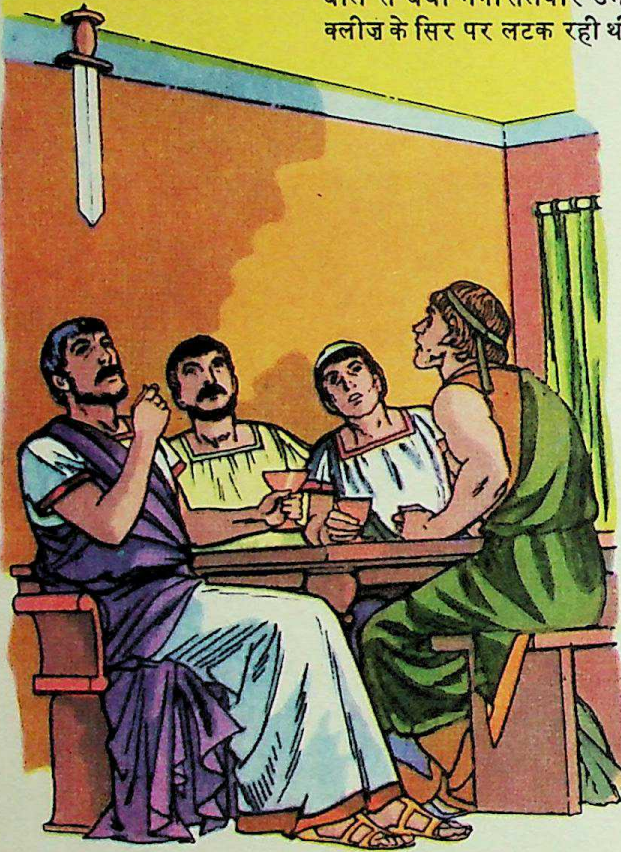
डिफ़ो ने और भी कई पुस्तकें लिखी हैं, लेकिन उनमें 'रॉबिन्सन क्रूसो' को ही सबसे अधिक प्रसिद्धि मिली है। दुनिया-भर के बच्चे इस पुस्तक को बड़े चाव से पढ़ते हैं। अनेक भाषाओं में इसका अनुवाद हो चुका है।

डैमोकलीज (DAMOCLES): दो हजार साल से भी पहले की बात है। दायोनीसियस (वरिष्ठ) प्राचीन यूनानी नगर सिराक्यूज़ का राजा था। डैमोकलीज उसका एक दरबारी था। डैमोकलीज बराबर दायोनीसियस से यह कहता रहता था कि तुम कितने भाग्यशाली हो कि तुम एक राजा हो। आखिर दायोनीसियस यह सुनते-सुनते ऊब उठा और उसने डैमोकलीज को एक सबक सिखाने का निश्चय किया।

डैमोकलीज के सम्मान में उसने एक शाही भोज का आयोजन किया। डैमोकलीज इससे मन ही मन बड़ा प्रसन्न हो रहा था। लेकिन भोज के बीच में ही जब अचानक उसकी नज़र ऊपर उठी तो उसने देखा कि ठीक उसके सिर के ऊपर एक नंगी तलवार एक बाल में बंधी लटक रही है। वह बड़ा घबराया और उसके बाद भोजन भी चैन से नहीं कर सका।

दायोनीसियस ने ही डैमोकलीज के सिर पर तलवार टंगवाई थी। इस तरह वह उसे यह बताना चाहता था कि शासक का जीवन केवल सुख से भरा हुआ नहीं होता—

बाल से बंधी नंगी तलवार डैमो-क्लीज के सिर पर लटक रही थी।



वह प्रायः सकट में रहता है। आज, जब कोई यह कहता है कि 'डैमोक्लीज की तलवार उसके सिर पर लटक रही है', तो उसका मतलब यह होता है कि अपने पद या विशेष स्थिति के कारण वह आनेवाले संकट से चिन्तित है।

तंतुवाद्य (STRINGED INSTRUMENTS): ऐसे सभी बाजे जिनमें ध्वनि मुख्यतः तारों से निकलती है, तंतुवाद्य कहलाते हैं। सितार, वीणा, सारंगी, वायलिन आदि ऐसे ही वाद्य हैं। ऐसे वाद्यों की संख्या बहुत अधिक है।



अमरीका के दक्षिणी राज्यों में कभी बैजो का खूब चलन था।

इनमें से कुछ—जैसे, वायलिन और सारंगी—छोटे आकार के बाजे हैं, पर 'बास' और कुछ वीणाएं काफी बड़ी होती हैं। एकतारे पर एक ही तार होता है, पर पश्चिमी देशों में प्रचलित हार्प नामक वाद्य और कोतो नामक जापानी वाद्य में दस से अधिक तार हो सकते हैं। इसी तरह कुछ वाद्यों को बजाने के लिए तार पर सिर्फ उंगलियां फेरनी पड़ती हैं, कुछ को बजाने के लिए वादक उंगलियों में मिजराब पहन लेते हैं, और सारंगी तथा वायलिन आदि को बजाने के लिए तारों पर गज फेरना पड़ता है।

तंतुवाद्यों का प्रचलन भारत में बहुत प्राचीन काल से रहा है। वीणा के कई प्रकारों—नागवीणा, गजवीणा आदि—का उल्लेख ईसा से कई सौ वर्ष पूर्व के साहित्य में मिलता है। वैसे अब वीणा का चलन धीरे-धीरे कम होता जा रहा है। अब केवल कुछ शास्त्रीय संगीतज्ञ, विशेषकर कर्नाटकी संगीतज्ञ ही इसका उपयोग करते हैं। सितार और तानपूरे का अब भी बहुत अधिक चलन है। सारंगी भी भारतीय संगीत में बहुत प्रचलित रही है। पश्चिमी देशों से सम्पर्क होने के बाद भारत में वायलिन का भी बहुत चलन हो गया है।



मध्ययुगीन यूरोपीय गायक ल्यूट बजाते थे।

वायलिन पश्चिमी देशों में प्रचलित सिम्फनी वाद्य-वृन्द का सबसे छोटा वाद्य है। इस परिवार के अन्य वाद्य हैं: वायोला, वायोलॉनसेलो और डबल बास। ये सभी एक ही प्रकार के वाद्य हैं। केवल इनके आकार, इनपर लगे तारों की संख्या और इनसे निकलनेवाली ध्वनि तथा बजाने के ढंग में थोड़ा-सा अन्तर हो जाता है।

तंतुवाद्यों को बजाने के लिए जो गज इस्तेमाल किए जाते हैं वे बड़े भी हो सकते हैं और छोटे भी। वायलिन का गज प्रायः 28 इंच लम्बा होता है। गज पतली, मजबूत लकड़ी के बने होते हैं। इनपर एक सिरे से दूसरे सिरे तक घोड़े के बालों का एक गुच्छा कसकर बंधा होता है। इन बालों पर खूब धूप या बिरोजा रगड़ा जाता है, जिससे ये तारों



हार्प के आकार-प्रकार में काफी परिवर्तन हुआ है। जाज़ और सिम्फनी वाद्यवृन्द में डबल बास का प्रयोग होता है।

सेलो से बहुत सुरीली ध्वनि निकलती है।

को पकड़ सकें और उनपर सरलता से फेरे जा सकें। इस तरह फेरने से जो कंपन पैदा होता है उससे ही ध्वनि उत्पन्न होती है। गज़ अकसर दाहिने हाथ से तारों पर फेरा जाता है और बाजा बायें कंधे या बाईं बांह के सहारे टिका रहता है। प्रत्येक तार के सुर को बायें हाथ की उंगलियों से खूँटी को कसकर या ढीला करके आवश्यकता-नुसार मंद्र या तीव्र किया जा सकता है। वादक वाद्य को बजाने से पहले उसके सभी तारों का सुर मिलाते हैं, जिससे उनसे उत्पन्न लय बेमेल नहीं होती। तारों से उत्पन्न होने-वाली ध्वनि वाद्ययंत्र के नीचे के खोखले भाग के कारण गुंजती है।

हवाई द्वीप का गिटार



वायोला वायलिन से ज़रा बड़ा होता है। इसपर उससे पांच स्वर नीचे बजते हैं।



वायलिन हार्प और बांसुरी की तरह प्राचीन वाद्य नहीं है। पर यह पियानो से पुराना बाजा है। यह आज जिस रूप में प्रचलित है, वह रूप 400 वर्ष से अधिक पुराना नहीं है। सबसे अच्छे वायलिन (और इस परिवार के अन्य वाद्य) आज से कोई 200 वर्ष पहले इटली के महान वायलिन-निर्माताओं-अमाती, स्त्रादिवैरियस और गुआर्नैरियस आदि द्वारा बनाए गए थे।

पश्चिमी देशों के सिम्फनी ऑर्केस्ट्रा का एक अन्य वाद्य हार्प बहुत ही पुराना है। इसका उल्लेख बाइबिल में भी आता है। आजकल हार्प में 47 तार होते हैं। उनपर उंगली फेरकर इसे बजाया जाता है। मंडोलिन, गिटार, बंजो और उकुलेले में भारतीय सितार और वीणा की तरह ही चार से आठ तक तार होते हैं, और इन्हें उंगलियों



वायलिन का विकास मध्ययुगीन वायोला से हुआ है।

से बजाया जाता है। ये बाजे वाद्यवृन्द के भाग नहीं होते। इन्हें या तो अलग से अकेले बजाया जाता है, या किसीके गाने की संगत में बजाया जाता है।

तानसेन (TANSEN 1509?-1589): तानसेन भारत के प्रसिद्ध संगीतज्ञ थे। वे सोलहवीं शताब्दी में हुए थे। वे ग्वालियर के रहनेवाले थे। उनके गुरु स्वामी हरिदास थे।

तानसेन पहले ग्वालियर दरबार में गायक थे, परंतु फिर शेरशाह सूरी के पुत्र दौलतखां सूरी के दरबार में चले गए। दौलतखां की मृत्यु के बाद वे बांधवगढ़ के राजा के दरबार में आ गए।

अकबर ने जब उनकी प्रशंसा सुनी, तब उन्हें अपने दरबार में बुला लिया। इसके बाद वे जीवन-भर वहीं रहे। उन्होंने कई नये रागों की रचना की और संगीत पर दो पुस्तकें भी लिखीं। तानसेन के बनाए रागों में मियां की मल्हार, मियां की तोड़ी, मियां की सारंग और दरवारी कानड़ा प्रसिद्ध हैं।

कहते हैं, जीवन के अंतिम दिनों में तानसेन मुसलमान हो गए थे। ग्वालियर में उनकी कब्र है, जहां प्रति वर्ष तानसेन का उर्स मनाया जाता है।

तालवाद्य (PERCUSSION INSTRUMENTS): तालवाद्य संगीत के ऐसे उपकरण हैं, जो थाप देने या छड़ी से चोट करने पर बजते हैं। भारत में बहुत-से तालवाद्य हैं। इनमें प्रमुख तबला है। यह उत्तर भारत में संगीत और नृत्य के कार्यक्रमों में अवश्य काम आता है। दक्षिण में मृदंग का प्रयोग होता है। घरों में ढोलक काम आती है। इसके अलावा, साधु लोग डफली से काम लेते हैं। डफली को हाथ में रखना बड़ा आसान होता है। डफली से बड़ा डफ होता है। खंजड़ी भी ऐसी ही होती है।

जैसाकि नाम से स्पष्ट है, उक्त तालवाद्य गाने के बोल निकालने के काम नहीं आते, बल्कि गति या ताल देने के काम आते हैं। झांझ, मंजीरे आदि भी यही काम करते हैं।

पश्चिमी संगीत में भी अनेक तालवाद्य हैं। इनमें ड्रम, केटलड्रम, झांझ, लोहे का त्रिकोण आदि उल्लेखनीय



फौजी बैंड में ड्रम अवश्य होता है।



झांझ और त्रिकोण से संगीत और आकर्षक हो जाता है।

हैं। ड्रम कई तरह के होते हैं, जैसे बास ड्रम, स्नेयर ड्रम आदि।

इन वाद्यों का उपयोग आर्केस्ट्रा और बैंडों आदि में होता है। किसी ड्रम को अगर एक तरह की लकड़ी से बजाया जाए तो एक तरह का स्वर निकलता है, और दूसरी से बजाया जाए तो दूसरी तरह का स्वर निकलता है। केटलड्रम-वादक के पास बजाने के लिए दो-तीन तरह की लकड़ियां होती हैं। उसके पास एक जोड़ा ऐसी लकड़ियों का होता है, जिनके एक सिरे पर कपड़े, ऊन या ऊनी कपड़े का गोला बना होता है। वह इन्हीं लकड़ियों को अधिक काम में लाता है।

सिम्फनी आर्केस्ट्रा में केटलड्रम सबसे महत्वपूर्ण बाजा है। उसकी गति आर्केस्ट्रा के सुरों के अनुसार बदलती है। मेरिम्बा बाजा इंग्लैंड में अफ्रीका से आया है। यह जीलो-फोन जैसा होता है।

तुलसीदास (TULSIDAS 1532-1623?): हिन्दी साहित्य में गोस्वामी तुलसीदास का स्थान सर्वोपरि है। वे संत और कवि थे और उनकी रचना 'रामचरितमानस' देश-भर में प्रसिद्ध है। उत्तर भारत के तो घर-घर में इसकी प्रतियां पाई जाती हैं और सर्वत्र इसका गान होता है।

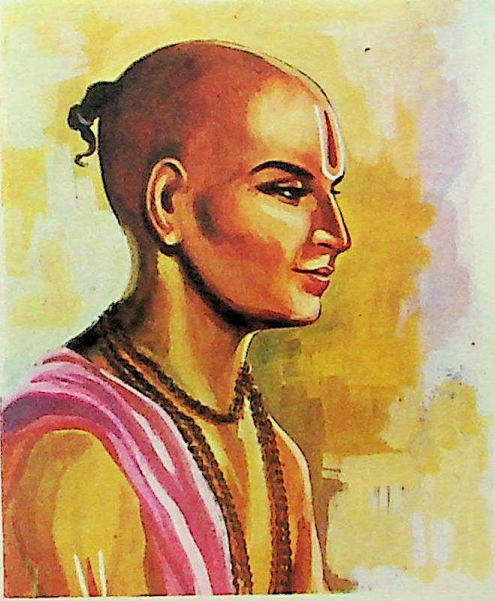
तुलसीदास के जीवन के संबंध में प्रामाणिक रूप से कुछ भी ज्ञात नहीं है। उनका जन्मस्थान उत्तर प्रदेश के बांदा जिले का राजापुर ग्राम माना जाता है। उनका बाल्यकाल बड़ी कठिनाइयों में बीता। माता-पिता की मृत्यु हो गई और भिक्षा मांगकर तुलसीदास को गुजर करनी पड़ी। वे राम के भक्त हो गए और उनके लिए ही कविता लिखने लगे।

उन्होंने विवाह भी किया परंतु अधिक दिन गार्हस्थ्य जीवन का सुख नहीं भोग सके। इसलिए पुनः अपनी राम-भक्ति की साधना में लग गए। वे मुख्यतः चित्रकूट में

रहते थे, और कभी-कभी अयोध्या भी जाते थे। अयोध्या में ही उन्होंने 'रामचरितमानस' की रचना आरंभ की। अंतिम समय में वे काशी आ गए और वहीं सन् 1623 में उनका शरीरांत हुआ।

तुलसीदास के नाम से बहुत-सी रचनाएं प्राप्त होती हैं, पर प्रामाणिक 12 ही मानी जाती हैं। उनमें भी प्रमुख ये हैं: 'रामचरितमानस', 'विनय पत्रिका', 'दोहावली', 'गीतावली', 'कवितावली', और 'बरवै रामायण'।

'रामचरितमानस' तुलसीदास की प्रमुख कृति है। यह सात कांडों में विभाजित है। इसमें मुख्य रूप से चौपाइयों और दोहों का प्रयोग किया गया है। इसमें भगवान राम की संपूर्ण जीवन-गाथा लिखी गई है। भाषा



गोस्वामी तुलसीदास

अवधी है। राम-कथा के माध्यम से तुलसीदास ने भारतीय संस्कृति के श्रेष्ठ जीवनादर्शों को जनता के सामने प्रस्तुत किया है। यही इसकी अपार लोकप्रियता का कारण है।

दर्शन, पाश्चात्य (WESTERN PHILOSOPHY): दर्शन का विषय जीवन और संसार की व्याख्या करना तथा उसके उद्देश्य को समझने का प्रयत्न करना है। सभी देशों के विचारक अपने-अपने ढंग से इस कार्य को करते रहे हैं। पश्चिम के दार्शनिकों ने जिस रूप में संसार को देखा-समझा है, वह प्राच्य दार्शनिकों के विचारों से भिन्न है। मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि पूर्व के देशों में आत्मा-परमात्मा के संबंधों तथा मनुष्य के आचार-विचार पर अधिक चिंतन किया गया है, जबकि पश्चिमी दर्शन सांसारिक जीवन को अधिक प्रमुखता देता है और उसके सब पहलुओं की मीमांसा करता है।

पाश्चात्य दर्शन के तीन मुख्य भाग हैं: प्राचीन, मध्य-

युगीन और अर्वाचीन। प्राचीन दर्शन का विकास यूनान में हुआ। वहां सुकरात, अफ़लातून व अरस्तू नामक तीन ऐसे दार्शनिक हुए जिनकी महत्ता आज भी कम नहीं हुई है। ये तीनों ऐथेंस में हुए थे। सुकरात ने इस बात का प्रचार किया कि सत्य और शुभ सब मनुष्यों के लिए एक समान है। अफ़लातून सुकरात का शिष्य था। उसने अपने गुरु के कार्य को आगे बढ़ाया। उसने एक आदर्श समाज-व्यवस्था की कल्पना की, जिसे 'यूटोपिया' कहते हैं। इसके अनुसार विचारक ही समाज का शासक भी होना चाहिए। अरस्तू ने तत्त्वचिंतन में विज्ञान का समावेश किया। इससे दर्शन वास्तविकता के और भी अधिक निकट आ गया। इन दर्शनों में बुद्धि और तर्क को बहुत प्रमुखता दी गई।

संभवतः इसकी प्रतिक्रियास्वरूप ही यूरोप में कुछ शताब्दियों के लिए दार्शनिक चिंतन की धारा रुक गई और रूढ़िवादी ईसाई धर्म का बोलबाला रहा। फिर ग्यारहवीं शताब्दी में चिंतन आरंभ हुआ और तब से यह आज तक बड़ी प्रखरता से चल रहा है।

मध्ययुग का दर्शन मुख्यतः विद्वत्-मंडल का दर्शन है। आठवीं शताब्दी में इसका आरंभ हुआ और यह पन्द्रहवीं शताब्दी तक चला। इस समय मुख्यतः बुद्धि और विश्वास के दावों की जांच की गई। पहले बुद्धि और विश्वास को अभिन्न माना गया, फिर बुद्धि से विश्वास को श्रेष्ठ घोषित किया गया, और अंत में बुद्धि की सर्वोपरि महत्ता स्वीकार की गई।

आधुनिक युग में बुद्धि ने अपने चमत्कार दिखाने आरंभ किए। पहला प्रमुख दार्शनिक बेकन था जिसने गंभीर चिंतन तो नहीं दिया, परंतु अनेक विषयों पर चमत्कारपूर्ण निबंध लिखे। फिर आया देकार्त, जिसने दर्शन में गणित की स्पष्टता और निश्चय को प्रवेश दिलाया। देकार्त ने कहा: "मैं चिंतन करता हूं, इसलिए मैं हूं।" इसी आधार पर उसने परमात्मा तथा भौतिक जगत् का अस्तित्व भी सिद्ध किया।

देकार्त के बाद स्पिनोज़ा का नाम आता है। यह दार्शनिक यहूदी था और इसका सारा जीवन बड़े कष्ट में बीता। इसने अद्वैत के विचार का समर्थन किया। फिर आया लाइबनिज़, जिसने कहा कि द्रव्य अनेक प्रकार के हैं। उसने आध्यात्मिक विविधता के सिद्धांत का प्रतिपादन किया।

इनके बाद अनुभववाद का प्रचार हुआ। इस धारा के प्रमुख दार्शनिक लॉक, बर्केले और ह्यूम हैं। अब विचारक मनोविज्ञान की ओर झुकने लगे और उन्होंने मानव-बुद्धि का अनुसंधान आरंभ किया।

फिर आता है कांट, जो इस युग का संभवतः सबसे बड़ा दार्शनिक है। उसने विवेकवाद और अनुभववाद को संयुक्त करके आलोचनावाद का निर्माण किया। ईश्वर

के संबंध में उसने कहा कि शुद्ध तर्क से उसकी सत्ता सिद्ध नहीं होती, व्यावहारिक तर्क से होती है।

फिर आए हेगेल और शापेनहावर। हेगेल ने सत्य और विवेक को एक ठहराया और शापेनहावर ने कहा कि सृष्टि का मूलतत्त्व अंधा है और कुछ समय बाद जीवन का ह्रास होने लगेगा। नीत्शे ने शक्ति की महत्ता का प्रचार किया और एक 'सुपरमैन' की कल्पना की, जो सब विघ्न-बाधाओं को जीत सकता है। स्पेन्सर ने विकासवाद का प्रचार किया। बर्गसां भी विकासवादी है, परन्तु वह उसमें नवीनता और उत्पादन होता देखता है।

अत्याधुनिक युग का दर्शन सभी प्राचीन मान्यताओं के विपरीत जा रहा है। इसमें अस्तित्व की इस ढंग से मीमांसा की गई है कि जीवन और सृष्टि का कोई उद्देश्य ही नहीं प्रतीत होता। यहां सब व्यर्थ और असंगत है। कामू, सार्त्र, यास्पर्स और हीडेगर इस परंपरा के माने हुए दार्शनिक हैं।

दर्शन, भारतीय (INDIAN PHILOSOPHY) : भारत को सदा से दर्शन का देश माना जाता रहा है। इसमें संदेह नहीं कि यहां तत्त्वचिंतन को बहुत प्रधानता दी गई और उसके लिए रोजमर्रा के जीवन और उसकी सुख-सुविधाओं का भी बलिदान किया गया। यह दर्शनों का ही प्रभाव था कि यहां घर-बार छोड़कर साधु बन जाना या संन्यास ले लेना और फिर ईश्वर या ब्रह्म का साक्षात्कार करने का प्रयत्न करना जीवन का सर्वोत्तम कार्य माना गया। ऐसा संसार के अन्य किसी भी देश में नहीं हुआ।

भारत में अत्यन्त प्राचीन काल से इस कल्पना की नींव पड़ गई थी कि व्यक्ति के जीवन के भीतर आत्मा नामक एक सूक्ष्म शक्ति कार्य कर रही है और आत्मा उस विशाल तत्त्व का अंश है जो समस्त सृष्टि को संचालित करता है तथा जिसे परमात्मा या ब्रह्म कहते हैं। इसीलिए यह कल्पना रूढ़ हुई कि आत्मा या व्यक्ति का ब्रह्म से मिलना जीवन का प्रमुख उद्देश्य मानना चाहिए और उसके लिए बाह्य जीवन की जो भी वस्तु छोड़नी पड़े, छोड़ देनी उचित है।

आत्मा की कल्पना के बीज वैदिक युग के साहित्य में ही मिलते हैं। लेकिन इसका विकास उपनिषदों में विशेष रूप से हुआ। मुख्य उपनिषद् 18 हैं और इनमें आत्मा, ब्रह्म, जीव, प्रकृति, जड़, चेतन आदि विषयों का ही विचार किया गया है। इनमें माना गया है कि आत्मा ही मनुष्य का वास्तविक रूप है। मनुष्य को चाहिए कि वह उसे पहचाने और ब्रह्म से उसका साक्षात्कार और मिलन कराने का प्रयत्न करे। संसार और उसका जीवन बंधन है। आत्मा का ब्रह्म से साक्षात्कार होने पर ही मनुष्य संसार के बंधन से मुक्त हो सकता है। तब उसे इस जगत् में और जन्म लेने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

उपनिषदों में जो विचार व्यक्त किए गए, वे निश्चित मत के रूप में सुगठित नहीं थे। इसलिए उपनिषद्-युग के पश्चात् सुगठित मतों के रूप में कुछ दर्शन विकसित हुए, जो इन विचारों पर आधारित होते हुए भी परस्पर भिन्न थे। इन दर्शनों की संख्या छः है। इनमें एक दर्शन यह मानता था कि आत्मा और ब्रह्म एक ही वस्तु हैं और उनमें कोई भेद नहीं है। इसे अद्वैत या वेदान्त कहा गया। बादरायण इसके जनक थे। उन्होंने 'ब्रह्मसूत्र' की रचना करके इस मत का प्रतिपादन किया। कुछ और समय बाद शंकराचार्य ने इस मत का बड़ा व्यापक प्रचार किया और इसे हिन्दू दर्शन की प्रमुख धारा बना दिया।

अन्य पांच दर्शन इस प्रकार हैं : सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक और मीमांसा। इनके प्रणेता क्रमशः थे : कपिल, पतंजलि, गौतम, कणाद और जैमिनि। ईसा के जन्म के आसपास इन दर्शनों का उदय हुआ।

उपरोक्त सभी दर्शनों को वैदिक या हिन्दू दर्शन माना जाता है। इसके अतिरिक्त भी दर्शनों की एक और परंपरा भारत में चलती रही, जिसे श्रमण परंपरा का नाम दिया गया है। वैदिक परंपरा से इसका विरोध रहा। इसमें बौद्ध तथा जैन दर्शन प्रमुख हैं।

इन दोनों के प्रणेता, बुद्ध और महावीर, समकालीन थे। दोनों का समय ई० पू० छठी शताब्दी माना जाता है। हिन्दू दर्शनों से इनका विरोध मुख्यतः इस बात में है कि ये आत्मा को नहीं मानते। बौद्ध दर्शन तो आत्मा को बिल्कुल नहीं मानता, जैन दर्शन भिन्न रूप में मानता है। परन्तु ये दोनों ही कर्म और पुनर्जन्म को मानते हैं।

आत्मा को न मानने पर भी बौद्ध दर्शन में कर्ण को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। बौद्ध दर्शन का मुख्य विषय है दुःख और उसके नाश का उपाय। इसके अनुसार अविद्या, तृष्णा आदि दुःख के मुख्य कारण हैं और निर्वाण है उसके नाश का उपाय।

बौद्ध धर्म और दर्शन विदेशों में बहुत फैला। हीनयान और महायान नामक इसकी दो शाखाएं हुईं। बाद में बौद्ध परंपरा में कुछ और भी दार्शनिक हुए जिनमें नागार्जुन, वसुबंधु और कुमारलात प्रमुख हैं।

जैन धर्म में आत्मा प्रकाश की तरह व्यापक और विस्तारशील है। मनुष्य का जब नया जन्म होता है, तब आत्मा नये शरीर के अनुसार विस्तृत या संकुचित होता है। कर्म का प्रभाव बंधन बनकर आत्मा पर छा जाता है। उसे दूर करने की कई विधियां हैं जिनका अंत निर्वाण में होता है। निर्वाण में आत्मा ज्ञान और आनंद में डूब जाता है।

इस प्रकार भारत में एक ओर हिन्दू परंपरा चली, दूसरी ओर जैन और बौद्ध। इनके अतिरिक्त भी एक परंपरा थी जिसे लोकायत कहते थे। ये लोग खाने-पीने और मौज उड़ाने को ही जीवन की प्रमुख आवश्यकता

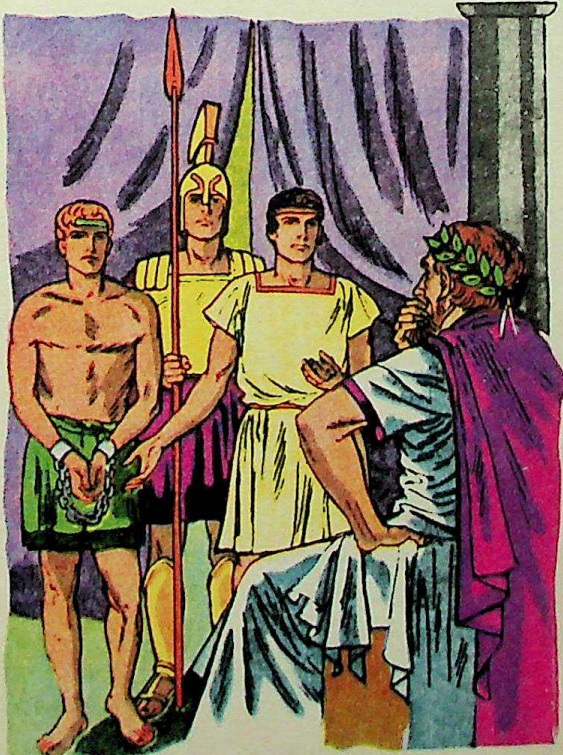
मानते थे। परंतु यह परंपरा चली नहीं।

षड्दर्शनों के बाद हिन्दू परंपरा में आचार्य हुए। शंकराचार्य का उल्लेख हम पहले कर चुके हैं। ये अद्वैत-वादी थे। रामानुजाचार्य ने विशिष्टाद्वैत की स्थापना की। निंबार्काचार्य ने द्वैताद्वैत की नींव रखी। मध्वाचार्य ने द्वैत-वाद चलाया। वल्लभाचार्य ने शुद्धाद्वैत का प्रचार किया। इनमें जो वैचारिक भेद थे वे मूलतत्त्वों—ईश्वर, जीव, प्रकृति, इत्यादि—की अवस्थिति तथा पारस्परिक संबंध को लेकर थे। ये सभी आचार्य दक्षिण भारत के थे। इन सबमें पूजा-पाठ और भक्ति की बड़ी भरमार थी। इन सबने अपने संप्रदाय स्थापित किए जो आज भी चल रहे हैं।

दामोन और पिथियास (DAMON AND PYTHIAS)

सदियों पहले की बात है। यूनान के एक नगर-राज्य सिराक्यूज में दो मित्र रहते थे—दामोन और पिथियास। एक बार सिराक्यूज के राजा ने पिथियास को इस आरोप में गिरफ्तार करके फांसी की सजा दी कि वह उसके विरुद्ध विद्रोह का षड्यन्त्र रच रहा था।

पिथियास ने राजा से कुछ दिनों की मोहलत मांगी, ताकि वह अपनी पत्नी और बच्चों से आखिरी बार मिलने के लिए अपने गांव जा सके। इतने समय के लिए उसका मित्र दामोन उसकी जगह जेल में रहने को तैयार हो गया। दामोन ने राजा से वायदा किया कि अगर पिथियास समय पर नहीं लौटा तो वह खुद उसकी जगह फांसी पर चढ़ जाएगा। राजा ने उसकी बात मान ली। पिथियास



दामोन और पिथियास एक-दूसरे के लिए मरने को तैयार थे।

को कुछ दिनों के लिए छोड़ दिया गया और दामोन को उसकी जगह बन्दी बना लिया गया।

पिथियास समय पर नहीं लौट सका, इसलिए दामोन को फांसी पर चढ़ाने की तैयारी होने लगी। लेकिन जब तक उसे फांसी के तख्ते पर ले जाया गया, तब तक पिथियास दौड़ता हुआ वहां आ पहुंचा। जब राजा ने यह सुना कि एक मित्र दूसरे के लिए अपनी जान तक देने को तैयार है तो उसने दोनों को छोड़ देने का हुक्म दे दिया। वह दो सच्चे मित्रों को एक-दूसरे से अलग नहीं करना चाहता था। उसी दिन से सच्ची मित्रता के लिए 'दामोन और पिथियास की मित्रता' का उदाहरण दिया जाता है।



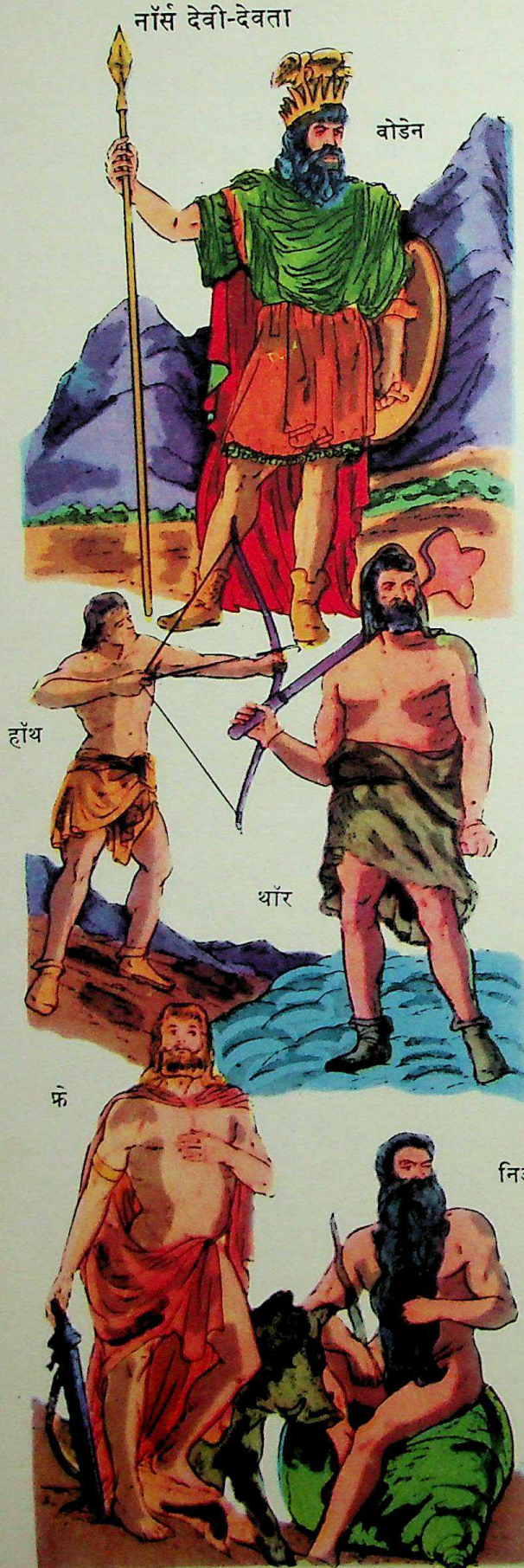
दुर्ग या किले प्रायः पहाड़ियों पर बनाए जाते थे।

दुर्ग (FORTS AND CASTLES) : जब हम किसी दुर्ग या किले का चित्र देखते हैं, तो उसमें रहनेवालों की एक धुंधली-सी याद हो आती है। दुर्ग या किले मध्ययुगीन सैन्य-व्यवस्था की जीती-जागती तस्वीरें हैं।

मध्ययुग में सशक्त राष्ट्र कम ही थे। हर राजा और सामन्त अपनी और अपने आश्रितों की रक्षा स्वयं करता था। प्रायः दुर्ग ऊंची पहाड़ियों पर बनाए जाते थे। वहां से आसपास की भूमि काफी दूर तक दिखाई देती थी। पहाड़ियों के कारण दुर्गों पर आक्रमण करना बहुत कठिन होता था। अगर दुर्ग समतल स्थानों पर बनते थे, तो इनके चारों ओर गहरी खाइयां बनाई जाती थीं जिनमें पानी भरा रहता था। इन खाइयों पर ऐसे पुल बनाए जाते थे जिन्हें हटाया जा सकता था।

दुर्गों के बाहर की दीवारें मोटी और ऊंची होती थीं। इन दीवारों पर जगह-जगह बुर्ज बने होते थे। हर बुर्ज में भरोखे होते थे जिनसे आसानी से तीर फेंके जा सकते थे। इन बाहरी दीवारों के भीतर मुख्य निवास के चारों ओर दूसरी दीवार होती थी। इसमें अनेक भवन हुआ करते थे। सामन्त या राजा के भवनों के अतिरिक्त इसमें नौकरों, सैनिकों, घोड़ों आदि के भी रहने की व्यवस्था होती थी। दुर्गों में तहखाने या जेलखाने भी बने होते थे,

देवी-देवता, नॉर्स



जिनमें शत्रु कैदियों को बन्द किया जाता था। इनमें गुप्त मार्ग या सुरंगें भी होती थीं।

अकसर जब कोई आक्रमण होता था तो आसपास की जनता दुर्ग में आकर शरण लेती थी। आज के अस्त्रों से तो इन दुर्गों को आसानी से मटियामेट किया जा सकता है, लेकिन भालों, बछों और तीरों के उस युग में दुर्ग को तोड़ना कठिन काम था।

भारत में इलाहाबाद, भांसी, चुनार, चित्तौड़ और दिल्ली के किले या दुर्ग बहुत मशहूर हैं। यूरोप में डेन्यूब और राइन नदी के तट पर तथा ब्रिटेन और आयरलैंड में भी अनेक दुर्ग बने हुए हैं।

कुछ दुर्गों के बारे में यह विश्वास भी प्रचलित है कि इनमें प्रेतात्माएं निवास करती हैं। इनके बारे में हत्या और रक्तपात की कहानियां भी प्रचलित हैं।

कुछ प्राचीन दुर्ग आज नष्ट हो चुके हैं। कुछ अभी भी अच्छी हालत में हैं। इनमें आज भी सेना रखी जाती है। कुछ नष्टप्राय दुर्गों को चिड़ियाघर आदि में बदल दिया गया है।

देवी-देवता, नॉर्स (NORSE GODS AND GODDESSES): प्राचीन नॉर्स जाति के लोग अनेक देवी-देवताओं में विश्वास रखते थे। लगभग हर घटना को वे किसी देवी या देवता की करतूत समझते थे। जब बिजली कड़कती थी तो वे कहते थे, “थॉर अपना रथ हांक रहा है और वज्र गिरा रहा है।” जब वसंत आता था तो वे कहते थे, “इडुना अपनी गहरी निद्रा के बाद जाग उठी है।” जब ओले बरसकर उनकी फसलों को चौपट कर देते थे, तो वे कहते थे, “लॉकी अपना खिलवाड़ कर रहा है।”

नॉर्स लोगों के देवी-देवता साधारण मनुष्यों से काफी मिलते-जुलते थे। उनमें भी वे दोष पाए जाते थे जो मनुष्यों में पाए जाते हैं। वे मनुष्यों की तरह मरते भी थे। नॉर्स लोग अपने कुछ देवी-देवताओं को बहुत प्यार करते थे। कुछ से वे डरते भी थे।

अंग्रेजी भाषा में दिनों के कुछ नाम नॉर्स लोगों के देवी-देवताओं के नाम पर रखे गए हैं। ‘ट्यूजडे’ (मंगलवार) ‘टियू’ का दिन है। टियू युद्ध का देवता था। ‘वेन्जडे’ (बुधवार) ‘वोडेन’ का दिन है। वोडेन सबसे प्रमुख देवता था। ‘थर्सडे’ (बृहस्पतिवार) ‘थॉर’ का दिन है। ‘फ्राइडे’ (शुक्रवार) ‘फ्रिग’ का दिन है। फ्रिग वोडेन की पत्नी और आकाश की देवी थी।

दूसरे कुछ देवता थे : ‘बाल्डर’ और उसका जुड़वा भाई ‘हॉथ’; ‘फ्रे’ और उसकी बहन ‘फ्रेया’ और ‘निओर्ड’। ‘बाल्डर’ प्रकाश का देवता था और ‘हॉथ’ अंधकार का। ‘फ्रे’ धूप और वरसात का देवता था और ‘फ्रेया’ सौन्दर्य की देवी थी। ‘निओर्ड’ समुद्र का देवता था।

नॉर्स लोगों का विश्वास था कि उनके देवी-देवता

बादलों के ऊपर स्वर्ग में रहते हैं, जिसे 'आसगार्ड' कहते हैं। इन्द्रधनुष 'आसगार्ड' का पुल है। नाँस लोगों में अपने देवी-देवताओं के बारे में अनेक कथाएं प्रचलित थीं। जो घटनाएं उनकी समझ में नहीं आती थीं, उन्हें वे देवियों और देवताओं से जोड़े रखते थे। इस तरह की कहानियों को 'पुराण कथा' कहते हैं।

देवी-देवता, रोमन (ROMAN GODS AND GODDESSES) : रोमन बहुत-से देवी-देवताओं में विश्वास करते थे। उनके अधिकांश देवी-देवता यूनानियों के से ही थे। लेकिन रोमनों ने करीब-करीब इन सबके नाम बदल दिए थे। उदाहरण के लिए यूनानी युद्ध के देवता को 'एरस' कहते थे, लेकिन रोमन उसे 'मार्स' कहने लगे। 'मार्स' का अर्थ मंगल होता है। 'एरस' की अपेक्षा 'मार्स' अधिक प्रचलित नाम है।

इन देवी-देवताओं के नाम पर कई ग्रहों के नाम रखे गए हैं। बहुत-से ग्रहों का तो पता भी दूरबीन (टेलिस्कोप) के आविष्कार के बाद लगा। लेकिन वैज्ञानिक इन ग्रहों के नाम देवी-देवताओं के नाम पर रखते गए।

जुपिटर इन्द्र की तरह देवताओं के देवता हैं। वे जब रुष्ट होते हैं तो बिजली कड़कती है, वज्रपात होता है। इसी के आधार पर सबसे बड़े ग्रह का नाम जुपिटर रखा गया है। हमारे यहां यह ग्रह बृहस्पति कहलाता है।

जूनो जुपिटर की रानी है। जूनो को सुन्दर किन्तु ईर्ष्यालु बताया गया है। वह क्रुद्ध भी जल्दी हो जाती है।

मर्क्युरी एक और रोमन देवता है। ग्रहों में हमारे यहां इसे बुध कहते हैं। रोमनों ने मर्क्युरी को देवताओं का दूत माना है। इसके पैरों में पंख लगे हैं। यह बहुत तेजी से उड़ता है। मर्क्युरी ग्रह के बारे में यह माना जाता है कि वह अन्य सब ग्रहों से अधिक तेजी से सूर्य की परिक्रमा करता है।

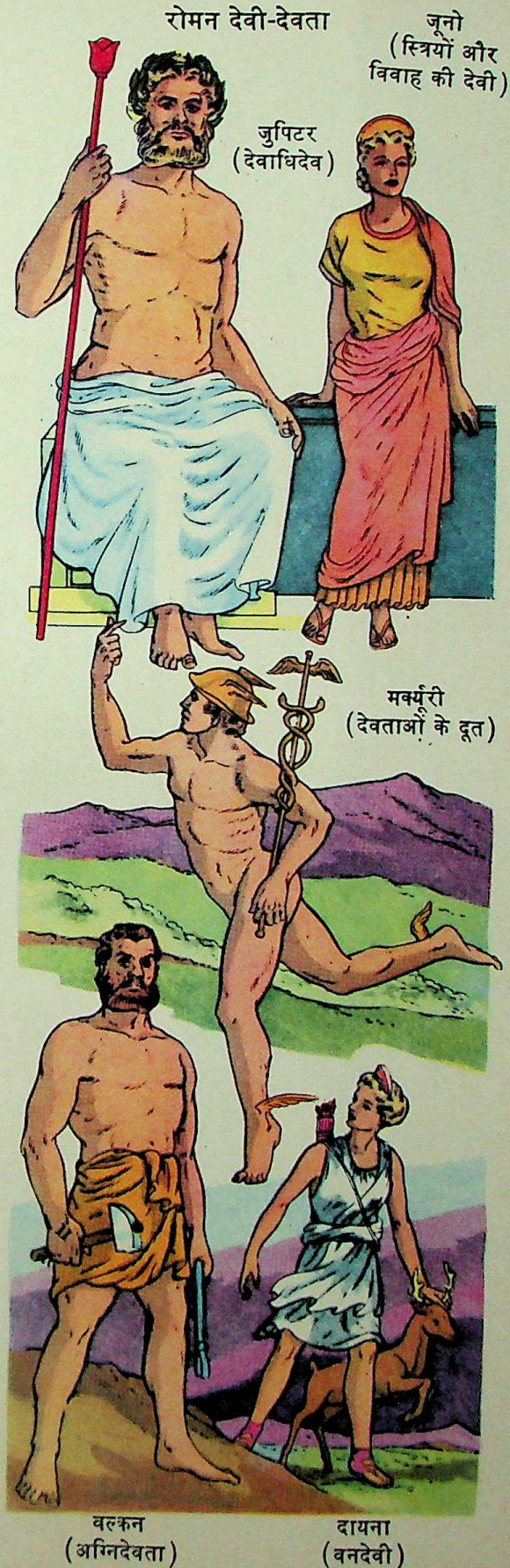
सौन्दर्य की देवी का नाम वीनस है। सबसे चमकीले तारे का नाम इसीके नाम पर रखा गया है। हमारे यहां इस ग्रह को शुक्र कहते हैं।

अपोलो सूर्य देवता है। अपोलो को सात सफेद घोड़ों के रथ पर यात्रा करते चित्रित किया जाता है। इसका रथ सोने का होता है।

दायना वनदेवी है। वह जंगली पशु-पक्षियों की रक्षा करती है और हमेशा अपने हाथ में धनुष-बाण रखती है। वह चन्द्रमा की भी देवी है। दायना अपोलो की जुड़वां बहन है।

जो स्थान हमारे यहां सरस्वती का है, वही रोमनों में मिनर्वा का है। यह देवी बुद्धि-विवेक की स्वामिनी मानी जाती है। इसे कला का प्रतीक और नगर की रक्षा करनेवाली देवी माना जाता है।

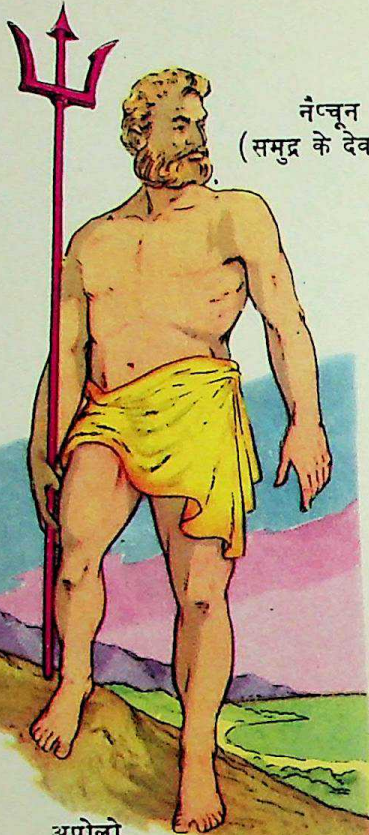
नैप्चून वरुण की तरह समुद्र का स्वामी है। उसका



रोमन देवी-देवता

जूनो
(स्त्रियों और
विवाह की देवी)जुपिटर
(देवाधिदेव)मर्क्युरी
(देवताओं के दूत)वल्कन
(अग्निदेवता)दायना
(वनदेवी)

रोमन देवी-देवता

मिनर्वा
(बुद्धि-विवेक की देवी)नैप्चून
(समुद्र के देवता)अपोलो
(सूर्य देवता)वीनस
(सौन्दर्य की देवी)क्यूपिड
(प्रेम के देवता)

शस्त्र त्रिशूल है। हमारे यहां यह शिव का शस्त्र माना जाता है। एक सुदूर ग्रह का नाम नैप्चून रखा गया है।

वल्कन अग्नि देवता है। यह देवताओं का लुहार है। 'वाँलकेनो' (ज्वालामुखी) शब्द वल्कन से ही बना है।

प्लूटो पाताल का देवता है। इस नाम का ग्रह सौर-मण्डल में पृथ्वी से काफी दूर है।

घर-गृहस्थी की रोमन देवी वेस्टा है। इसे हम लक्ष्मी कह सकते हैं। प्राचीन रोम में स्त्रियां इस देवी की पूजा करती थीं।

सैटर्न को कृषि का देवता माना गया है। यह एक ऐसा ग्रह है जो देखने में बड़ा सुन्दर है और जिसके चारों ओर छल्ले हैं। हमारे यहां इसे शनि का नाम दिया गया है।

इनके अलावा भी बहुत-से रोमन देवी-देवता हैं। कई देवताओं के नामों से अंग्रेजी भाषा में नये शब्द बना लिए गए हैं। उदाहरण के लिए 'ऐटलस' शब्द उस दैत्य के नाम से बना है जो पृथ्वी को अपने दोनों मजबूत कंधों पर साधे है।

देवी-देवता, हिन्दू (HINDU GODS AND GODDESSES):

संसार के प्रत्येक समाज में अत्यंत प्राचीन काल से देवी-देवताओं का स्थान प्रमुख रहा है। जीवन के प्रत्येक कार्य में उनकी अनुकूलता प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है और इसके लिए उनकी पूजा-प्रार्थना की जाती है।

हिन्दू समाज में माने जानेवाले देवी-देवताओं की संख्या अगणित है। प्रसिद्ध है कि हिन्दुओं के देवी-देवता तैंतीस करोड़ हैं। परंतु यहां प्रमुख देवी-देवताओं की ही चर्चा की गई है।

सबसे बड़े देवता तीन हैं—ब्रह्मा, विष्णु, महेश। ब्रह्मा सृष्टि को उत्पन्न करनेवाले माने जाते हैं, विष्णु उसका पालन-पोषण करते हैं, महेश या शिव उसका नाश करते हैं। इन सबकी पत्नियां प्रमुख देवियां हैं। ब्रह्मा की पत्नी का स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता, परंतु कहीं ब्रह्मणी को उनकी पत्नी माना गया है, कहीं सरस्वती को। सरस्वती अपने-आपमें विद्या और कला की अधिष्ठात्री देवी हैं। विष्णु की पत्नी हैं लक्ष्मी जो धन की देवी हैं। दिवाली के दिन प्रत्येक हिन्दू घर में इनकी पूजा की जाती है। शिव की पत्नी पार्वती हैं।

ये देवता पुराण-युग से प्रसिद्ध हुए। इससे पूर्व वैदिक युग में अन्य देवताओं को प्रमुखता प्राप्त थी। इन्द्र उस समय के सर्वोपरि देवता थे। वे वर्षा और तूफान के अधिष्ठाता थे। दूसरे देवता थे अग्नि—अग्नि की सहायता से भोजन पकता है। फिर सोम, मरुत, रुद्र आदि देवों की गणना थी। सोम एक प्रकार का स्फूर्तिदायक पेय था, जो एक विशेष लता से निकाला जाता था और जिसमें दूध और दही मिलाकर लोग पीते थे। इसका बहुत प्रचार था, इस-

लिए इसे भी देवता मान लिया गया। उषा देवी थीं जो प्रभात के समय सूर्य निकलने पर प्रकट होती थीं। इससे स्पष्ट है कि उस युग में प्राकृतिक शक्तियों तथा उपयोगी वस्तुओं को देवता माना जाता था।

जब अवतारों की कल्पना हिन्दू धर्म में प्रतिष्ठित हुई तब सभी अवतारों को भी देवता माना गया। अवतारों की कुल संख्या 24 मानी जाती है जिनमें 10 प्रमुख हैं। ये हैं : मत्स्य, वराह, कच्छप, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, बलदेव, बुद्ध, और कल्कि। इनमें से नौ अवतार अब तक हो चुके हैं, दसवां भविष्य में होना है। परंतु यहां ध्यान रहे कि अवतार सदा विष्णु के ही होते हैं, ब्रह्मा और शिव के नहीं।

भारतीय जीवन में राम और कृष्ण को विशेष महत्व प्राप्त है। इन महापुरुषों ने जन्म लेकर भारतीय संस्कृति के नये आदर्श स्थापित किए।

इनके अतिरिक्त हिन्दू धर्म में और भी अनेक देवी-देवता हैं। आप किसी मंदिर में जाइए, हर एक ताख में एक देवी या देवता दिखाई देगा। राम के मन्दिरों में हनुमान को विशेष स्थान प्राप्त है। ये शक्ति और बल के देवता हैं।

हिन्दुओं में सांप को भी देवता मानकर दूध पिलाया जाता है। शनि, मंगल, गुरु इत्यादि भी देवता हैं। स्त्रियां विविध त्योहारों पर अनेक देवी-देवताओं की पूजा करती हैं। उत्तर भारत में सत्यनारायण भगवान की कथा अनेक घरों में हर महीने होती है—ये भी एक देवता हैं।

निबंध (ESSAY) : निबंध एक छोटा लेख होता है। प्रायः गद्यात्मक लेख को ही निबंध कहते हैं। इसमें निबंधकार किसी विषय पर अपने विचार प्रकट करता है। निबंधों में किन्हीं कड़े नियमों का पालन नहीं किया जाता और निबंधकार अपनी मौज में विचारों का एक छोर छोड़कर दूसरा छोर पकड़ता चलता है। हिन्दी के निबंधकारों में बालकृष्ण भट्ट, प्रतापनारायण मिश्र, बालमुकुंद गुप्त और हजारीप्रसाद द्विवेदी सबसे महत्वपूर्ण हैं। बेकन, एडिसन, हैज़लिट और हिलेयर बेलौक अंग्रेजी के सबसे प्रसिद्ध निबंधकार हैं।

नीतिकथा (FABLES) : नीतिकथा ऐसी छोटी कथाओं को कहते हैं जिनमें कोई उपदेश छिपा रहता है। अधिकतर नीतिकथाएं जानवरों के बारे में होती हैं। उनमें पशु-पक्षी बातचीत करते हैं।

कुछ नीतिकथाएं सदियों पुरानी हैं। उनमें से तीन बहुत प्रसिद्ध हैं : 'खरगोश और कछुआ', 'गड़रिये का लड़का और भेड़िया', 'लोमड़ी और अंगूर'।

हमारी बहुत-सी कहावतें नीतिकथा से निकली हैं। 'अंगूर खट्टे हैं' एक ऐसी ही कहावत है। इस नीतिकथा में

लोमड़ी और अंगूर

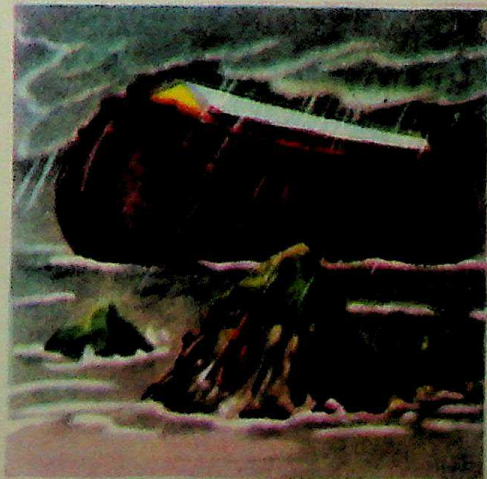


बताया गया है कि एक बार एक लोमड़ी ने बेल से लटका हुआ अंगूरों का एक गुच्छा देखा। अंगूर पके और रसदार थे। लेकिन वे काफी ऊंचाई पर थे। लोमड़ी ने उन्हें पाने के लिए भरसक उछल-कूद की। लेकिन वह उन तक पहुंच न सकी। आखिर हारकर उसने अपना इरादा छोड़ दिया। जाते-जाते उसने कहा, "जो हो, ये अंगूर एकदम खट्टे हैं।" जब कोई आदमी किसी चीज़ को पाने के प्रयत्न में असफल रहता है और उसके प्रति विरक्ति दिखाने का बहाना करता है तो हम अक्सर कह उठते हैं, "अंगूर खट्टे हैं!"

आजकल लेखक नीतिकथाएं बहुत कम लिखते हैं। आजकल उनका स्थान हास्य की सचित्र कहानियों और जानवरों की कहानियों ने ले लिया है। (देखें : ईसप)

नूह की नाव (NOAH'S ARK) : हिन्दुओं तथा कई अन्य धर्मावलंबियों की पौराणिक कथाओं की तरह, ईसाइयों की धर्म-पुस्तक बाइबिल में भी जल-प्रलय का वर्णन आता है।

बाइबिल के अनुसार, ईश्वर ने हज़रत नूह को स्वप्न में आकर बता दिया कि उनका इरादा सारे संसार को जल-प्रलय द्वारा नष्ट कर देने का है। उन्होंने नूह को आदेश दिया कि वे गोफर लकड़ी की एक नाव बनाएं, जो 300 हाथ लंबी, 50 हाथ चौड़ी और 30 हाथ ऊंची हो और उसमें हर जानदार चीज़ का एक-एक जोड़ा रख लें।



हज़रत नूह की नाव

भारत के प्रमुख नृत्य



भरतनाट्यम्



मणिपुरी



कथकलि

हज़रत नूह ने ऐसा ही किया। फलस्वरूप जल-प्रलय के कारण जहाँ एक ओर सारे प्राणी मारे गए, वहाँ हज़रत नूह की नाव में मौजूद जोड़ों के कारण सम्पूर्ण सृष्टि नष्ट नहीं हो सकी और बाद में संसार में सभी जीव-जंतु फिर पैदा हो गए।

नृत्यकला (DANCING) : बहुत पहले, इतनी पहले कि कोई नहीं जानता कि कब, लोगों ने अपने मन की भावनाओं को प्रकट करने के लिए नाचना शुरू किया। लोग अच्छी फसल की खुशी में नाचते थे, युद्ध में जीतने पर नाचते थे और देवताओं को प्रसन्न करने के लिए नाचते थे।

धीरे-धीरे नाचने की कला या नृत्य का विकास होता गया। अब अनेक प्रकार के नृत्य प्रचलित हैं। कुछ नृत्य साधारण होते हैं, लेकिन कुछ अत्यन्त कलापूर्ण होते हैं। अधिकांश नृत्यों के साथ संगीत आवश्यक होता है। लेकिन संगीत के बिना भी नृत्य हो सकता है।

भारत में कई प्रकार के शास्त्रीय नृत्य प्रचलित हैं : जैसे, भरतनाट्यम्, कथकलि, कथक, मणिपुरी आदि। भारत के सभी प्रदेशों के अपने-अपने लोक-नृत्य भी हैं। अधिकांश शास्त्रीय नृत्यों में केवल एक कलाकार अपनी कला का प्रदर्शन करता है। कुछ नृत्य समूहों में होते हैं। लोक-नृत्य आमतौर से सामूहिक नृत्य होते हैं। सभी देशों के लोगों के अपने-अपने ढंग के लोक-नृत्य हैं। अधिकांश लोक-नृत्य बड़े सुन्दर और आनन्दपूर्ण होते हैं।

पश्चिमी देशों में विभिन्न प्रकार के नृत्य प्रचलित हैं। बालरूम नृत्य में दो-दो व्यक्तियों के जोड़े नृत्य करते हैं। बैले नृत्य में नृत्य और संगीत के माध्यम से कोई कथा प्रस्तुत की जाती है। बैले नृत्य के अच्छे नर्तक और नर्तकियां बहुत छोटी उम्र से ही नृत्य का अभ्यास करते हैं।

कुछ धर्मों में नृत्य का बड़ा महत्त्व है, विशेष रूप से कुछ पूर्वी देशों के धर्मों में। धार्मिक नृत्यों के नर्तक अपना अधिकांश जीवन नृत्य और धर्म की साधना में ही व्यतीत करते हैं। (देखें : बैले)

पंचतंत्र (PANCHTANTRA) : संस्कृत का प्राचीन कथा-साहित्य अत्यन्त समृद्ध है। उसमें 'पंचतंत्र' का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसकी कहानियां आज सारे संसार में पढ़ी जाती हैं।

'पंचतंत्र' की रचना कब हुई, इस विषय में निश्चित रूप से कुछ भी ज्ञात नहीं है। अनुमान यह है कि ईसा से कुछ समय पूर्व इसे लिखा गया। पं० विष्णु शर्मा इसके लेखक माने जाते हैं।

ग्रंथ का उद्देश्य रोचक कहानियों से नीति और सदाचार की शिक्षा देना है। महिलारोप्य नामक एक नगर में अमरकीर्ति राजा रहता था। उसके तीन पुत्र बहुत ही मूर्ख थे। उसने विष्णु शर्मा से कहा कि तुम छः महीने में इन्हें विद्वान और राजनीतिज्ञ बना दो। विष्णु शर्मा ने

बात मान ली। इसी कार्य के लिए उसने 'पंचतंत्र' की रचना की।

'पंचतंत्र' में पांच मुख्य कहानियां हैं। इन कहानियों के भीतर छोटी, फिर और छोटी कहानियां इस तरह दी गई हैं जैसे किसी बड़े बक्स में छोटे, फिर और छोटे बक्स बंद हों। कहानियों के पात्र पशु-पक्षी हैं, पर भावनाएं सभी मानवीय हैं। उनके माध्यम से जीवन के गहन तत्त्वों की शिक्षा दी गई है।

विभिन्न समयों में 'पंचतंत्र' के अनेक संस्करण होते गए। वर्तमान समय में जो संस्करण प्रचलित है, उसे बारहवीं शताब्दी में पूर्णचन्द्र जैन नामक विद्वान ने तैयार किया था। संसार की चालीस से ऊपर भाषाओं में इस ग्रंथ के अनुवाद हुए हैं। 12वीं शताब्दी में हिब्रू भाषा में इसका अनुवाद हुआ, जो अनुवादों में संभवतः सबसे पुराना है। फिर 16वीं शताब्दी तक यूरोप की अनेक भाषाओं में इसका अनुवाद हो गया।



यूरोप के कई गिरजे पच्चीकारी के सुन्दर चित्रों से सजे हैं।

पच्चीकारी (MOSAIC) : लगभग दो हजार वर्ष पूर्व भी लोग नन्हे-नन्हे रंगीन पत्थरों से पच्चीकारी का काम करते थे तथा चित्र और नमूने बनाते थे। इस प्रकार बनाए गए चित्र और नमूने, मोज़ेक या कुट्टिमचित्र भी कहलाते हैं। एक मोज़ेक में हजारों-लाखों नन्हे टुकड़े हो सकते हैं। उनको किसी प्रकार के मसाले से जोड़ा जाता है और प्रत्येक को बिलकुल ठीक जगह पर बिठाना पड़ता है।

पच्चीकारी का कुछ प्रारंभिक श्रेष्ठतम काम अफ्रीका में हुआ था। अफ्रीकी मोज़ेकों में हंस, मोर और फूल-पत्तों से घिरी वस्तुओं के चित्र थे। उनके रंग बहुत चमकीले थे। कुछ अन्य मोज़ेकों के नमूने ऐसे थे जैसे कोई घना गलीचा बुना हो।

जब इटली में रोमन नगर पोम्पेई की खुदाई की गई तो वहां पच्चीकारी के कुछ बहुत ही सुन्दर नमूने प्राप्त हुए। उनमें युद्ध का एक दृश्य 17 फुट लंबा है। यह तूलिका से निर्मित चित्र जैसा प्रतीत होता है। इसमें लाल, पीले,

मूंगिया, काले और सफेद संगमरमर के टुकड़े लगे हैं।

यूरोप में मध्ययुग में गिरजाघरों के लिए मोज़ेक या पच्चीकारी का काम किया जाता था। कुछ मोज़ेक रंगीन कांच के टुकड़ों से बनाए जाते थे। उनपर प्रकाश पड़ते ही वे मोतियों की तरह चमकने लगते थे।

ताजमहल की दीवारें भी पच्चीकारी से सजाई गई हैं।

परी और परी-कथाएं (FAIRIES AND FAIRY TALES):

परियों के बारे में कौन नहीं जानता और परियों की कहानियां किसने नहीं सुनीं? लेकिन, इस बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता कि परियों की बात शुरू कब, कहां और कैसे हुई। शायद लोगों ने परियों की कल्पना उन रहस्यमय घटनाओं की व्याख्या करने के लिए की होगी जो सामान्यतः उनकी समझ में नहीं आती थीं।

दुनिया के लगभग सभी देशों में परियों की कल्पना पाई जाती है। इन्हें अदृश्य रहनेवाले जीव माना जाता है, जिनके पास जादू की ताकत होती है। परियों की कहानियां सभी देशों में प्रचलित हैं। इन कहानियों में अकसर परियों को शैतान और हंसी-मजाकपसंद दिखाया जाता है।

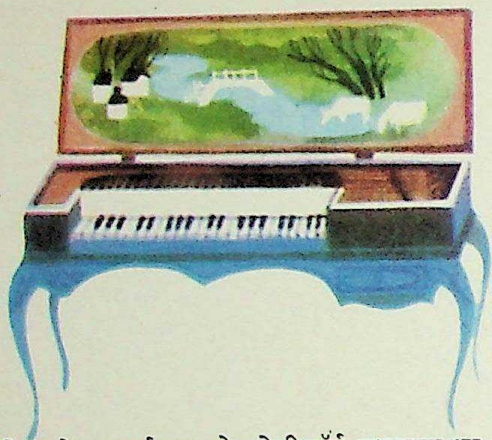
परियों की कहानियों की सबसे पहली किताब सन् 1697 में फ्रांस में प्रकाशित हुई थी। इसमें सिंडरेला नामक एक दुःखी लड़की की कहानियां हैं, जिसके दुःख एक परी की सहायता से दूर होते हैं।

भारत में परियों का प्राचीन नाम 'अप्सरा' है। अप्सराएं बहुत सुन्दर, मनचाहे स्थान पर उड़कर जाने में समर्थ और मायावी मानी जाती हैं। भारतीय पुराणों में मेनका, रंभा, तिलोत्तमा और उर्वशी से संबंधित अनेक कथाएं मिलती हैं। इनका राजा इंद्र है। इंद्र अप्सराओं को भेजकर महान ऋषि-मुनियों की तपस्या भंग करा देता है, ताकि उसका सिंहासन सुरक्षित रहे।

परियों, बौनों और देवों की कहानियां बहुत-कुछ अरबी और फारसी भाषाओं के प्रभाव के कारण प्रचलित हो सकीं। काला देव, लाल परी और सब्ज़ परी आदि की कहानियां एक जमाने में बड़ी लोकप्रिय रही हैं।

(देखें : ऐंडरसन)

पर्सल, हेनरी (HENRY PURCELL 1659-1695) : प्रसिद्ध अंग्रेज़ संगीतज्ञ हेनरी पर्सल बड़े प्रतिभा-सम्पन्न थे। उनके पिता और भाई भी अच्छे संगीतज्ञ थे। पर्सल ने बीस वर्ष की आयु में ही इतनी योग्यता प्राप्त कर ली कि उन्हें वेस्टमिंस्टर ऐबी में वाद्यवादक नियुक्त कर दिया गया। वे शाही स्वागत-समारोहों के लिए भी संगीत-रचना करते थे। उन्होंने गिरजाघर से लेकर नाटकों के गीतों तक का संगीत लिखा। पर्सल का 36 वर्ष की अल्पायु में ही देहांत हो गया। पर्सल को वेस्टमिंस्टर ऐबी में दफनाया गया, जहां दफनाया जाना बड़ा सम्मानप्रद माना जाता है।



पियानो का पूर्वरूप, जो क्लेवीकॉर्ड कहलाता था।

पियानो (PIANO) : हमारे अधिकांश वाद्ययंत्र तीन वर्गों में विभक्त किए जा सकते हैं। तंतुवाद्य, सुषिरवाद्य और तालवाद्य। पियानो इनमें से किसी वर्ग में नहीं आता। यह आंशिक रूप से तंतुवाद्य और आंशिक रूप से तालवाद्य है। पियानो के लम्बे-चौड़े चमकीले लकड़ी के केस में बहुत-से तार होते हैं जो ध्वनिकारी बोर्ड पर कसे होते हैं। कुछ ऐसी लकड़ी की हथौड़ियां-सी होती हैं, जिनके सिरों पर ऊनी कपड़ा बंधा होता है। जब कोई पियानो बजाता है तो ये हथौड़ियां तारों पर गिरती हैं और आवाज पैदा करती हैं।

अच्छे और बड़े पियानो में 88 परदे होते हैं। इनमें से 52 सफेद और 36 काले होते हैं। एक ही परदे से दो स्वर कभी नहीं निकलते। हर पियानो में दो या तीन पैडल (कदमचे) होते हैं। पैडल चलाकर स्वर हलके या तेज किए जा सकते हैं, या देर तक बजाए जा सकते हैं।

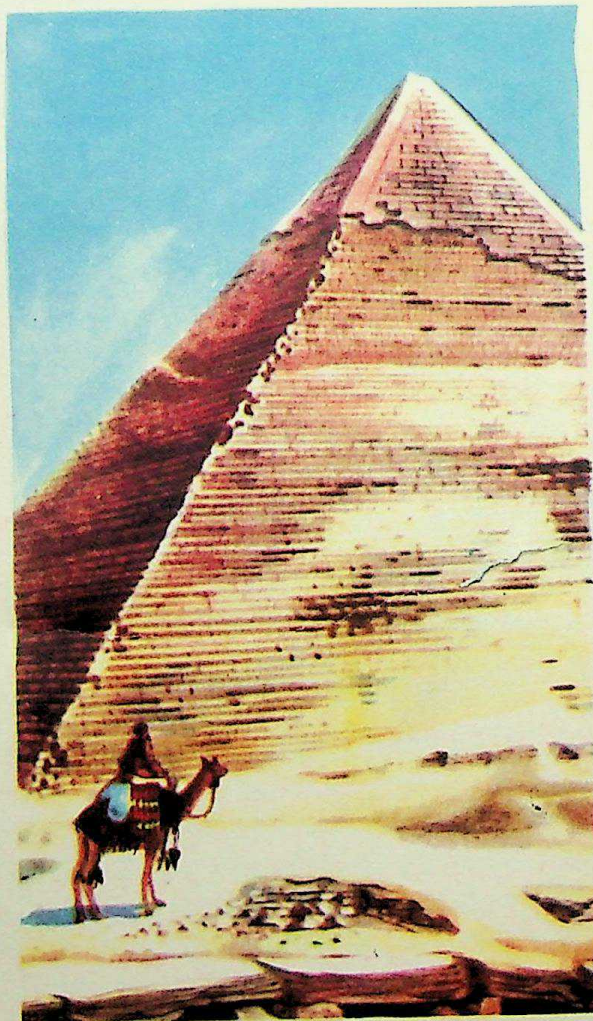
‘पियानो’ इतालवी भाषा का शब्द है। इसका पूरा नाम ‘पियानोफोर्टे’ है। यह नाम इसलिए पड़ा कि यह बाजा मंद और तेज दोनों ही स्वरों में बज सकता है। पियानो पहले ऐसे नहीं थे जैसे आज होते हैं। इनको क्रिस्तोफरी



क्रिस्तोफरी और उसका पियानोफोर्टे

नाम के एक इतालवी ने बहुत विकसित किया है। आज भी पियानो बड़ा अच्छा घरेलू वाद्ययंत्र है।

पिरामिड (PYRAMIDS) : मिस्र में गीजा के लम्बे-चौड़े पठारी मैदान में संसार की वास्तुकला के तीन सबसे बड़िया नमूने हैं। ये हैं तीन बड़े-बड़े पिरामिड। मिस्र में वैसे और भी पिरामिड हैं, लेकिन ये तीन सबसे बड़े हैं। ये पिरामिड लगभग चार हजार वर्ष पुराने हैं। बड़े-बड़े शहर बने और बिगड़े, लेकिन ये पिरामिड ज्यों-के-त्यों खड़े हैं।



गुलामों ने सालों खून-पसीना बहाकर पिरामिड खड़े किए।

एक अरबी कहावत के शब्दों में कहा जाए तो ये “काल पर हंस रहे हैं।” इन बड़े पिरामिडों को नकली पर्वत कहा जा सकता है। सबसे बड़ा और ऊंचा पिरामिड चालीस मंजिली इमारत के बराबर है।

पिरामिड पुराने मिस्री शासकों के मकबरे हैं। मिस्र-वासी पुनर्जन्म में विश्वास करते थे। हर शासक मरने के बाद अपने साथ बहुत-सा खजाना भी दफन करवाने का प्रबंध कर जाता था। उनका कहना था कि इन वस्तुओं का मरने के बाद उनकी आत्मा द्वारा उपयोग किया

जाएगा। पिरामिडों को इतना आलीशान और बड़ा इसलिए बनाया गया था कि लोग यह जान सकें कि मिस्री शासक कितने बलवान और महान थे। पिरामिडों को इसलिए भी इतना बड़ा बनाया जाता था कि उनमें उन शासकों के शव, जिन्हें 'ममी' कहते हैं, तथा उनके लिए रखा जानेवाला सारा साज-सामान समा जाए और हमेशा सुरक्षित रह सके।

पिरामिडों के अन्दर के कमरे बहुत छोटे हैं। दीवारें ठोस पत्थर की हैं। बड़े पिरामिडों को बनाने में दसियों लाख शिलाखंड लगे हैं, जिनमें से हर एक का वजन लगभग दस क्विण्टल है। उस जमाने में इतने वजनी पत्थरों को उठाने के लिए बड़ी-बड़ी मशीनें नहीं थीं। इसलिए यह बड़े आश्चर्य की बात है कि इतने भारी पत्थर दूर-दूर से किस प्रकार लाए गए और फिर इनसे इतने ऊंचे स्तूप कैसे बनाए गए। एक पिरामिड बनाने का अर्थ होता था, हजारों गुलामों की बरसों की मेहनत।

पिरामिडों को देखने से दूसरा आश्चर्य यह होता है कि इन पत्थरों को इतनी कुशलता से जोड़ा गया है कि कहीं भी कोई कसर बाकी नहीं है। नाप-जोख भी बड़ी खरी है। पिरामिड की चारों दीवारों में इंच-भर का भी फर्क नहीं है। मिस्री शासक खूफू का पिरामिड तो संसार के सात आश्चर्यों में से एक माना जाता है।

(देखें : संसार के सात आश्चर्य)

पीसा की मीनार (TOWER OF PISA): इटली के पीसा नगर की सबसे मशहूर चीज उसकी झुकी हुई मीनार है। यह एक घंटाघर है। घंटे इसके सबसे ऊपरी सिरे पर लगे हुए हैं। यह मीनार बहुत सुन्दर है, सफेद संगमरमर की बनी हुई है और देखने में बड़ी भव्य मालूम होती है। लेकिन यह अपनी सुन्दरता के लिए उतनी प्रसिद्ध नहीं है जितनी इस बात के लिए कि देखने पर यह ऐसी लगती है, मानो अभी लुढ़क जाएगी। लेकिन यह 600 वर्षों से ऐसी ही खड़ी है।

इस मीनार के निर्माण में 174 वर्ष लगे थे। पूरी बनने के बहुत पहले ही यह झुकने लगी। इसकी नींव बहुत मजबूत जमीन पर नहीं डाली गई थी। लेकिन इसके झुक जाने के बाद भी, कारीगर इसके ऊपर तब तक तल्ले पर तल्ले जोड़ते गए जब तक इसकी ऊंचाई 179 फुट नहीं हो गई। दूसरे शब्दों में कहें तो यह उतनी ऊंची है जितनी कि एक 15 मंजिली इमारत होगी। पूरी तैयार होने के बाद यह फिर कुछ झुकी थी। कुछ दिन पहले इसकी नींव को काफी मजबूत बना दिया गया। अब इसके और अधिक झुकने की संभावना नहीं है।

अगर यह मीनार तनिक भी और झुकने न पाए तो इसके लुढ़कने का कोई खतरा नहीं है।

इस मीनार के बारे में यह भी कहा जाता है कि गैलि-



पीसा की झुकी हुई मीनार

लियो ने अपने कुछ प्रयोग इसीपर से किए थे। लेकिन यह बात संभवतः सच नहीं है।

पुराणकथाएं और आख्यान (MYTHS AND LEGENDS): प्राचीन काल में लोगों को विज्ञान का अच्छा परिचय नहीं था। वे अपने चारों ओर के विश्व के विषय में प्रायः अंधविश्वासों के शिकार हो जाया करते थे। प्रकृति में दिन-प्रतिदिन घट रही बातों का कोई न कोई मतलब निकालने के लिए वे कहानियां गढ़ लिया करते थे।

जो बातें उनकी समझ से बाहर थीं उनमें एक यह भी थी कि सूर्य आकाश के एक छोर से दूसरे छोर की ओर क्यों जाता है? तथा वर्ष के एक भाग में सूर्य का ताप अधिक क्यों होता है और अन्य भागों में कम क्यों? वे यह समझ बैठे थे कि सूर्य कोई महान शक्तिशाली देवता है और वही वर्ष की ऋतुओं का नियामक है। ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, कथाएं अधिकाधिक जटिल होती चली गईं। विश्व की व्याख्या के निमित्त अनेक देवी-देवताओं की कल्पना कर ली गई।

जब पुस्तकों का लिखा जाना आरंभ नहीं हुआ था तब ये कहानियां अपने मौखिक रूप में ही एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में पहुंचती थीं। इस प्रकार कहानियों की बहुत-सी मूल बातें भूलती चली गईं और उनमें नई-नई बातें जुड़ती चली गईं। ये व्याख्यात्मक कथाएं 'पुराण-कथाएं' कहलाईं।

सभी पुराणकथाएं प्रकृति के संबंध में हों, यह बात नहीं है। उनमें से कुछ का निकट संबंध उन लोगों के धर्म से रहा है जिन्होंने पहले-पहल उनकी रचना की। प्रायः प्रत्येक देश में वहां के वीर पुरुषों और वीरांगनाओं से संबंधित पुराणकथाओं का भी पर्याप्त विकास हुआ।

हमारे लिए भारतीय पुराण साहित्य का विशेष महत्त्व है। 'पुराण' शब्द का अर्थ 'पुराना आख्यान' है। पुराणों की अत्यन्त प्राचीनता के कारण ही उनका यह नाम पड़ा।

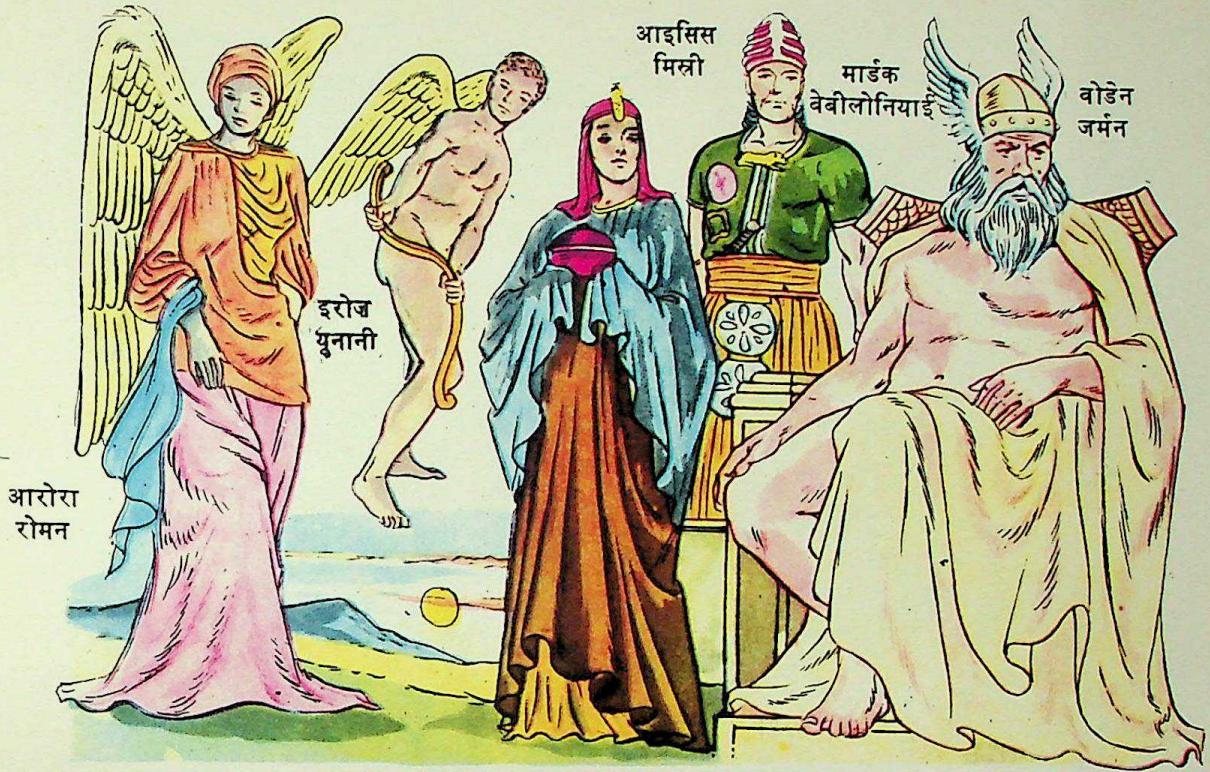
पुराण अठारह हैं। इनमें न केवल कथाओं का ही संग्रह है अपितु वे 'भारतीय ज्ञानकोश' का काम भी देते हैं। उनमें सृष्टि की उत्पत्ति से लेकर प्राचीन राजाओं की वंशावलियों तक का ऐतिहासिक वर्णन है। पुराणों की कथाओं में अतिशयोक्ति का प्रयोग बहुलता से किया गया है, अर्थात् उनमें बात को बढ़ा-चढ़ाकर कहा गया है। पुराणकथाओं में इतिहास और कल्पना का अद्भुत मिश्रण रहता है। कालिदास की प्रसिद्ध रचना 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' की कहानी का आधार भी एक पुराणकथा है जो इस प्रकार है : शकुन्तला स्वर्ग की उर्वशी नामक अप्सरा की पुत्री थी जिसे महर्षि कण्व ने अपने आश्रम में अपनी पुत्री के समान पाला था। एक बार महाराज दुष्यंत शिकार खेलते हुए

उसी आश्रम में जा पहुंचे। शकुन्तला को देखकर वे उस-पर मोहित हो गए। उन्होंने उससे गंधर्व विवाह कर लिया। दुष्यंत ने अपनी यादगार के रूप में अपनी अंगूठी शकुन्तला को दी और कुछ समय पश्चात् उसे लिवा जाने की प्रतिज्ञा करके अपनी राजधानी को लौट गए।

इधर क्रोधी ऋषि दुर्वासा के शाप के कारण महाराज दुष्यंत शकुन्तला को भूल गए, उधर शकुन्तला की अंगूठी नदी में गिर गई जिसे एक मछली ने निगल लिया। समय पाकर शकुन्तला को पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम भरत रखा गया। भरत बड़ा वीर बालक था और सिंह-शावकों के दांत गिना करता था। संयोगवश महाराज दुष्यंत राक्षसों का दमन करके उधर से लौट रहे थे कि उनकी नजर भरत

विभिन्न देशों के पौराणिक देवी-देवता

	हिन्दू	रोमन	ग्रीक	मिस्री	बेबीलोनियाई
परब्रह्म	ब्रह्म	जुपिटर, जूनो	ज़िअस, हेर	रे	मार्डक
विधाता	ब्रह्मा	—	—	प्ता	अनु
आकाश	—	जुपिटर	यूरेनस, ज़िअस	नट	अनु, अंशर
सूर्य	सूर्यदेव	अपोलो	हेलियस	रे	शमश
चन्द्र	चन्द्रदेव	दायना	आर्तेमिस	थोत	सिन
पृथ्वी	पृथ्वीमाता	टैलस	गाएआ	गेब	एन्लिल
वायु	वायुदेव	—	—	शु	एन्लिल
अग्नि	अग्निदेव	वल्कन	हेफ़ेस्टस	—	गिरू
समुद्र	वरुणदेव	नेप्चून	पोज़ीदन	—	—
जल और वर्षा	इन्द्रदेव	जुपिटर	ज़िअस	टेफ़नट	ईआ
प्रकाश	—	अपोलो	अपोलो	—	—
वज्र	इन्द्र	जुपिटर	ज़िअस	—	अदाद
आंधी	वायुदेव	—	एओलस	आमीन	मार्डक
तूफान	वायुदेव	जुपिटर	ज़िअस	—	अदाद
उषा	उषा	आरोरा	इओस	—	—
देवमाता	अदिति	वीनस	आफ़ोदीती	आईसिस	इश्तार
उर्वरता	—	बोना दिआ	रेआ	ओसिरिस	—
फसल	—	सेटर्न	क्रोनोस	—	—
वनस्पति	वनदेवी	सिरीज़	एदोनिस्	ओसिरिस	टामज़
मृत्यु	यमराज	प्लूटो	हेडीज़	ओसिरिस	नर्गल
संगीत व काव्य	सरस्वती	—	अपोलो	थोत	—
बुद्धि और ज्ञान	शारदा	मिनर्वा	एथिना	थोत	नेबो
युद्ध	चण्डीदेवी	मार्स, बेलोना	एरस, एथिना	—	असूर
प्रेम	कामदेव	क्यूपिड	इरोज़	—	—
संदेशहर	नारदमुनि, वायु	मर्क्यूरी	हर्मीज़	—	गूला
आरोग्य	अश्विनी कुमार	अपोलो	अपोलो	—	—
आखेट	—	दायना	आर्तेमिस	—	—
वारुणी (सुरा)	—	लाइबर	दायोनिस्स	—	—
अलौकिक शिल्पी	विश्वकर्मा	वल्कन	हेफ़ेस्टस	—	—



पर पड़ी। उसे देखकर उन्हें शकुन्तला के साथ अपने विवाह की याद हो आई। वे अपने पुत्र तथा पत्नी को अपने साथ लिवा ले गए और अपनी राजधानी में सुख से रहने लगे। आगे चलकर इसी भरत के नाम पर हमारे देश का नाम भारत पड़ा।

रोम और यूनान की पौराणिक कहानियां भी प्रसिद्ध हैं। ब्रिटेन में सबसे प्रसिद्ध पौराणिक कहानी राजा आर्थर और उसकी गोल मेज़ के दरबारी वीरों की कहानी है। रॉबिन हुड नामक उस लुटेरे की कहानी भी अत्यन्त प्रसिद्ध है जिसने लुटेरों का एक दल बना लिया था और जिसका काम था अमीरों को लूटना तथा गरीबों की मदद करना। ऐसी ही दूसरी कहानी विलियम टेल नामक एक लोक-नायक की कहानी है।

पौराणिक कथाओं के आधार बहुधा ऐतिहासिक होते हैं। किंतु उनमें कल्पना और आलंकारिक भाषा का प्रयोग इतना अधिक होता है कि तथ्य और कल्पना में भेद करना असंभव हो जाता है। कुछ भी हो, हमारा मतलब कहानियों से है और पुराणों में हमें रोचक और शिक्षाप्रद कहानियां मिल जाती हैं।

(देखें : यूनानी पुराणकथाएं; नूह की नाव)

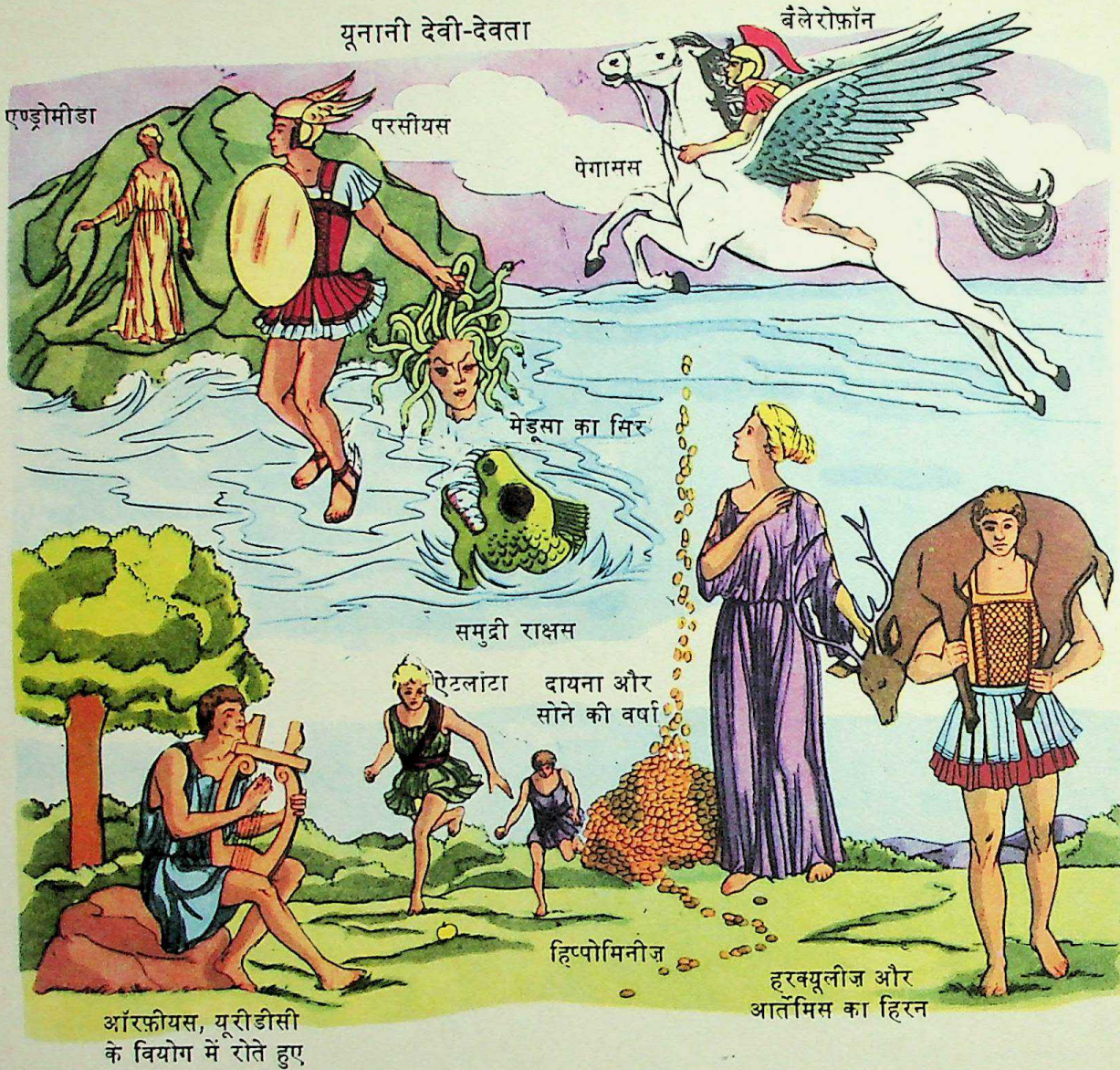
पुराणकथाएं, यूनानी (GREEK MYTHS) : यूनानी पुराणकथाओं के अनुसार, आदिकाल में दुनिया में केवल एक स्त्री थी। उसका नाम पेण्डोरा था। पेण्डोरा को देवताओं ने अपने निवासस्थान—ओलम्पस पर्वत से एपी-

मेथियस की पत्नी बनाकर भेजा था। पेण्डोरा को चलते समय देवताओं के राजा जिअस ने एक सोने का डिब्बा दिया और कहा कि वह उस डिब्बे को कभी न खोले।

कुछ समय तक तो पेण्डोरा ने आज्ञा का पालन किया। एक दिन कुतूहलवश उसने डिब्बे को ज़रा-सा खोलकर उसमें झांका। डिब्बे का ढक्कन हटते ही उसमें से तरह-तरह की बीमारियों के कीड़े बाहर निकलने लगे और तमाम लोगों पर बरसने लगे। उससे पहले दुनिया में कहीं कोई बीमारी, कष्ट या दुःख न था। पेण्डोरा अपने किए पर पछता रही थी। उसने एक बार फिर डिब्बे के अन्दर झांका। वहां एक चमकता हुआ रत्न था। यह रत्न आशा का प्रतीक था।

हमारे यहां पुराणों में जैसी कथाएं हैं, वैसी ही ये कथाएं भी हैं। भारत में जिस तरह पुराणों की कथाएं धर्म से जुड़ी रहती हैं, उसी तरह यूनानी पौराणिक कथाएं भी धर्म से संबद्ध हैं। इन सबमें यूनानी देवी-देवता कथाओं के पात्र हैं। कुछ अन्य यूनानी कथाएं इस प्रकार हैं : बैलेरोफ़ॉन नामक युवक को देवताओं की सहायता से म्यूजेज़ का पंखों वाला घोड़ा पेगासस मिल गया। युवक सवार ने उस घोड़े पर चढ़कर वीरता के बहुत-से काम किए। लेकिन जब उसने ओलम्पस पर्वत पर चढ़ने की कोशिश की तो घोड़े ने उसे गिरा दिया। पेगासस अकेला देवताओं की नगरी में वापस आ गया।

माइनोटॉर नाम का एक राक्षस बड़ा भयानक था। वह साल में सात यूनानी युवकों और सात कुमारियों को



खा जाता था। अंत में उसे थिसियस ने मारा।

एक बार प्रसिद्ध वीणावादक ऑरफ़ीयस की पत्नी यूरीडीसी मर गई। देवताओं ने ऑरफ़ीयस को अपनी पत्नी को हेडीज़ (नरक) से वापस लाने की अनुमति दे दी। लेकिन ऑरफ़ीयस ने देवताओं की यह आज्ञा नहीं मानी कि वह हेडीज़ से लौटते समय पीछे मुड़कर न देखे। ज्योंही उसने यह देखने के लिए मुंह मोड़ा कि यूरीडीसी पीछे-पीछे आ रही है या नहीं, यूरीडीसी हमेशा के लिए गायब हो गई।

इकारस ने मोम के पंख लगा रखे थे। उसके पिता ने कह रखा था कि वह ऊंचा उड़कर सूरज के अधिक पास न जाए। इकारस ने कहना नहीं माना। सूरज के पास पहुंचते ही उसके पंखों का मोम गल गया और वह समुद्र में गिरकर डूब गया।

परसीयस बड़ा वीर था। उसने गॉरगन मेडूसा का सिर काटा था। मेडूसा जिसको देखता था वही पत्थर हो

जाता था। परसीयस ने राजकुमारी एण्ड्रोमीडा को भी समुद्री राक्षस से बचाया था।

एक यूनानी शिल्पी अपनी बनाई हुई एक महिला की मूर्ति से अत्यधिक प्रेम करने लगा। देवताओं को उसपर दया आ गई और उन्होंने मूर्ति में जान डाल दी। उस शिल्पी का नाम पिगमेलियन था।

हरक्यूलीज़ बड़ा वीर था। उसे बारह कठोर परीक्षाएं देनी पड़ीं। इनमें एक परीक्षा यह भी थी कि वह शिकार की देवी आर्तमिस का हिरन पकड़कर लाए। एक बरस दिन-रात दौड़कर हरक्यूलीज़ ने उस हिरन को पकड़ा।

हिप्पोमिनीज़ ने बड़ी चतुराई से दौड़ में देवी एटलांटा को हरा दिया और उससे शादी कर ली।

(देखें : अंब्रोज़िया; अकिलीज़; अमेज़न; मिदास)

पुस्तक और जिल्दसाज़ी (BOOKS AND BOOK-BINDING) : सबसे प्राचीन पुस्तकें मिस्र में तैयार हुईं।

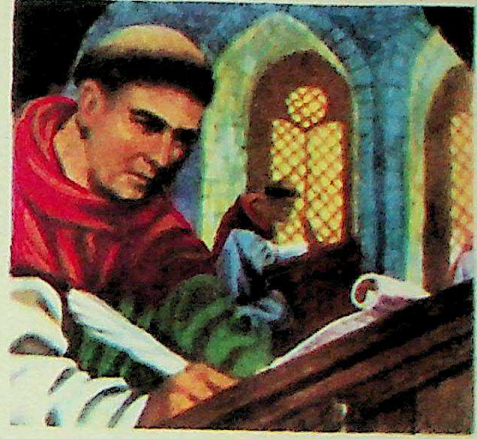
यह 5,000 वर्ष से भी पहले की बात है। मिस्र की प्राचीन पुस्तकें पैपाइरस नामक एक प्रकार के सरकंडे से बने कागज पर लिखी गई थीं।

प्राचीन पुस्तकें आधुनिक पुस्तकों की भांति बंधी हुई और जिल्ददार नहीं होती थीं। होता यह था कि पैपाइरस के टुकड़े या 'पन्ने' एक-दूसरे के साथ चिपका दिए जाते थे और इस तरह एक लम्बी पट्टी बन जाती थी। इस प्रकार की कुछ पट्टियाँ 144 फुट तक लम्बी होती थीं। पट्टी का एक सिरा लकड़ी या हड्डी की किसी छड़ी पर चिपका दिया जाता था। इसके बाद दूसरा सिरा इसी प्रकार की दूसरी छड़ी पर लपेट दिया जाता था। इस तरह पुस्तक तैयार हो जाती थी, जिसे खोलते जाते थे और पढ़कर लपेटते जाते थे। इस प्रकार लिपटी हुई पुस्तक को 'स्करोल' कहते हैं। स्करोल को दोनों हाथों से पकड़ना पड़ता था। पुस्तक को डोरियों या तागों से बांधा जाता था और उन्हें लम्बे गोल डिब्बों में रखकर एक जगह से दूसरी जगह ले जाया जाता था।

भारत में भोजपत्र पर पुस्तकें लिखी जाती थीं। भोजपत्र भूर्ज वृक्ष की छाल को कहते हैं। इसके आयताकार पृष्ठों को बीच में से छेद करके माला की तरह पिरोया जाता था। भोजपत्र की पोथियों को बांधकर और कपड़े के बस्तों में लपेटकर रखा जाता था।

आवरण या 'कवर' के भीतर बंधे हुए पृष्ठों वाली पहली पुस्तक पार्चमेंट या चर्मपत्र पर लिखी हुई थी। पार्चमेंट जानवरों की खाल से बनाया जाता था। वेलम नामक एक प्रकार का पार्चमेंट मेमनों या बछड़ों की खाल से बनाया जाता था। आम तौर से पार्चमेंट मामूली कागज से ज्यादा मोटा नहीं होता था।

प्राचीन काल में सभी प्रकार की पुस्तकें, चाहे वे पैपाइ-प्राचीन लिपटी हुई पुस्तकें 100 फुट तक लम्बी होती थीं।



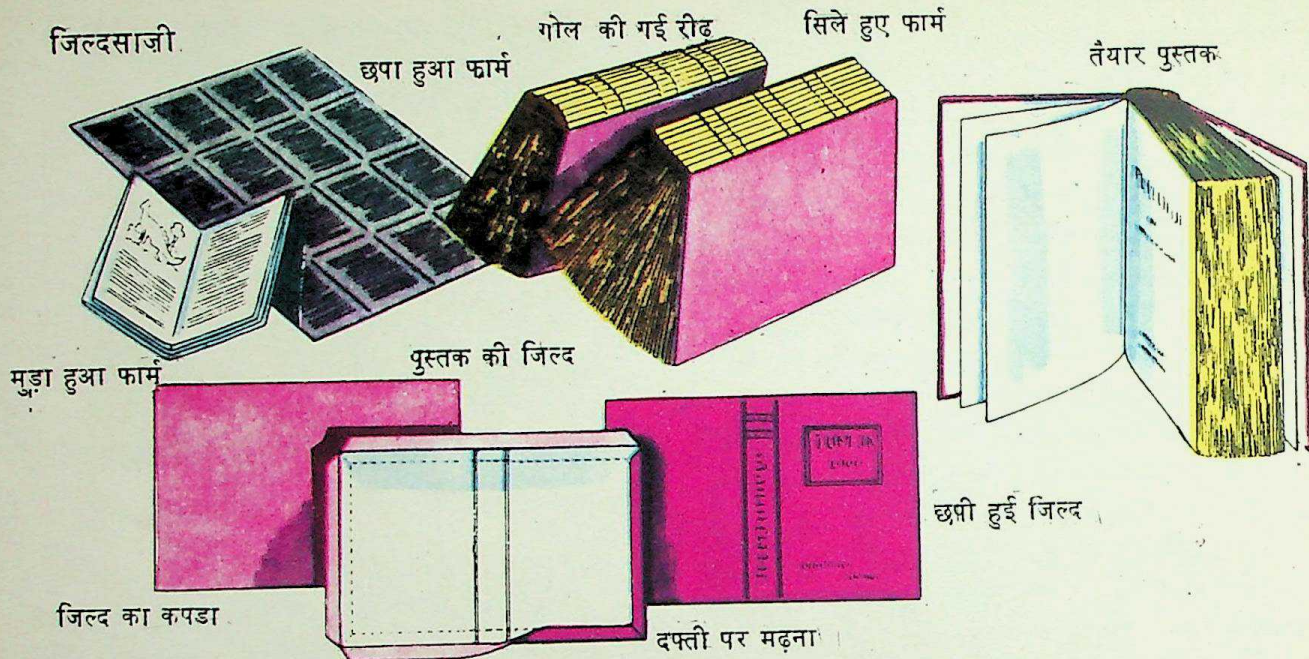
संन्यासी हाथ से पुस्तकों की नकल तैयार करते थे।

रस और भोजपत्र से बनी हों, चाहे पार्चमेंट या चर्मपत्र से, लिखी हाथ से ही जाती थीं। किसी पुस्तक की दूसरी प्रति या कापी की आवश्यकता होने पर हाथ से नकल करने के अलावा और कोई चारा नहीं था। रोम में पुस्तकों की नकल तैयार कराने का काम दासों से कराया जाता था।

यूरोप में मध्ययुग में पुस्तकों की नकल तैयार करने का काम ईसाई संन्यासियों द्वारा किया जाता था। किसी एक पुस्तक की नकल करने में महीनों और कभी-कभी तो वर्षों का समय लग जाता था। नकल करनेवाले नकल तैयार करने के साथ ही पुस्तक के पृष्ठों को चित्रों आदि से सजाया भी करते थे। पहले अक्षरों को आम तौर से सुन्दर रंगों से रंगने का भी रिवाज था। कभी-कभी पहले अक्षरों को सोने के तबक से भी बनाया जाता था।

जब तक पुस्तकें भोजपत्र और चर्मपत्र पर हाथ से लिखी जाती थीं तब तक उनके अधिक संख्या में या सस्ते मूल्य में उपलब्ध होने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता था। तब पुस्तकें बहुत महंगी थीं और आसानी से प्राप्त नहीं होती थीं। लेकिन बाद में कागज और छपाई की कला के आविष्कार ने इस स्थिति में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया। कागज चर्मपत्र और भोजपत्र से कहीं अधिक सस्ता था, और छपाई की कला ने किसी पुस्तक की अधिक से अधिक नकलें तैयार करना संभव बना दिया।

शुरु में लोगों ने छपी हुई पुस्तकों का मज़ाक बनाया। लोग इस बात पर गर्व करते थे कि उनके पास काफी बड़ी संख्या में हाथ से लिखी पुस्तकें हैं। 500 साल पहले पुस्तकों के एक प्रसिद्ध संग्रहकर्ता ने बड़े गर्व से एक बार कहा था कि मेरे पास सारी पुस्तकें 'कलम से लिखी हुई' हैं। वह अपने पुस्तकालय में छपी हुई पुस्तकें रखना लज्जा की बात मानता था। लेकिन धीरे-धीरे छपी हुई पुस्तकों की लोकप्रियता बढ़ती गई और यूरोप के कई नगरों में छापाखाने खुल गए। आरंभ की छपी हुई छोटी और सुन्दर



पुस्तकें 'क्रेडल बुक्स' कहलाती हैं। इनमें से कुछ तो इतनी सुन्दर थीं कि आज तक उनकी बराबरी नहीं हो सकी है। उस युग में छपी हुई पुस्तकों को भी कभी-कभी हाथ से चित्रित करके सजाया जाता था।

'क्रेडल बुक्स' में सबसे अधिक प्रसिद्ध हैं गूतेनबर्ग की बाइबिलें। गूतेनबर्ग को आम तौर से टाइप से होनेवाली छपाई का आविष्कारक माना जाता है। बहुत लम्बे समय तक लोग यह मानते रहे कि गूतेनबर्ग बाइबिलें स्वयं गूतेनबर्ग द्वारा छपी गई थीं। लेकिन अब ऐसा माना जाता है कि उन्हें छापनेवाला शोफर नाम का एक मुद्रक था। अंग्रेजी भाषा में पहली पुस्तक विलियम कैक्सटन नामक एक मुद्रक ने सन् 1474 में छपी थी।

गूतेनबर्ग, शोफर और कैक्सटन जैसे आरंभिक मुद्रक यदि किसी आधुनिक छापाखाने या प्रेस को देखें तो उनके आश्चर्य की सीमा नहीं रहेगी। आज मुद्रण-कला ने बहुत अधिक उन्नति की है। छपाई के अलावा पुस्तक को तैयार करने का सारा काम, जैसे फार्मों को मोड़ना, काटना, सीना, चिपकाना और जिल्दबंदी करना आदि मशीनों की सहायता से होता है।

अब पुराने जमाने की तरह पुस्तकों का एक-एक पृष्ठ अलग से नहीं छपता। कई पृष्ठों को एकसाथ एक 'फार्म' के रूप में छाप लिया जाता है। बाद में पृष्ठ-संख्या के अनुसार फार्मों को मोड़ लिया जाता है। अधिक फार्मों वाली पुस्तकें मोटी होती हैं और कम फार्मों वाली पतली होती हैं। फार्मों की सिलाई या जुड़बंदी हाथ से अथवा मशीन से की जाती है। तार से भी पुस्तकें सी जाती हैं। सिलाई के बाद पुस्तकों को मशीन से एक आकार में काट लिया जाता है। फिर जिल्द चढ़ाई जाती है। जिल्द-साजी का काम करनेवाले 'बुकबाइंडर' कहलाते हैं।

जिल्दसाजी के बड़े-बड़े कारखानों में लगभग सारा काम मशीनों से किया जाता है।

मोटी पुस्तकों पर जिल्द चढ़ाने के पहले उनकी रीढ़ या 'पोट' को पीटकर गोल कर लिया जाता है। इस काम को चूल बैठाना कहते हैं। जिल्द अलग से तैयार की जाती है। अगर पुस्तक पर कपड़े की जिल्द चढ़ानी होती है तो पहले कपड़े के पुस्तक के आकार के टुकड़े काट लिए जाते हैं। इसके बाद कपड़े को दफती के टुकड़ों पर चिपकाया जाता है।

जब जिल्द तैयार हो जाती है तो उसे पुस्तक पर बैठाया जाता है। यह काम बहुत सावधानी से किया जाता है, क्योंकि पुस्तक की सुन्दरता बहुत-कुछ उसकी जिल्द पर निर्भर करती है। जिल्द चढ़ाने के बाद पुस्तकों को बंडलों में बांधकर विक्रेताओं के पास भेज दिया जाता है।

आजकल मशीनों से किया जानेवाला बहुत-सा काम गूतेनबर्ग, शोफर और कैक्सटन के जमाने में हाथ से किया जाता था। 'सचित्र विश्वकोश' भी एक बड़े आधुनिक प्रेस में छपा है। इसके रंगीन चित्र भी वहीं छपे हैं। लेकिन पुराने मुद्रकों को इन चित्रों को हाथ से रंगवाना पड़ता था। इस प्रकार पुस्तकों ने प्राचीन मिस्र की पैपाइरसपट्टियों से लेकर आज तक एक काफी लम्बी यात्रा पूरी की है।

पुस्तकालय (LIBRARIES) : पुस्तकालयों का प्रचलन लगभग तभी से रहा है जब से पुस्तकों का बनना शुरू हुआ। सबसे प्राचीन पुस्तकालय, जिसका आज हमें ज्ञान है, असीरिया में था। यह वहां के सम्राट का था। इसमें रखी हुई पुस्तकें हमारी पुस्तकों जैसी नहीं थीं। ये मिट्टी की चौकोर पट्टियां थीं जिनपर कीलक लिपि में लिखावट

की गई थी। इस पुस्तकालय में इस तरह की 20,000 पट्टियां थीं।

प्राचीन काल का दूसरा प्रसिद्ध पुस्तकालय मिस्र के सिकन्दरिया नगर में था। इसकी शुरुआत सिकन्दर महान के कुछ समय बाद ही हुई थी। इस पुस्तकालय की पुस्तकें लिपटी रहती थीं। ये पुस्तकें पैपाइरस पर हाथ से लिखी जाती थीं, फिर इन्हें लपेट कर खोल में बन्द किया जाता था।

मध्ययुग में भी पुस्तकें हाथ से लिखी जाती रहीं। इन्हें चर्मपत्र पर लिखकर जिल्द में बांध दिया जाता था। एक पुस्तक की नकल करने में महीनों का समय लग जाता था। पुस्तकें तब बहुत महंगी थीं। मध्ययुग के पुस्तकालयों में अक्सर पुस्तकों को एक जंजीर से बांधकर पुस्तकालय की आलमारियों में फंसाकर रखा जाता था।

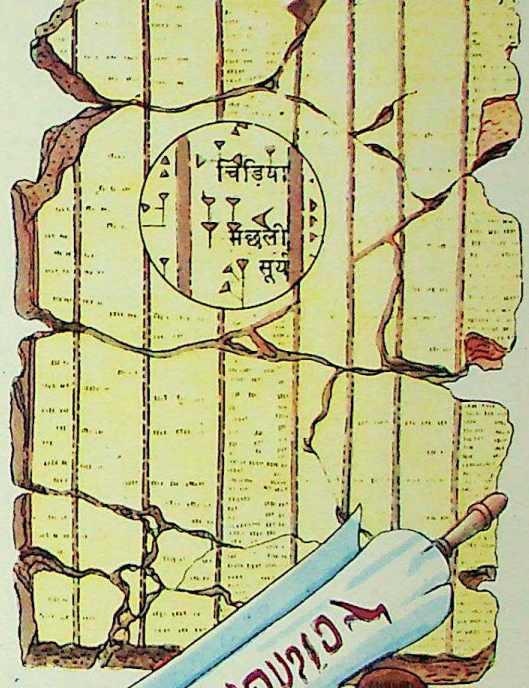
आजकल एक पुस्तक की हजारों प्रतियां थोड़े समय में ही छप सकती हैं। एक पुस्तकालय में बहुत आसानी से तमाम पुस्तकों का संग्रह किया जा सकता है। आज किताबों को जंजीरों से बांधकर नहीं रखा जाता। आज तो लोग पुस्तकालयों से पुस्तकें घर पढ़ने को भी ले जाते हैं।

दुनिया में कुछ बहुत प्रसिद्ध पुस्तकालय हैं। इनमें सबसे बड़ा पुस्तकालय संभवतः लन्दन का ब्रिटिश म्यूजियम पुस्तकालय है, जहां करोड़ों ग्रंथ और पांडुलिपियां सुरक्षित हैं। कुछ अन्य प्रसिद्ध पुस्तकालयों में पेरिस का 'बिब्लिआथिक नेशनेल' पुस्तकालय, वाशिंगटन का 'कांग्रेस पुस्तकालय', और रोम का 'वैटिकन पुस्तकालय' उल्लेखनीय हैं।

भारत का राष्ट्रीय पुस्तकालय कलकत्ते में है। इसके अतिरिक्त बम्बई में केन्द्रीय पुस्तकालय और मद्रास में कोनेमारा सार्वजनिक पुस्तकालय भी हैं, जिनकी व्यवस्था राष्ट्रीय स्तर पर की जाती है और जहां भारत में प्रकाशित हर पुस्तक की एक प्रति अनिवार्य रूप से भेजी जाती है।

आज लगभग विश्व के हर देश का अपना एक राष्ट्रीय पुस्तकालय है।

मिट्टी का असीरियाई शब्दकोश (आवधित स्थल)



पैपाइरस स्कूल

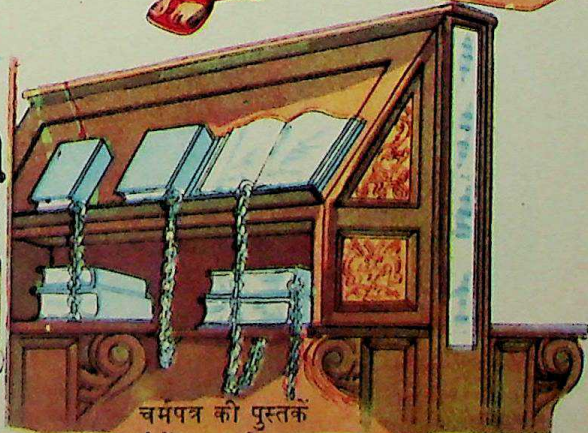


स्कूल को पढ़ने का ढंग

चलता-फिरता पुस्तकालय



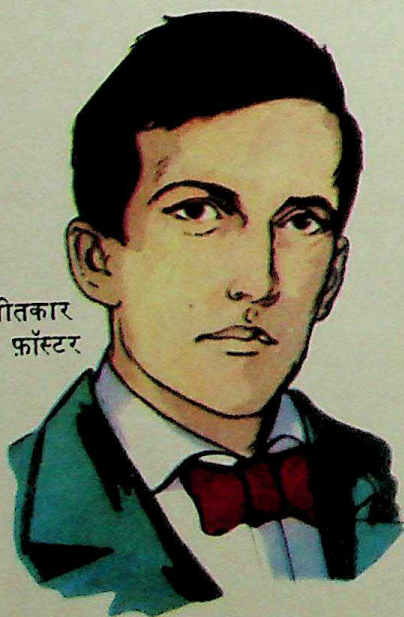
चर्मपत्र की पुस्तकें फ्लोरेंस, इटली, 1751



पैपाइरस (PAPYRUS): प्राचीन काल में मिस्र तथा कुछ अन्य देशों में लिखने के लिए पैपाइरस नामक एक वस्तु का बहुत अधिक प्रयोग होता था। पैपाइरस को एक प्रकार का प्राचीन कागज माना जा सकता है। यह पैपाइरस नाम के एक पौधे के गूदे से बनाया जाता था जो नील नदी के किनारे बहुतायत से पाया जाता था। पैपाइरस के कुछ पौधे अब भी वहां मिलते हैं।

पैपाइरस की डंडी में एक प्रकार का गूदा होता है। प्राचीन काल में कागज बनाने के लिए इस गूदे को पट्टियों के रूप में काट लिया जाता था। फिर इन पट्टियों की दो तहें लगाई जाती थीं—एक सीधी और दूसरी आड़ी। इन तहों को एक प्रकार के गोंद से चिपका दिया जाता था। इस प्रकार तहों को आपस में अच्छी तरह जमाकर लम्बे-चौड़े ताव बना लिए जाते थे। तावों को सुखाने के बाद उन्हें किसी चिकनी कौड़ी या हड्डी अथवा हाथीदांत के टुकड़े से रगड़-रगड़कर चिकना किया जाता था। इन्हीं चिकने तावों पर लिखा जाता था।

पैपाइरस के तावों को मिलाकर पुस्तकें बनाई जाती थीं, लेकिन ये पुस्तकें हमारी आज की पुस्तकों जैसी नहीं होती थीं। पैपाइरस के तावों को एक-दूसरे के साथ चिपकाकर एक बहुत लम्बी पट्टी बना ली जाती थी। इस पट्टी के एक सिरे पर लकड़ी या हाथीदांत की छड़ बांध दी जाती थी और पूरी पट्टी को छड़ पर लपेट लिया जाता था। ग्राम तौर से इसी प्रकार की एक छड़ पट्टी के दूसरे सिरे पर भी बांधी जाती थी। मिस्र में मिली इस प्रकार की कुछ पैपाइरस पुस्तकें 150 फुट तक लम्बी हैं।



अमरीकी गीतकार
स्टेफ़ेन सी० फ़ॉस्टर

फ़ॉस्टर, स्टेफ़ेन सी० (STEPHEN C. FOSTER 1826-1864): अमरीका के इस प्रसिद्ध गीतकार ने कई लोकप्रिय

गीतों की रचना की है, जो आज भी प्रचलित हैं। स्टेफ़ेन फ़ॉस्टर के गीतों की हजारों प्रतियां बिक चुकी हैं। उन्होंने निर्धनता और कष्ट का जीवन बिताया और केवल 38 वर्ष की आयु में ही उनकी मृत्यु हो गई। अमरीका में कई स्थानों पर उनके स्मारक बने हुए हैं।

फिल्म, भारतीय (INDIAN FILMS): फिल्मों की दृष्टि से भारत का विश्व में दूसरा स्थान है। भारत में हर साल 300 से अधिक कथाचित्र (फीचर-फिल्में) और बहुत-से समाचार-चित्र बनते हैं। देश में लगभग 70 स्टूडियो, डेढ़ हजार वितरण संस्थाएं और साढ़े चार हजार सिनेमाघर हैं।

हमारे देश में पहला मूक चित्र 1913 में दादा फालके ने बनाया, जिसका नाम 'राजा हरिश्चन्द्र' था। 1925 तक बम्बई, कोल्हापुर, मद्रास, कलकत्ता और लाहौर में फिल्मों का निर्माण होने लगा। ये फिल्में अधिकतर पौराणिक कथाओं पर आधारित होती थीं। तभी हिमांशुराय ने बुद्ध के जीवन पर 'लाइट ऑव एशिया' फिल्म बनाई। इसकी विदेशों में बड़ी सिराहना हुई।

1931 में 'आलमआरा' से भारत में बोलती फिल्मों का युग शुरू हुआ। शुरू-शुरू में फिल्मों में आवाज दोषपूर्ण होती थी। आवाज भरने के लिए फिल्म भी प्रयोग में लाई जाती थी और रिकार्ड भी। किन्तु पहला शत-प्रतिशत 'टॉकी' प्रभात कंपनी का 'जलती निशानी' ही कहा जा सकता है।

1934 से पहले की फिल्में पारसी कंपनियों के नाटक-जैसी ही लगती थीं। उनमें कला कम और शोर अधिक होता था। 1934-35 में देवकी बोस का 'पूरनभक्त', शांताराम का 'अमृतमंथन' और बरुआ का 'देवदास' जैसे कलात्मक चित्र बने। इनमें फिल्म-कला थियेटर के प्रभाव से पहली बार मुक्त हुई थी और नेपथ्य संगीत, क्लोज़-अप आदि का सफलतापूर्वक प्रयोग किया गया था। इस तरह 1936 तक भारतीय फिल्म-कला अच्छी तरह विकसित हो गई। इसके बाद न्यू थियेटर्स, प्रभात, बाम्बे टाकीज, मिनर्वा मूवीटोन आदि कंपनियों ने एक से एक भव्य, नये संदेश वाले और कलापूर्ण चित्र बनाए। बंगला में साहित्यिक कृतियों पर अनेक सुन्दर चित्र बने। 1937 से बंगाल में बाल-फिल्में बनाने का प्रयास भी शुरू हुआ। 1942 से सिनेमाघरों में फीचर-फिल्मों के साथ प्रचार-फिल्में भी दिखाई जाने लगीं।

द्वितीय महायुद्ध के आखिरी वर्षों में फिल्मों की बढ़ती हुई लोकप्रियता को देखकर बहुत-से व्यापारी फिल्म-व्यवसाय में आ गए। इस तरह बम्बई फिल्म-निर्माण का सबसे बड़ा केन्द्र हो गया। फिल्मों की संख्या बहुत बढ़ गई। फोटोग्राफी तथा अन्य टेकनीक का खूब विकास हुआ। फिल्मों के लिए बड़े-बड़े शानदार सेट और अद्भुत

दृश्यों की रचना होने लगी। लेकिन बम्बई की फिल्मों, बाह्य आडंबर के बावजूद, कथानक और निर्देशन में कमजोर पड़ती गई। अच्छी फिल्मों का अनुपात दिन-ब-दिन गिरने लगा।

उधर बंगाल में फिल्म-कला का खूब विकास हुआ। भारतीय जीवन को उसके वास्तविक रूप में चित्रित किया गया। आधुनिक समस्याओं पर फिल्में बनाई गईं।

स्वतन्त्रता के बाद केन्द्रीय सरकार ने फिल्म-उद्योग की ओर ध्यान दिया। फिल्म डिवीजन की स्थापना की गई और समाचार-फिल्में बननी शुरू हुईं। एक फिल्म जांच कमेटी नियुक्त की गई, जिसकी रिपोर्ट 1951 में प्रकाशित हुई। 1952 में भारत में पहला अंतर्राष्ट्रीय फिल्म-समारोह हुआ। इसमें दिखाई गई उच्च कोटि की विदेशी फिल्मों से भारतीय फिल्म-निर्देशकों को बड़ी प्रेरणा मिली। उसी साल भारत में पहली टेक्नीकलर फिल्म और पहली गेवाकलर फिल्म बनी। 1954 से भारत सरकार ने राज्य फिल्म-पुरस्कार देने शुरू किए। बाद में, वर्ष की श्रेष्ठ फिल्मों के निर्माताओं और निर्देशकों को धन भी पुरस्कार में दिया जाने लगा।

1954 और 1956 में रूस में तथा 1955 में चीन में भारतीय फिल्म समारोह हुए। 1955 में बाल-फिल्में बनाने के लिए बाल-फिल्म समिति स्थापित की गई। उसी साल सत्यजित रे के 'पथेर पांचाली' चित्र का प्रदर्शन भी एक कभी न भूलनेवाली घटना थी। इस चित्र को कई अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार मिले। सत्यजित रे तब से कितने ही उच्च कोटि के चित्र बना चुके हैं और अनेक अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार जीत चुके हैं।

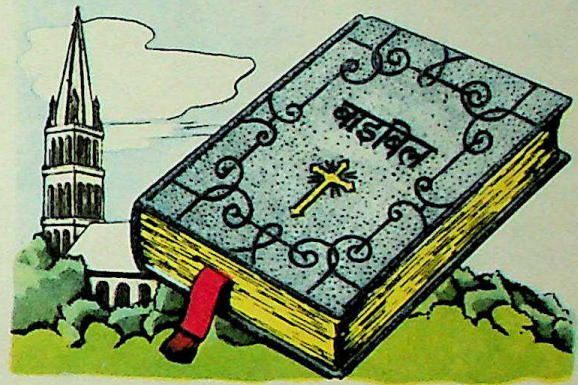
1959 में भारत में पहली सिनेमास्कोप फिल्म बनी। 1961 में पूना में निर्देशन, छवि-आलेखन, छाया तथा पटकथालेखन आदि की शिक्षा के लिए फिल्म इंस्टीट्यूट ऑफ इंडिया की स्थापना की गई।

बनियन, जॉन (JOHN BUNYAN 1628-1688): 'द पिलग्रिम्स प्रॉग्रेस' नामक विख्यात पुस्तक के लेखक बनियन को अपने जीवन का बहुत बड़ा भाग जेल में काटना पड़ा। वे बैप्टिस्ट चर्च के अनुयायी थे और इसलिए इंग्लैंड में स्थापित इंग्लिश चर्च के कट्टर विरोधी थे। जब इंग्लैंड में गृहयुद्ध छिड़ा, तो वे प्यूरिटन सम्प्रदाय की ओर से लड़े, और फिर जब सन् 1660 में पुनः राजसत्ता स्थापित हुई, और चार्ल्स द्वितीय गद्दी पर बैठा, तो बनियन को जेल में डाल दिया गया।

'द पिलग्रिम्स प्रॉग्रेस' में जीवन को एक तीर्थयात्रा के रूप में दिखाया गया है, जिसका लक्ष्य स्वर्गलोक है। इसकी रचना बनियन ने तब प्रारंभ की जब वे दूसरी बार जेल में थे। उस समय उनकी अवस्था 43 वर्ष की थी। जेल से छूटने के बाद वे वेडफोर्ड में बैप्टिस्ट पादरी बने।

बाइबिल (BIBLE): ईसाइयों की धर्म-पुस्तक को बाइबिल या इंजील कहते हैं। बाइबिल को असल में एक पुस्तक कहना गलत होगा—यह कई पुस्तकों का संग्रह है। इन पुस्तकों में से कुछ इंजील के पुराने धर्म-नियम या 'ओल्ड टेस्टामेंट' में संकलित हैं और कुछ नये धर्म-नियम या 'न्यू टेस्टामेंट' में। हर पुस्तक अनेक अध्यायों में बंटी है। बाइबिल के दो संस्करण प्रचलित हैं—अधिकृत संस्करण और संशोधित संस्करण।

'ओल्ड टेस्टामेंट' बाइबिल का पहला खंड है और इसे केवल ईसाई ही नहीं, यहूदी भी पवित्र मानते हैं। इसमें यहूदी जाति का आरंभिक इतिहास और यहूदी



पैगंबरों के उपदेश संकलित हैं। इसके पहले अध्याय में उत्पत्ति या सृष्टि के आरंभ (जेनेसिस) का वर्णन किया गया है। ईसाई, मुसलमान तथा यहूदी लोग सृष्टि के आरंभ के इसी वर्णन को प्रामाणिक मानते हैं। हिन्दू धर्म-ग्रन्थों में इसकी और कथा दी गई है। आधुनिक विज्ञान में तो सृष्टि के आरंभ की जो व्याख्या है, वह इससे बिलकुल ही भिन्न है।

'न्यू टेस्टामेंट' में ईसा मसीह और उनके अनुयायियों की कथा दी गई है। इसमें ईसा के उपदेश भी संकलित हैं और ईसाई धर्म तथा चर्च के आरंभ का हाल भी दिया गया है।

'ओल्ड टेस्टामेंट' का अधिकांश हीब्रू भाषा में लिखा गया था और कुछ भाग अरामाईक भाषा में। 'न्यू टेस्टामेंट' लिखा ही ग्रीक भाषा में गया था। कोई 1500 वर्ष पहले पूरी बाइबिल का लैटिन भाषा में अनुवाद हुआ। अब तो इसका संसार की लगभग हर भाषा में अनुवाद हो चुका है। अंग्रेजी में इसका पहला संपूर्ण अनुवाद 1382 में हुआ था और हिन्दी-अनुवाद उन्नीसवीं सदी में।

बाइबिल केवल इसीलिए पठनीय नहीं है कि यह ईसाइयों की धर्म-पुस्तक है। इसमें कितनी ही सुन्दर कहानियाँ, कविताएँ और गीत भी संकलित हैं। इसका साहित्यिक महत्त्व भी बहुत अधिक है।

(देखें : बाइबिल की कहानियाँ)



चरवाहे का बेटा दाऊद यहूदियों का राजा बना ।

बाइबिल की कहानियां (BIBLE STORIES) : बाइबिल में कितनी ही सुन्दर तथा शिक्षाप्रद कहानियां हैं । उनमें से कुछ नीचे दी जा रही हैं :

यूसुफ़ और उसके भाई : यूसुफ़ (जोज़ेफ़) याकूब (जैकब) का बेटा था । यूसुफ़ से बड़े दस भाई और थे । वे सभी उससे जलते थे, क्योंकि यूसुफ़ ही अपने पिता का सबसे प्यारा बेटा था । यूसुफ़ के भाई उससे छुटकारा पाना चाहते थे । इसलिए उन्होंने उसे आखिर मिस्र की तरफ जानेवाले कुछ मुसाफ़िरी को बेच दिया ।

यूसुफ़ मिस्र में ही बड़ा हुआ । वह वहां के फ़राऊन (राजा) की निगाह में चढ़ गया और फ़राऊन ने उसे अपना मंत्री बना लिया । कुछ दिनों बाद उस देश में, जहां यूसुफ़ के भाई और पिता रहते थे, भारी अकाल पड़ा । यूसुफ़ के भाई अनाज खरीदने के लिए मिस्र आए ।

उन्हें क्या पता था कि अपने जिस भाई से छुटकारा पाने के लिए उन्होंने उसे बेच डाला था, वही मिस्र का सबसे बड़ा हाकिम है और अनाज के लिए उन्हें उसीके पास जाना होगा ।

भाइयों को यूसुफ़ के सामने पेश किया गया । उन्होंने यूसुफ़ को पहचाना नहीं । मगर यूसुफ़ ने उन्हें पहचान लिया । वह चाहता तो उन्हें सज़ा दे सकता था । पर यूसुफ़ ने बदली का बदला नेकी से दिया । उसने उनका प्यार से स्वागत किया और उन्हें वापस भेजकर याकूब और उनके बीबी-बच्चों को भी वहीं बुलवा लिया । इसके बाद याकूब का पूरा परिवार बहुत दिन तक मिस्र में ही सुखपूर्वक रहा ।

मूसा : यूसुफ़ जाति का यहूदी था । उसके बाद मिस्र में यहूदियों की संख्या काफी बढ़ गई । बाद के एक फ़राऊन को आशंका हुई कि कहीं यहूदी लोग मिस्र पर कब्ज़ा ही न कर लें । अपने राज्य को बचाने के लिए उसने हुक्म दिया कि यहूदियों के यहां पैदा होनेवाले सभी लड़कों को जान से मार दिया जाए ।

एक बच्चे की मां ने उसकी जान बचाने के लिए उसे एक टोकरी में रखकर टोकरी को फ़राऊन के महल के पास ही नील नदी के किनारे सरकंडों में छिपा दिया । फ़राऊन की लड़की मिस्र की राजकुमारी की निगाह उस टोकरी पर पड़ी । उसने उसे खोला तो उसमें उसे एक बच्चा नज़र आया । इस बच्चे को वह साथ ले आई । राजकुमारी ने इस बच्चे का नाम मूसा (मोज़ेज़) रखा और उसका पालन-पोषण करवाया । बड़े होकर मूसा यहूदियों के एक महान नेता हुए । ईश्वर ने अपने दस आदेश हज़रत मूसा के जरिये ही दिए थे ।

सैम्युएल

बाइबिल की कहानियों के कुछ महत्वपूर्ण बालक पात्र ।



मूसा

मरियम

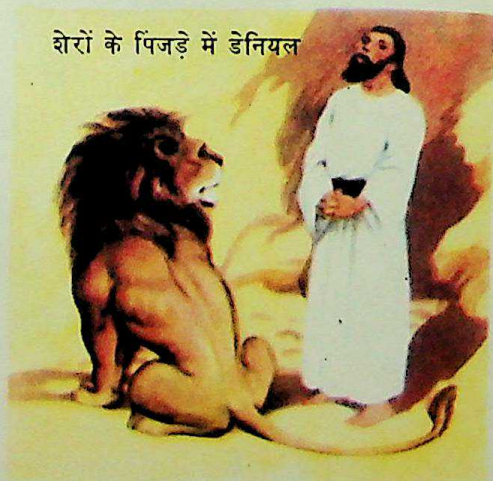
यूसुफ़

रेबेका



राजकुमारी को टोकरी में मूसा पड़े मिले ।

शेरो के पिंजड़े में डेनियल : जिस ज़माने में बेबीलोन पर नेबुकदनेज़ार का राज था, यह कहानी तभी की है। उसके शासनकाल में वहां डेनियल तथा कई अन्य यहूदी बच्चों को कैदी बनाकर लाया गया। कुछ वर्ष बाद फारस के राजा दारा (दारियस) ने बेबीलोन पर कब्ज़ा कर लिया। दारा ने डेनियल को बहुत पसंद किया और उसे एक बड़े पद पर नियुक्त कर दिया।



शेरो के पिंजड़े में डेनियल

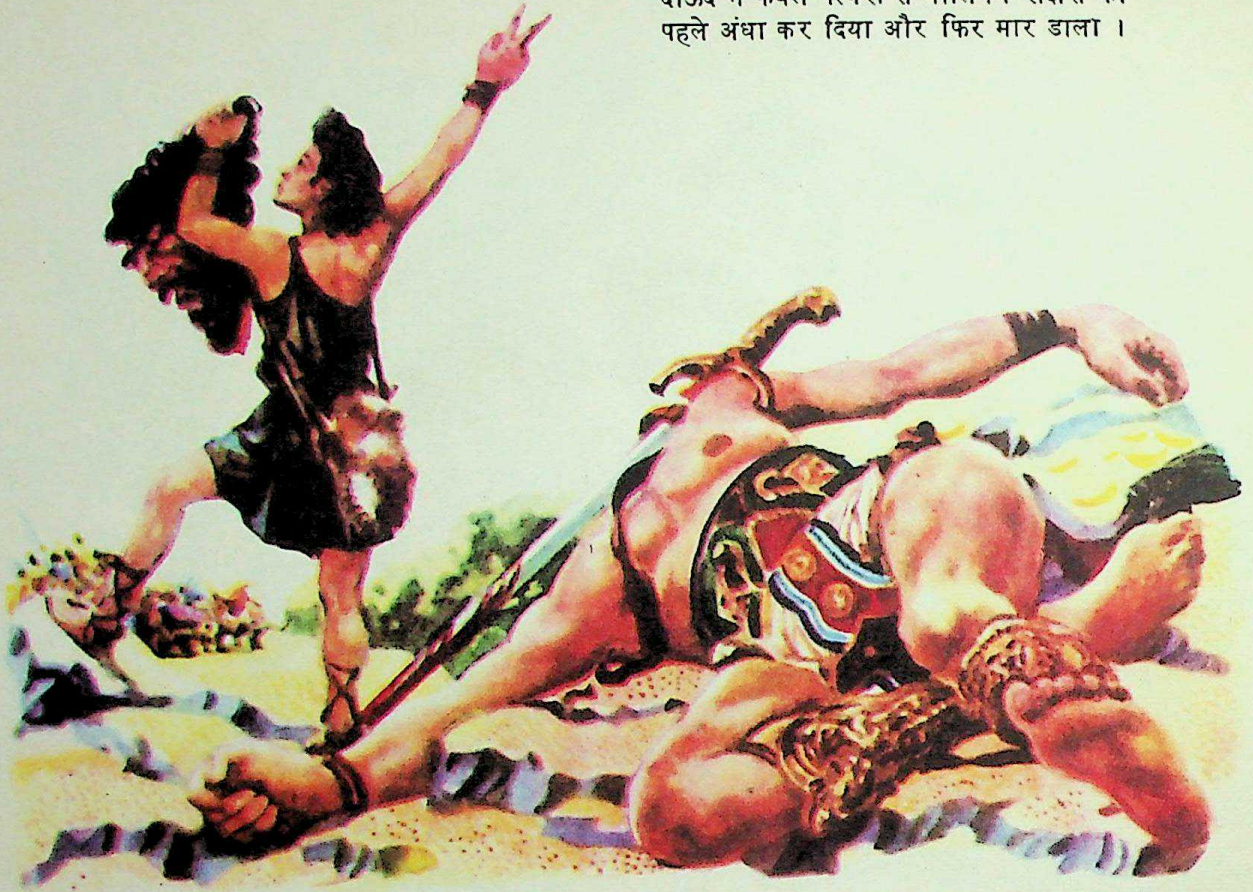
दारा के कुछ दरबारियों को इससे बड़ी जलन हुई। उन्होंने डेनियल के खिलाफ षड्यन्त्र करके दारा से उसकी भूठी शिकायतें कीं। दारा ने नाराज़ होकर हुक्म दिया कि डेनियल को शेरो के पिंजड़े में डाल दिया जाए। दारा की आज्ञा का तुरंत पालन किया गया और डेनियल को शेरो के पिंजड़े में फेंक दिया गया।

अगले दिन दारा को डेनियल की याद आई और बड़ा पछतावा हुआ। वह दौड़ा-दौड़ा पिंजड़े के पास गया और डेनियल को पुकारने लगा। डेनियल ने वहीं से जवाब दिया, “मेरे ईश्वर ने अपने देवदूत को भेजकर शेरो का मुंह बंद करवा दिया, जिसके कारण मेरा बाल भी बांका न हुआ।” दारा को यह देखकर बड़ी खुशी हुई कि डेनियल सही-सलामत है। उसने उसी दिन हुक्म दिया कि सारी प्रजा डेनियल के ईश्वर को ही माने और उसीकी पूजा किया करे।

दाऊद और गोलियथ : दाऊद (डेविड) एक चरवाहे का बेटा था। बड़ा होकर वह इज़राइल के राजा सौल का अंगरक्षक बना।

एक बार सौल की किसी पड़ोसी राजा से लड़ाई हुई। दुश्मन की फौज में गोलियथ नाम का एक राक्षस भी था। सौल की फौज में गोलियथ ने वह तबाही मचाई कि हाहा-

दाऊद ने केवल पत्थरों से गोलियथ राक्षस को पहले अंधा कर दिया और फिर मार डाला ।



कार मच गया । पूरी फौज में कोई उसका सामना करने को तैयार न था । आखिर दाऊद ने उसे मारने का बीड़ा उठाया । वह पांच पत्थर और एक गोफन लेकर अकेला उससे लड़ने चल पड़ा । पत्थरों की चोट से पहले तो उसने गोलियथ को अंधा कर दिया और फिर उसे मार डाला ।

सौल की मृत्यु के बाद दाऊद ही यहूदियों का राजा बना ।

बाख, योहान्न ज़ेबस्तियन (JOHANN SEBASTIAN BACH 1685-1750) : पाश्चात्य संगीत के महान आचार्य बाख का जन्म जर्मनी के आईज़ेनाख नामक गांव में हुआ था । बचपन से ही उनकी संगीत में गहरी रुचि थी और इसका कारण पारिवारिक ही अधिक था । बाख-परिवार स्वयं संगीत-प्रेमी था और संगीत-जगत् में उसका बड़ा सम्मान था ।

अभी योहान्न की आयु दस वर्ष की ही थी कि उनके माता-पिता का देहान्त हो गया । वे अपने एक बड़े भाई के साथ रहने लगे । भाई ने उन्हें क्लेवीकॉर्ड नामक बाजा बजाना सिखाया, जो पियानो से काफी मिलता-जुलता है । मगर वह योहान्न को बच्चा ही समझता था, इसलिए संगीत की गहरी बातें उन्हें नहीं बताता था । योहान्न संगीत की एक पुस्तक पढ़कर उसके संगीत की रचना करना

चाहते थे । पर उनके भाई ने उन्हें उस पुस्तक को हाथ लगाने से भी मना कर दिया था । योहान्न ने एक रात वह पुस्तक चोरी से निकाल ली और चांदनी में उसकी नकल उतार ली । मगर इससे उनकी आंखों पर बहुत जोर पड़ा और शायद इसी कारण वृद्धावस्था में वे अंधे हो गए ।

पंद्रह वर्ष की अवस्था से ही बाख ने संगीत द्वारा अपनी जीविका कमाना शुरू कर दिया था । धीरे-धीरे उनका नाम दूर-दूर तक फैल गया और उनकी गणना



योहान्न ने चांदनी में पुस्तक की नकल उतार ली ।

संसार के सबसे बड़े संगीतज्ञों में की जाने लगी। उन्हें पश्चिमी संगीत का पिता कहा जाता है। मगर यह मान्यता उन्हें अपनी मृत्यु के सौ वर्ष बाद मिली।

बाल्ज़क, ओनोरे द (HONORE DE BALZAC 1799-1850) : इस महान फ्रांसीसी उपन्यासकार का जन्म फ्रांस के तूर नगर में हुआ था। यों तो उन्होंने कानून की शिक्षा पाई थी, पर जीविका के लिए उन्होंने वकालत के बजाय लेखनी को ही अपना साधन बनाया। उनकी गणना संसार के सबसे बड़े उपन्यासकारों में की जाती है।

बाल्ज़क की अंतर्दृष्टि बड़ी प्रखर थी। वे मनुष्य के दिल में पैठ जाते थे और उसके अंतरतम के विचारों को सामने लाकर रख देते थे। तत्कालीन फ्रांसीसी समाज का उन्होंने बड़ा सुन्दर और सजीव चित्र खींचा है और उसपर गहरी चोटें की हैं। उनकी सबसे प्रसिद्ध कृति 'ला कोमेदी यूमेन' नामक उपन्यासमाला है, जिसमें उन्होंने अठारहवीं सदी के फ्रांस का बड़ा यथार्थवादी और विस्तृत चित्र उपस्थित किया है। उनकी रचनाओं का संसार की लगभग प्रत्येक भाषा में अनुवाद हो चुका है।

बेटॉवेन, ल्युदविग वान (LUDWIG VAN BEETHOVEN 1770-1827) : महान पाश्चात्य संगीतज्ञ बेटॉवेन का जन्म जर्मनी के बॉन नगर में हुआ था। उनके पिता वहां के राजा के दरबार में गायक थे और बहुत अधिक शराब पीते थे। बेटॉवेन का बचपन हंसी-खुशी और सुख-चैन से बहुत दूर था।

अभी बेटॉवेन की उम्र चार वर्ष की ही थी कि उनके पिता को यह धुन समाई कि इसको एक बड़ा संगीतज्ञ बनाया जाए। बस, तभी से उनकी शिक्षा आरंभ हो गई। बेचारे चार वर्ष के बालक को घंटों संगीत का अभ्यास करना होता। ज़रा भी सुस्ती या चूक होती, तो मार पड़ती।

यह सचमुच हैरानी की बात है कि ऐसे वातावरण में रहकर भी बेटॉवेन संगीत से अपना लगाव कैसे बनाए रख सके। किन्तु बेटॉवेन को संगीत से सचमुच लगाव था और उन्होंने इतनी तेज़ी के साथ उसपर अधिकार किया कि केवल ग्यारह वर्ष की अवस्था में वे अपनी कला का प्रदर्शन भी करने लगे। 17 वर्ष की अवस्था में उन्हें महान संगीतज्ञ मोज़ार्ट की शाबाशी और सराहना मिली।

कुछ वर्ष बाद बेटॉवेन वियेना चले गए और संगीत की उच्च शिक्षा ग्रहण करने लगे। थोड़े ही दिनों में वे खुद भी संगीत-रचना करने लगे और उनका नाम दूर-दूर तक फैल गया।

बेटॉवेन के जीवन की सबसे दुखद घटना बीमारी के कारण 31 वर्ष की अवस्था में उनका बहरा हो जाना थी—अपने सुन्दर संगीत का रस वे खुद नहीं ग्रहण कर सकते थे। मगर उन्होंने संगीत-रचना जारी रखी और कुल



महान संगीतज्ञ बेटॉवेन अपने प्रशंसकों के बीच।

मिलाकर कोई तीन सौ संगीत-कृतियों को जन्म दिया। उनकी कुछ सुन्दरतम रचनाएं तो उनके बहरेपन के बाद की हैं।

देखने में बेटॉवेन बेहद कुरूप थे। उनका गुस्सा भी बहुत तेज़ था। मगर वियेना के कलाप्रेमी लोगों ने उनके साथ सदा अच्छा व्यवहार ही किया।

बंड (BAND) : बंड या अंग्रेजी बाजा हम लोगों के लिए कोई अनजानी चीज़ नहीं है। ब्याह-शादी में, सर्कस में, खेल के मैदान में और बड़े-बूढ़ों की शव-यात्राओं तक में बंड का होना ज़रूरी माना जाता है।

अंग्रेजी बाजे या बंड का उदय यूरोप में हुआ। कोई सात सौ वर्ष पहले यूरोप-भर में बाजे वाले अपनी टोलियां बनाकर घूमा करते थे। इन टोलियों को 'बंड' कहते थे। बाजे के लिए बंड शब्द इसीसे निकला है। इनके अधिकतर वाद्ययंत्र चूक पीतल (ब्रास) के बने होते थे, इसलिए इन वाद्य मंडलियों को 'ब्रास बंड' कहा जाने लगा।

बाद में, कोई दो सौ वर्ष पहले, सैनिक बंडों की शुरुआत हुई। वैसे पुराने ज़माने में भी हर फौज में कुछ बाजे वाले होते थे, जो मुख्य रूप से अपने बाजों से फौजों को संकेत तथा आदेश दिया करते थे। अब तो दुनिया की कोई भी फौजी टुकड़ी ऐसी न होगी जिसका अपना बंड न हो।



आधुनिक बंड में बहुत-से बाजे होते हैं।



आधुनिक ट्रम्पेट पुराने बिगुल से मिलता-जुलता है।

हर फौजी छावनी में फौजी बैंड भी रहता है।

बैंड में कई तरह के वाद्ययंत्र होते हैं। कुछ वाद्ययंत्र फूंक से बजते हैं, जैसे बिगुल, ट्रम्पेट, ब्रास और बांसुरी। ढोल और मंजीरे जैसे वाद्ययंत्र चोट करने से बजते हैं। बैंड मास्टर के कुशल निर्देशन में इन तरह-तरह के वाद्ययंत्रों से बंधी हुई गतें निकलने लगती हैं। किसी गत को सुनकर हम भूम उठते हैं, तो किसीसे जोश में आ जाते हैं।

बैगपाइप (BAGPIPE) : स्कॉटलैंड के निवासियों का राष्ट्रीय वाद्ययंत्र बैगपाइप है। इसे मशक का बाजा कहा जा सकता है। इसमें चमड़े की एक थैली होती है और उसमें पांच नलियां जुड़ी होती हैं। एक नली से फूंक मारकर थैली को हवा से भर लिया जाता है और एक नली से इसकी लय को संभाला जाता है। शेष तीनों नलियां एक विशेष प्रकार की गूंज पैदा करती हैं।

वैसे बैगपाइप एक बहुत पुराना वाद्ययंत्र है। प्राचीन मिस्री, यूनानी, रोमवासी—सभी इसका उपयोग करते



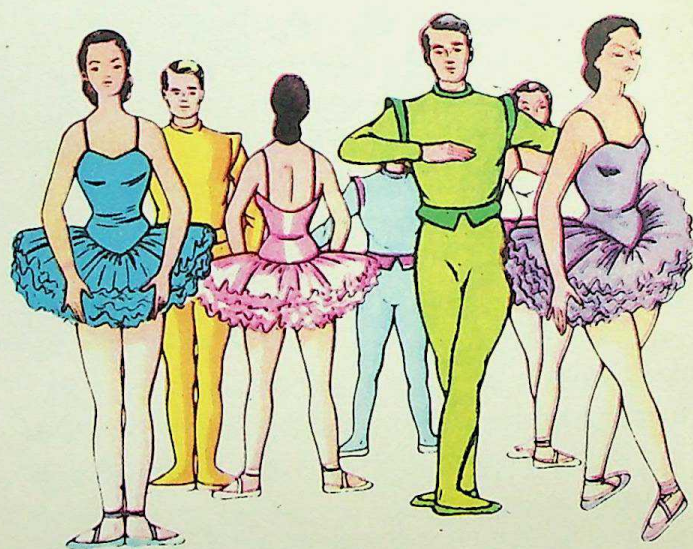
स्कॉटलैंड के लोगों का राष्ट्रीय वाद्ययंत्र—बैगपाइप।

थे। अपने यहां का अलगोजा इसीके परिवार का वाद्य है। बैगपाइप हमारे यहां भी बैंड का एक अंग माना जाता है।

बैले (नृत्य-नाटक) (BALLET) : जिस नृत्य द्वारा कहानी प्रस्तुत की जाती है, उसे बैले या नृत्य-नाटक कहते हैं। बैले में मुंह से कोई शब्द नहीं निकलता। नृत्य संगीत की लय पर होता है और कहानी नृत्य की गतियों और मुद्राओं से प्रकट होती है।

इस दृष्टि से भारत के शास्त्रीय नृत्यों को नृत्य-नाटक कहना शायद गलत न होगा। कथकलि, भरतनाट्यम्, मणिपुरी, कथक आदि में नृत्य की गतियों, मुद्राओं और अभिनयों द्वारा कोई न कोई कथा प्रस्तुत की जाती है। पर प्राचीन भारत में बैले का विकास यहीं तक आकर रुक गया।

पश्चिमी देशों में बैले का विकास कुछ भिन्न तथा निराले ढंग से हुआ। इसका उदय अब से कोई 600 वर्ष

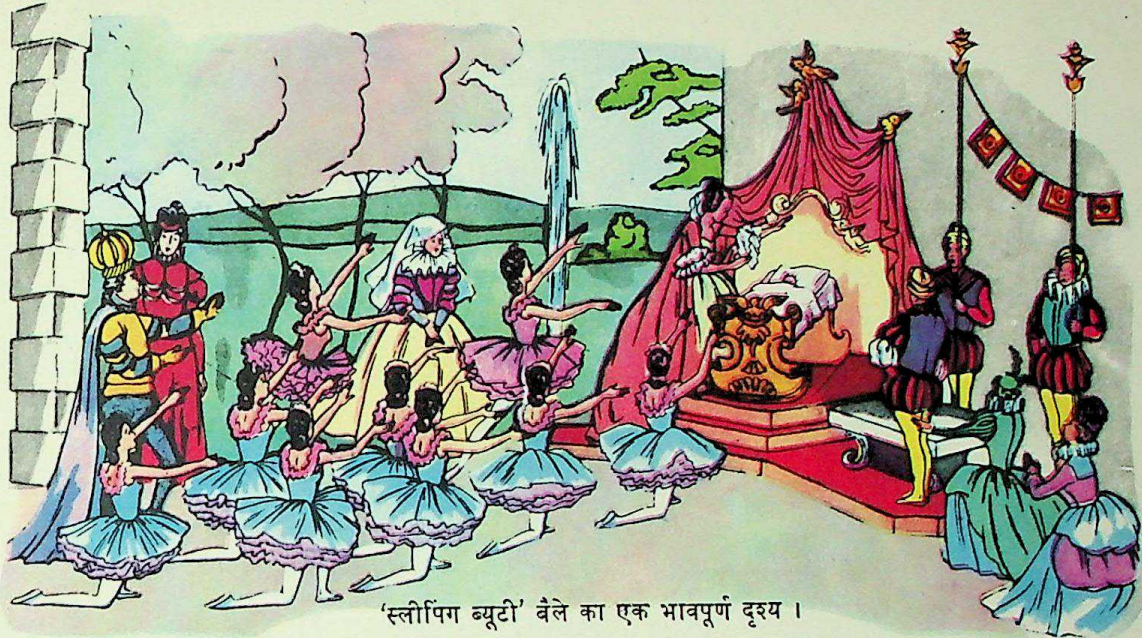


बैले की विभिन्न मुद्राएं

पहले हुआ। धीरे-धीरे इसे सामंतों का संरक्षण मिलने लगा। कोई 400 वर्ष पहले यह फ्रांस के राजदरबार में भी पहुंच गया और फिर तो यह इतना लोकप्रिय हुआ कि यूरोप-भर में फैल गया। बाद में रूसी राजदरबार में भी यह काफी फूला-फला। फ्रांस और रूस में मिले संरक्षण का बैले पर इतना प्रभाव पड़ा है कि आज तक बैले की अधिकांश गतियां और मुद्राएं अपने फ्रांसीसी नामों से ही प्रचलित हैं और हर देश की प्रसिद्ध बैले नर्तकियां अपने नाम को रूसियों जैसा बना लेती हैं।

बैले के लिए बड़ी साधना और अभ्यास की आवश्यकता पड़ती है। बचपन से ही इसकी शिक्षा आरंभ करनी पड़ती है। इसकी बारीकियों की समझ भी बड़े अभ्यास और अध्ययन से ही आती है।

पिछले वर्षों में भारत में भी भारतीय नृत्यों के आधार पर कुछ नृत्य-नाटक रचे गए हैं। उदयशंकर और शांति-वर्धन जैसे कलाकार भारतीय नृत्य-नाटक की धाक विदेशों तक में जमा आए हैं।



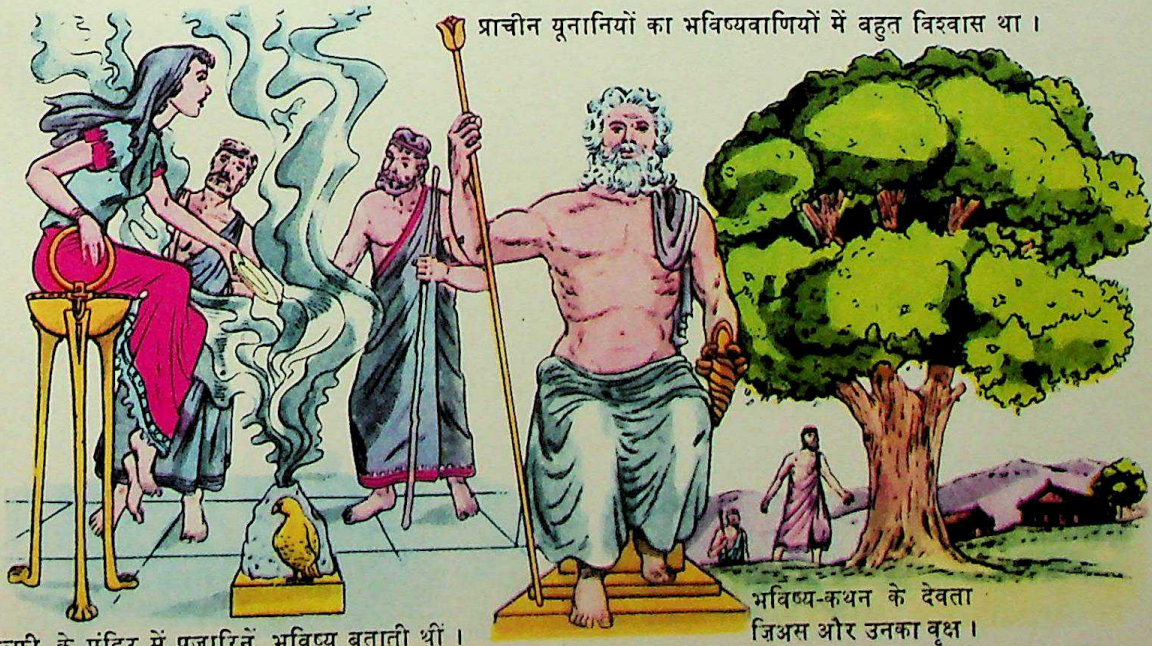
‘स्लीपिंग ब्यूटी’ बैले का एक भावपूर्ण दृश्य ।

आज विश्व में अनेक प्रसिद्ध बैले कम्पनियां हैं। बोल-शोइ और कॉवेंट गार्डन कम्पनियां इनमें विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। आजकल विश्व की सर्वश्रेष्ठ बैले नर्तकी रूस की पावलोवा मानी जाती है।

भविष्यवाणी (ORACLES) : क्या यह बच्चा स्वस्थ, धनी और बुद्धिमान होगा ? क्या मैं जिस काम में हाथ लगाने जा रहा हूं, उसका फल अच्छा होगा ? अगले साल क्या-क्या घटनाएं घटने वाली हैं ? हर ज़माने में ऐसे लोग रहे हैं जो इस प्रकार के सवालों का जवाब जानना चाहते हैं।

भारतीय पुराणों में ऋषि-मुनियों द्वारा की गई भविष्यवाणियों का जगह-जगह उल्लेख आया है।

भविष्यवाणी करनेवाले लोग बहुत चालाक होते थे। वे हर सवाल का जवाब गोलमोल दिया करते थे, जिससे दोनों तरह के अर्थ निकल सकते थे। मान लीजिए कि किसी राजा ने भविष्यवक्ता से पूछा : “मैं युद्ध करने जा रहा हूं। इसमें मेरी हार होगी या जीत ?” तो भविष्यवक्ता उत्तर देता था : “एक महान साम्राज्य की विजय होगी।” अब अगर राजा हारता है तो भी भविष्यवाणी ठीक है, जीतता है तब भी। इस तरह होता चाहे जो भी,

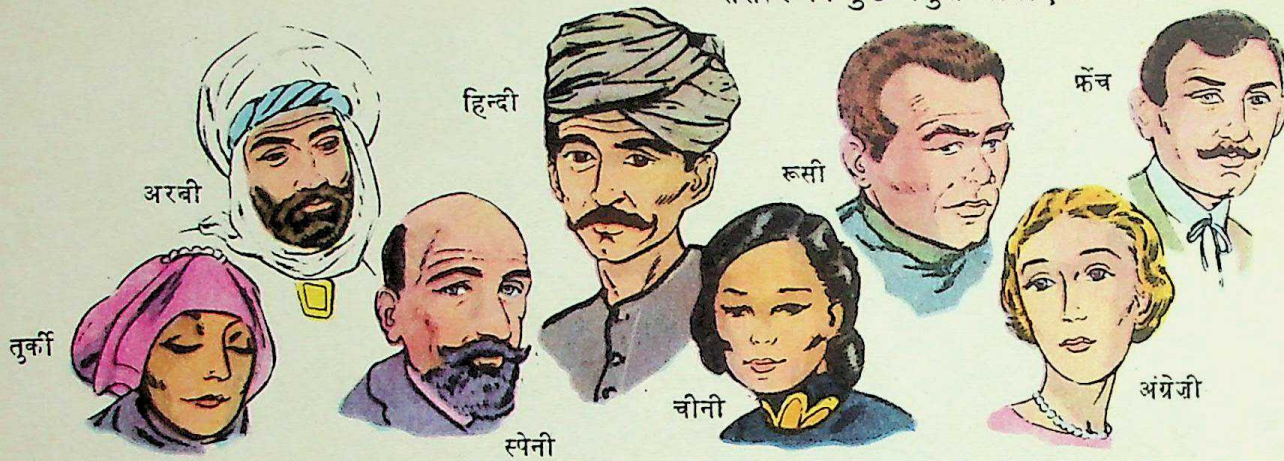


प्राचीन यूनानियों का भविष्यवाणियों में बहुत विश्वास था।

डेलफी के मंदिर में पुजारिनें भविष्य बताती थीं।

भविष्य-कथन के देवता जिअस और उनका वृक्ष।

संसार की कुछ प्रमुख भाषाएं बोलनेवाले



लेकिन भविष्यवक्ताओं की बात हमेशा ठीक निकलती थी।

आज भी कुछ लोग यह सोचते हैं कि ज्योतिषी ग्रह-नक्षत्रों का अध्ययन करके, या उनके हाथ की रेखाओं को देखकर उनका भविष्य बता सकता है।

भाषा (LANGUAGES) : जब हमें किसीसे कोई बात करनी होती है तो हम शब्दों का प्रयोग करते हैं। परन्तु बहुत पहले लोग इशारों में बातें करते थे। उनके पास शब्द नहीं थे, भाषा नहीं थी। इस अर्थ में वे भी दूसरे जानवरों की तरह ही थे।

शुरू में जब लोगों ने बोलना शुरू किया होगा तो उनकी भाषा को किसी एक आदमी ने नहीं गढ़ा होगा। भाषा के गढ़ने में तमाम लोगों ने कुछ न कुछ योग दिया होगा, और यह धीरे-धीरे बढ़ी होगी।

शायद सबसे पहले शब्द 'ओह' या 'ओ' थे, जिन्हें खुशी या दुःख से हम अक्सर बोल उठते हैं। मुमकिन है लोग जब एकसाथ मिलकर लड़ा या शिलाखंड वगैरह उठाते रहे हों तो संकेत के रूप में कुछ शब्द बोलते रहे हों। यह भी संभव है कि पहले जो शब्द बोले गए हों वे मनुष्य के चारों ओर होनेवाली आवाजों में से ही किसीकी नकल रहे हों।

फिर एक बार भाषाओं का जन्म हो जाने पर लोगों ने यह समझ लिया होगा कि वे इस तरह आपस में मिलकर अधिक अच्छी तरह काम कर सकते हैं और बातें कर सकते हैं। वे भाषाओं को और अच्छा बनाने में लगे होंगे।

भाषाओं के शुरू हो जाने पर भी लोग बहुत सारी बातें इशारों में करते रहे। लेकिन सभी बातें इशारों से नहीं कही जा सकतीं।

संभव है, भाषाएं एक स्थान पर शुरू हुई हों और वहां से चारों ओर फैली हों। यह भी संभव है कि कई जगहों पर भाषाओं का जन्म हुआ हो। अगर दुनिया के सारे लोग एक-दूसरे के काफी सम्पर्क में रहे होते तो आज सारी दुनिया में एक ही भाषा होती। लेकिन पहाड़ों और

समुद्रों ने उन्हें एक-दूसरे से अलग कर दिया था। यही बात एक-दूसरे के प्रति घृणा की भावना ने भी की होगी। जो भी हो, आज दुनिया में 1000 से भी अधिक भाषाएं बोली

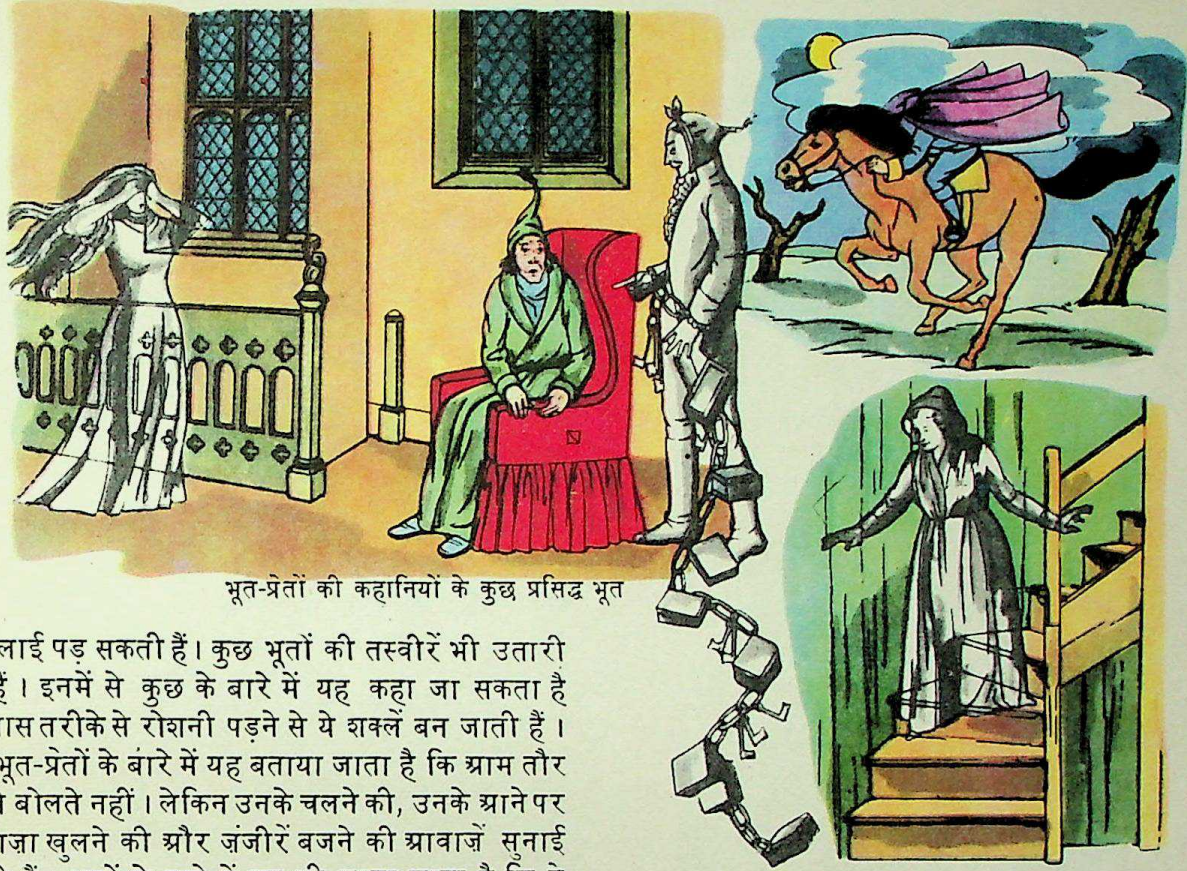
संसार की प्रमुख भाषाएं

भाषा	...	...	बोलनेवालों की संख्या
चीनी	...	...	56,90,00,000
अंग्रेजी	...	...	28,10,00,000
हिन्दी	...	...	17,00,00,000
रूसी	...	...	15,30,00,000
स्पेनी	...	...	14,50,00,000
जर्मन	...	...	12,00,00,000
जापानी	...	...	9,60,00,000
अरबी	...	...	7,70,00,000
फ्रेंच	...	...	7,70,00,000
पुर्तगाली	...	...	7,60,00,000
इतालवी	...	...	5,70,00,000

जाती हैं। कुछ के बोलनेवालों की संख्या करोड़ों में है; कुछ के बोलनेवाले कुछ ही हजार लोग हैं।

(देखें : अपभाषा; विश्वभाषा)

भूत-प्रेत (GHOSTS) : बहुत-से लोग यह पूछे जाने पर कि क्या वे भूत-प्रेतों में विश्वास करते हैं, हंसकर बात को टाल देते हैं। भूतों की अनेक कहानियां हैं। कुछ लोग यह दावा करते हैं कि उन्होंने भूत या उनकी लीलाएं देखी हैं। किंतु यह केवल उनका दृष्टिभ्रम होता है। कई बार किसी चीज से या कुछ चीजों से एक शक्ल-सी बन जाती है। यह शक्ल मरे हुए आदमी जैसी हो सकती है। उदाहरण के लिए आग की लपटों को अगर आप ध्यान से देखें तो उनमें कई तरह के चेहरे या जानवरों की शक्लें



भूत-प्रेतों की कहानियों के कुछ प्रसिद्ध भूत

दिखलाई पड़ सकती हैं। कुछ भूतों की तस्वीरें भी उतारी गई हैं। इनमें से कुछ के बारे में यह कहा जा सकता है कि खास तरीके से रोशनी पड़ने से ये शक्लें बन जाती हैं।

भूत-प्रेतों के बारे में यह बताया जाता है कि ग्राम तौर पर वे बोलते नहीं। लेकिन उनके चलने की, उनके आने पर दरवाजा खुलने की और जंजीरें बजने की आवाजें सुनाई पड़ती हैं। भूतों के बारे में यह भी माना जाता है कि वे मरे हुए आदमियों जैसे होते हैं। इसलिए लोग मानते हैं कि मरने के बाद भी आदमी की आत्मा जीवित रहती है। कई बार भूतों से डरकर लोग घर छोड़ देते हैं।

भूतहे किलों, महलों और मकानों की अनेक कथाएं हैं। बहुत-से नाटकों में भी भूतों या भूतलीलाओं का वर्णन मिलता है।

महाभारत (MAHABHARATA) महाभारत हमारे देश का एक बहुत ही सम्मानित महाकाव्य है, जिसके रचयिता कृष्ण-द्वैपायन वेदव्यास माने जाते हैं। इसमें हजारों प्राचीन कथाएं और कौरव-पांडवों के युद्ध का वर्णन मिलता है। महाभारत की कथा संक्षेप में इस प्रकार है :

प्राचीन काल में हस्तिनापुर में कुरुवंशी राजा शान्तनु का राज्य था। उनके एक बड़ा ही तेजस्वी पुत्र था जिसका नाम देवव्रत था। राजा सत्यवती नाम की एक सुन्दरी पर आसक्त हो गए। परन्तु सत्यवती ने यह हठ पकड़ ली कि वह उनसे तभी विवाह करेगी जब वे उसके पुत्र को राज्य का उत्तराधिकारी बनाने का वचन दे देंगे। राजा चिंतित रहने लगे। देवव्रत को जब यह पता चला तो उसने प्रतिज्ञा की कि वह जन्म-भर न तो सिंहासन पर बैठेगा और न विवाह ही करेगा। अपनी इस भीष्म प्रतिज्ञा के कारण देवव्रत का नाम 'भीष्म' पड़ गया।

शान्तनु के बाद सत्यवती का पुत्र चित्रांगद गद्दी पर बैठा। उसके तीन पुत्र हुए : धृतराष्ट्र, पांडु और विदुर। चित्रांगद की भरी जवानी में ही मृत्यु हो गई। धृतराष्ट्र जन्म से ही अंधे थे, इसलिए पांडु राजा बने। उनके पांच पुत्र हुए : युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव। ये पांचों भाई पांडव कहलाए। पांडु ने भी अधिक आयु नहीं पाई। उनकी मृत्यु के बाद धृतराष्ट्र सिंहासन पर बैठे। उनके सौ पुत्र थे, जिनमें सबसे बड़ा दुर्योधन था। दुर्योधन और उसके भाई कौरव कहलाते थे।

कौरव और पांडव पितामह भीष्म की देखरेख में बढ़ने लगे। गुरु द्रोणाचार्य उन्हें धनुर्विद्या और युद्धकला की शिक्षा देने लगे। कौरव बचपन से ही पांडवों से बहुत जलते थे। उन्होंने पांडवों की हत्या के लिए कई षड्यंत्र रचे। एक बार तो जिस भवन में वे रहते थे उसीमें आग लगवा दी। किन्तु पांडव किसी तरह बचकर निकल गए। उन्हीं दिनों पांचाल के राजा ने अपनी कन्या द्रौपदी का स्वयंवर रचाया। अर्जुन उसमें सफल रहे, उनका द्रौपदी से विवाह हो गया। द्रौपदी अपने समय की प्रख्यात सुन्दरी थी।

पांडवों को खांडवप्रस्थ का राज्य दिया गया। वह एक विकट जंगल था। परन्तु पांडवों ने जंगल को साफ करके वहां इन्द्रप्रस्थ नाम का एक सुन्दर नगर बसाया।

माइकेलैजेलो की प्रसिद्ध कलाकृतियां



पांडव बड़े ही वीर और पराक्रमी थे। उनकी श्रीकृष्ण से घनिष्ठ मित्रता हो गई। इन्द्रप्रस्थ में पांडवों ने राजसूय यज्ञ किया, जिससे उनकी कीर्ति चारों ओर फैल गई।

दुर्योधन पांडवों के यश और वैभव को देखकर ईर्ष्या की आग में जलने लगा और उन्हें नीचा दिखाने की युक्तियां सोचने लगा। उसका मामा शकुनि बहुत ही कुशल जुआरी था। उसकी सलाह से एक कुच्छर रचा गया। पांडवों को हस्तिनापुर बुलाया गया। खूब आदर-सत्कार के बाद दुर्योधन ने उनसे जुआ खेलने का आग्रह किया। शकुनि और युधिष्ठिर जुआ खेलने बैठ गए। युधिष्ठिर बराबर हारते ही रहे। उन्होंने धीरे-धीरे धन, संपत्ति, राजपाट सब दांव पर लगा दिया और गंवा दिया। जुए की शर्तों के अनुसार यह निश्चय हुआ कि पांडव बारह वर्ष तक वनवास और तेरहवें वर्ष में अज्ञातवास भोगेंगे।

पांडवों ने द्रौपदी-सहित, वनवास की यह लम्बी अवधि तीर्थयात्राएं करके और वनों या पहाड़ों में घूमकर पूरी की। तेरहवें वर्ष में पांडव विराट राज्य में चले गए और वहां भेस बदलकर राजा के यहां नौकरी करने लगे। तेरहवां वर्ष पूरा हो जाने पर उन्होंने अपने को प्रकट कर दिया। कौरवों के पास अब श्रीकृष्ण द्वारा यह संदेश भेजा गया कि पांडवों को उनका राज्य वापस कर दिया जाए। परन्तु दुर्योधन ने सुई की नोक बराबर भी जमीन देना स्वीकार नहीं किया। अब युद्ध के सिवा और कोई चारा नहीं रहा।

कुरुक्षेत्र के मैदान में कौरव-पांडवों का भयंकर युद्ध हुआ। अनेक राजा पांडवों की ओर से और कितने ही कौरवों की ओर से लड़े। श्रीकृष्ण पांडवों के साथ थे। अठारह दिन यह युद्ध चला। इसमें देश के बड़े-बड़े पराक्रमी वीर मारे गए। भीष्म पितामह, गुरु द्रोणाचार्य, पांडवों के सभी पुत्र, दुर्योधन और कौरवों का पूरा वंश ही इस युद्ध में समाप्त हो गया।

अब युधिष्ठिर हस्तिनापुर के सिंहासन पर बैठे। उन्होंने छत्तीस वर्ष राज्य किया। उनका शासन धर्म और न्याय के लिए प्रसिद्ध है। इसके बाद पांडवों ने अपने पौत्र परीक्षित को राज्य सौंप दिया और वेतपस्या करने चले गए। हिमालय में एक-एक करके वे सभी मृत्यु को प्राप्त हो गए।

माइकेलैजेलो (MICHELANGELO 1475-1564) : रोम के सिस्टाइन चैपल नामक गिरजाघर की छत कलात्मक आश्चर्यों में से एक है। लगभग 10,000 वर्गफुट की सारी जगह उत्कृष्ट कलाचित्रों से पूर्ण है। वहां 343 चित्र हैं जिनमें से अधिकांश मनुष्य के कद से दुगुने-तिगुने हैं। ये सब माइकेलैजेलो की कृतियां हैं।

माइकेलैजेलो बुओनारोत्ती का जन्म इटली में काप्रेसे ग्राम के पास हुआ था। उनकी रुचि केवल मूर्तिकला में थी। किन्तु कुछ समय बाद यह निश्चय हो गया कि चित्र-

कला सीखे बिना वे महान मूर्तिकार नहीं बन सकते। अतः 13 वर्ष की आयु में वे प्लोरेंस के चित्रकार गिरलांदाजो के कलाभवन में प्रविष्ट हो गए।

प्लोरेंस का शासक लोरेंजो बड़ा कलाप्रिय व्यक्ति था। उसने माइकेलेंजेलो सरीखे होनहार छात्र को अपने उद्यान का उपयोग करने की अनुमति दे दी। अतः उन्हें उद्यान में स्थित सुन्दरतम कलाकृतियों के अध्ययन का अवसर मिल गया।

प्लोरेंस में सौ वर्ष से संगमरमर की एक बड़ी शिला पड़ी थी। दूसरे मूर्तिकार उसे देखकर चलते बने। माइकेलेंजेलो ने उसे देखा तो उनकी कल्पना में एक विशाल मूर्ति उभर आई, जो समूची शिला पर बन सकती थी। उसी शिला को तराशकर उन्होंने डेविड की मूर्ति बनाई। इस मूर्ति ने उन्हें विख्यात कर दिया।

पोप ने माइकेलेंजेलो से सिस्टाइन चैपल की भीतरी छत पर चित्र बनाने का आग्रह किया। पूरे साढ़े चार बरस तक माइकेलेंजेलो छत पर काम करते रहे। उन्हें या तो एक ऊंचे मंचान पर पीठ के बल लेटना पड़ता था या पीठ को पीछे की ओर बहुत अधिक झुकाकर बैठना पड़ता था। गर्मियों में छत के पास हवा बेहद गर्म होती और सर्दियों में होती लहू जमा देनेवाली ठंड। फिर भी वे घंटों काम में व्यस्त रहते। वे सहायकों के साथ काम करने के आदी नहीं थे। इसलिए उन्होंने अकेले ही सारा काम पूरा किया।

माइकेलेंजेलो का अधिकांश जीवन सामान्य सुख-सुविधा से रहित ही बीता। यह महान कलाकार उसी वर्ष संसार से उठ गया जिस वर्ष शेक्सपियर का जन्म हुआ।

मिदास (MIDAS) : मिदास की कथा एक यूनानी पुराण-कथा है। कहानी इस प्रकार है : एशिया माइनर में मिदास नाम का एक राजा था। दुनिया की हर चीज से बढ़कर



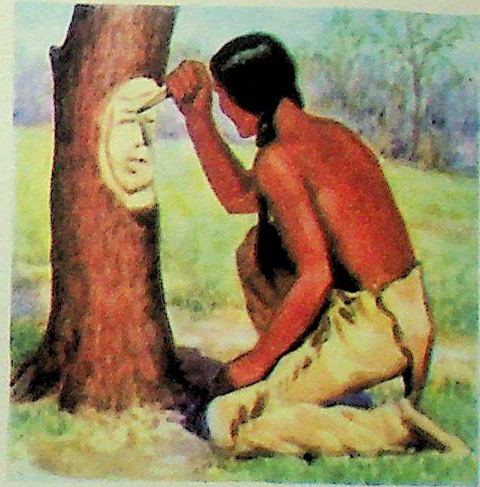
मिदास के छूते ही भोजन भी सोना बन गया।

उसे सोने से प्यार था। जब एक देवता ने मिदास से एक वर मांगने को कहा तो उसने इच्छा प्रकट की, "मैं जिसे भी छू लूँ वह सोना बन जाए।"

मिदास को शीघ्र ही पता चल गया कि उसका यह वरदान बड़ा दुखदायी है। ज्योंही उसने भोजन को छुआ, वह सोना बन गया। भूखों मरने से बचने के लिए उसे देवता से प्रार्थना करनी पड़ी कि वह सुनहरे स्पर्श का वरदान लौटा ले।

देवता ने मिदास को कहा कि वह अमुक नदी में स्नान करे। उसने वैसा ही किया। इस प्रकार मिदास का उस वरदान से पीछा छूटा।

मुखौटा (MASKS) : रामलीला के अवसर पर हम हनुमान, काली और राक्षसों का स्वांग करनेवाले व्यक्तियों के



अमरीकी आदिवासी पेड़ों पर मुखौटे खोदते थे।

चेहरों पर मुखौटे लगे देखते हैं। कुछ देशों में मुखौटों का बहुत महत्त्व है।

आदिम जातियों में मुखौटे का प्रयोग धार्मिक उत्सवों के अवसर पर किया जाता है। वे मानते हैं कि इससे उनका सीधा संबंध देवताओं से हो जाता है। वे वर्षा के लिए मुखौटा पहनकर नाच करते हैं, जो एक तरह की प्रार्थना समझी जाती है। ओम्मे मुखौटा पहनकर भूत-प्रेत भगाते हैं। जब कोई लड़का जवान होता है तो कुछ आदिम जातियों में इस अवसर पर समारोह किया जाता है और इसमें भी मुखौटे पहने जाते हैं। युद्ध-नृत्य में भी नर्तक मुखौटे पहनते हैं।

अमरीका के कुछ आदिवासी बहुत सुन्दर मुखौटे बनाते हैं। पूर्वी अमरीका के इरोकोई आदिवासियों की एक जाति तो अपने मुखौटों के कारण नकली चेहरों का समाज ही कहलाती है। इनके मुखौटे मनुष्य के चेहरों जैसे ही होते हैं, लेकिन देखने में बहुत भोंडे लगते हैं। उत्तर-पश्चिमी अमरीका के आदिवासियों के मुखौटे जानवरों के चेहरों के



मुखौटाधारी रेड इंडियन नर्तक

बने होते हैं। इनके धर्म में जानवरों का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है।

मुखौटे कई चीजों के बनते हैं। खोखले मुखौटे कड़े कपड़े को रंगकर या पेपरमाशी (पेपायेमाशे) के बनते हैं। आदिवासी ठोस लकड़ी, बुने हुए रेशों, या तांबे के मुखौटे तैयार करते हैं। कुछ जातियों के लोग अपने मुखौटे नारियल के खोल से तैयार करते हैं और कुछ तो सचमुच की खोपड़ी का प्रयोग करते हैं। हमारे यहां कुछ मुखौटे मिट्टी और कागज से भी तैयार किए जाते हैं।

कुछ मुखौटे दुहरे होते हैं। अगर उनका बाहरी भाग चिड़िया जैसा होता है तो भीतरी आदमी के मुंह जैसा। जब भीतर के मुखौटे को दिखाना होता है तो इसे पहननेवाला एक रस्सी को खींचकर इसे खोल देता है।

आदिम जातियों द्वारा बनाए जानेवाले कुछ मुखौटों को बहुत चटकीले रंगों से रंगा जाता है। ये रंग सिर्फ सजावट के लिए ही नहीं होते। हर रंग का अपना कुछ अर्थ होता है। जैसे एक जाति में पीले रंग का अर्थ होता है वर्षा।

प्राचीन काल में नाटकों में काम करनेवाले पात्र मुखौटे पहना करते थे। यूनानी अभिनेता कामेदी (कॉमेडी) और त्रासदी (ट्रिजेडी) में अलग-अलग तरह के मुखौटे लगाते थे। दक्षिण भारत के कथकलि नृत्य में आज भी नर्तक मुखौटे लगाते हैं।

मूर्तिकला (SCULPTURE) : मूर्तियां दो तरह की होती हैं : एक तो वे जिन्हें चारों तरफ से देखा जा सकता है और दूसरी वे जिनमें केवल सामने का हिस्सा ही देखने योग्य होता है।

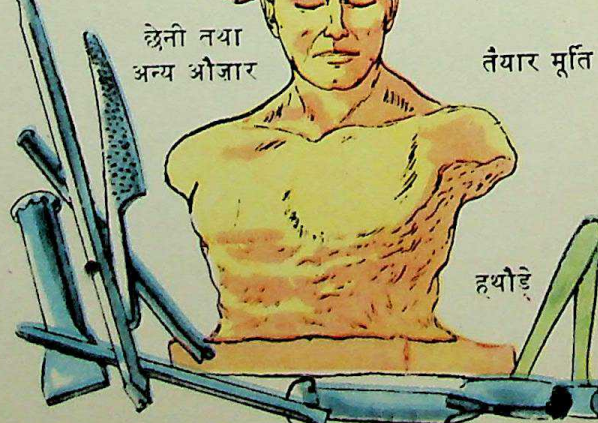
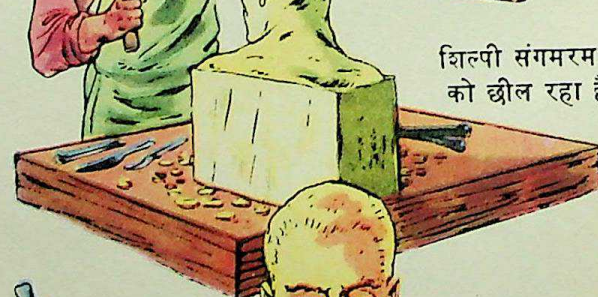
मूर्तिकला हजारों वर्ष पुरानी है। जब इतिहास का लिखना शुरू नहीं हुआ था, उस समय भी गुहा-मानव अपने हथियारों की मूर्तों पर मूर्तियां बनाता था।

प्राचीन काल में मिस्र में बहुत बड़ी-बड़ी मूर्तियां बनाई

मूर्तियां कैसे बनती हैं



खान से संगमरमर निकालना



गई। स्फिक्स इन्हींमें से एक है। इस मूर्ति के सिर की ऊंचाई 65 फुट और चौड़ाई 14 फुट है। कुछ मूर्तियां पुराने मिस्री राजाओं की हैं। इनको फ़राऊन कहते थे। नील नदी के किनारे की ऊंची पहाड़ी पर रामेसीज द्वितीय की मूर्ति है, जो पिछले तीन हजार वर्ष से वहीं है। ये मूर्तियां पत्थर की हैं। रानी नेफ़रतिती की मूर्ति भी बड़ी प्रसिद्ध है। यह रंगीन है। मिस्री लोग काठ की मूर्तियां भी बनाते थे। उनके मकबरों में काम करते हुए सेवकों की अनेक ऐसी मूर्तियां हैं जो लकड़ी की हैं।

बेबीलोनियावासियों, असीरियनों और फारसवासियों की अधिकांश मूर्तियां केवल सामने से देखने योग्य हैं। शिकार करते हुए असुरबानिपाल के दृश्य अलवास्टर में खोदे गए हैं। फारस के शाह दारा के साथ उन दस हजार व्यक्तियों की भी तस्वीरें चट्टानों पर खुदी हैं, जिन्होंने उसके साथ मिलकर साम्राज्य के उत्थान के लिए संग्राम किया था।

यूनानी सफेद संगमरमर की आश्चर्यजनक मूर्तियां बनाते थे। इसके बाद वे उन्हें लाल और नीले जैसे चमकीले रंगों से रंगते थे। उनकी मूर्तियां दोनों प्रकार की हैं: ऐसी भी जो चारों तरफ से देखी जा सकती हैं, और ऐसी भी जो केवल सामने से देखी जा सकती हैं। पुराने मूर्तिकारों के नाम किसीको नहीं मालूम, लेकिन कुछ यूनानी शिल्पकारों के नाम ज्ञात हैं। इनमें फिदियास, मायरन और प्राक्सीटेलीज के नाम उल्लेखनीय हैं।

मध्ययुग के गोथिक गिरजाघरों में भित्ति पर मूर्तियां खुदी हुई हैं। लोग इन मूर्तियों को देखकर बाइबिल की कथाओं से परिचित होते थे। बहुत-सी मूर्तियां गिरजाघर की वास्तुकला का ही अंग हैं।

पन्द्रहवीं शताब्दी में इटली में अनेक विश्व-प्रसिद्ध मूर्तिकार हुए। इनमें लियोनार्दो दा विंची, गिबेर्ती, दोनातेलो, वेरोशियो, देला रोबिया के नाम उल्लेखनीय हैं। माइकेलंजेलो मूर्तिकारों का सम्राट माना जाता है।

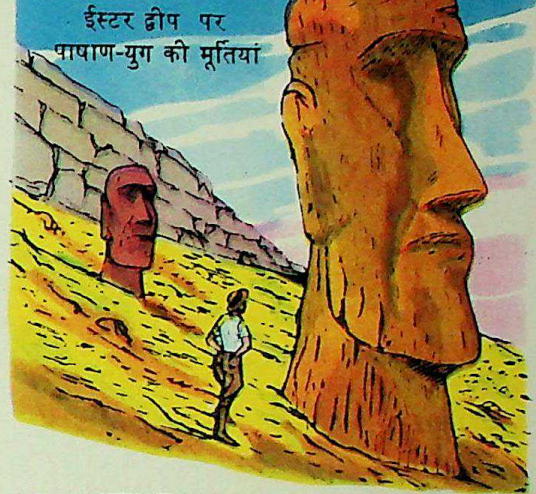
आधुनिक युग में भी कई अच्छे मूर्तिकार हुए हैं। फ्रांस के रोदां, डेनमार्क के थॉरवाल्डसेन, यूगोस्लाविया के मेस्त्रोविक और इंग्लैंड के एपस्टाइन इनमें से कुछ हैं।

मान लीजिए किसी शिल्पी से दस-बारह फुट ऊंची मूर्ति बनाने के लिए कहा जाए तो वह मूर्ति बनाने के लिए क्या करेगा?

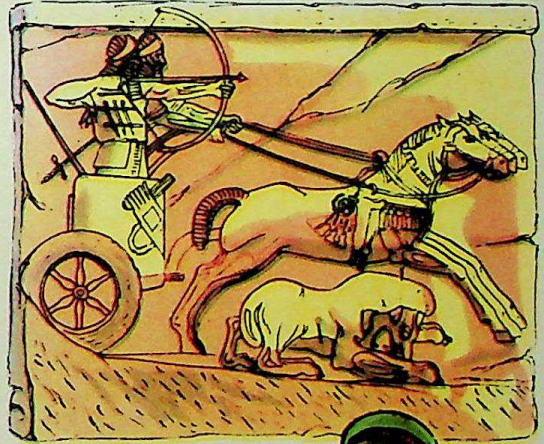
सबसे पहले वह कई रेखाचित्र बनाकर अपने मन के भावों को उसमें उतारेगा। इसके बाद वह मिट्टी की नमूने की मूर्तियां बनाएगा। इनमें से जो सर्वोत्तम मूर्ति होगी, उसके आधार पर लकड़ी और सीसे के पाइपों की सहायता से पूरे आकार का नमूना बनाएगा। इसके बाद ही मूर्तिकार असली मूर्ति का काम आरंभ करेगा।

अगर मूर्ति संगमरमर या ऐसे ही किसी पत्थर की बनानी होती है, तो कलाकार को काफी तैयारी करनी

कुछ प्राचीन मूर्तियां

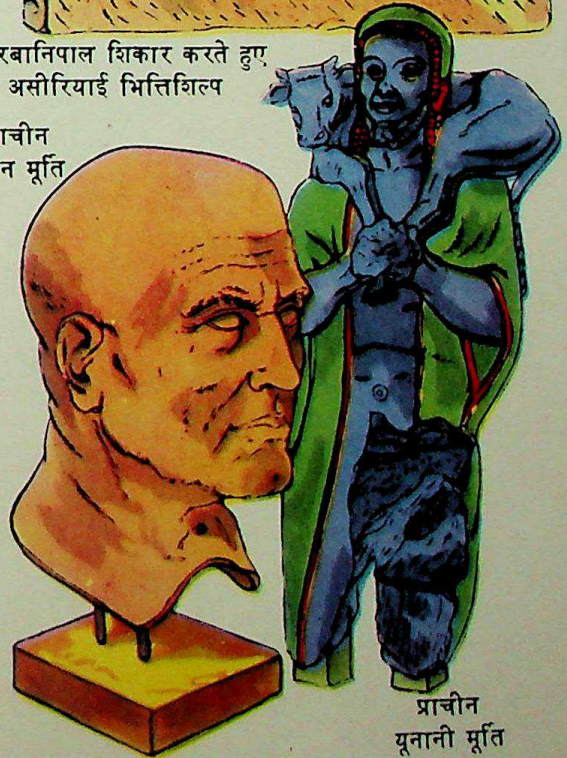


ईस्टर द्वीप पर
पाषाण-युग की मूर्तियां



असुरबानिपाल शिकार करते हुए
असीरियाई भित्तिशिल्प

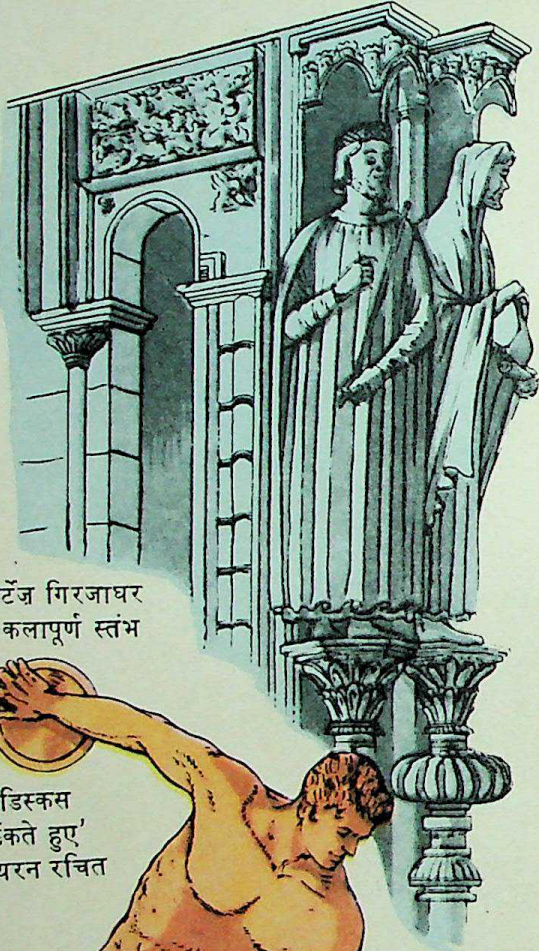
प्राचीन
रोमन मूर्ति



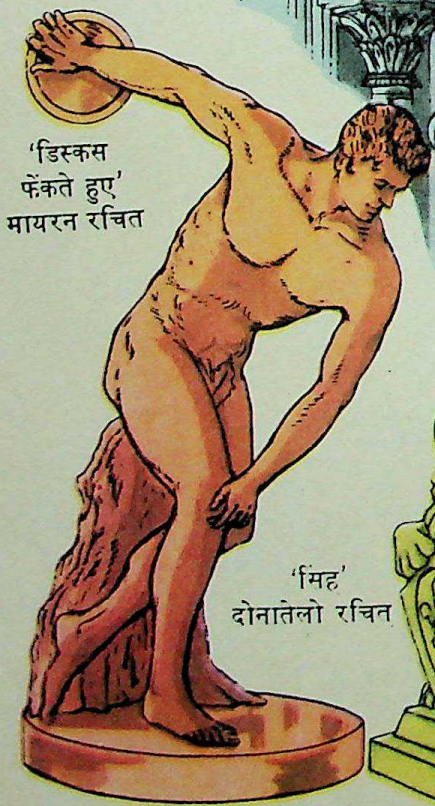
प्राचीन
यूनानी मूर्ति

मूर्तिकला

पाश्चात्य मूर्तिकला
के कुछ प्रसिद्ध नमूने

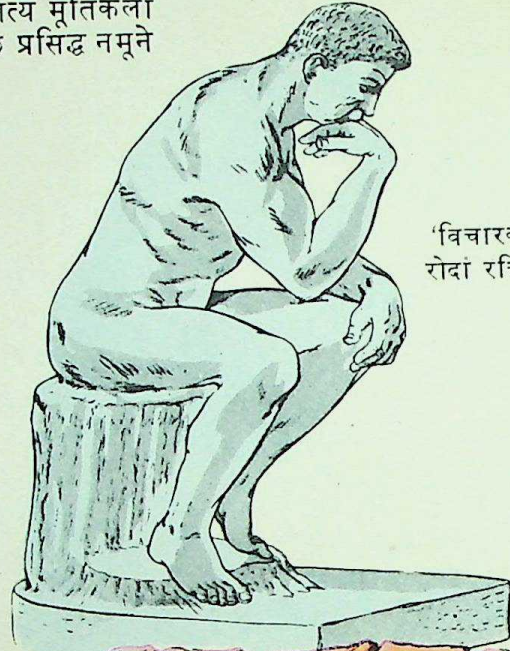


चार्टेज़ गिरजाघर
के कलापूर्ण स्तंभ

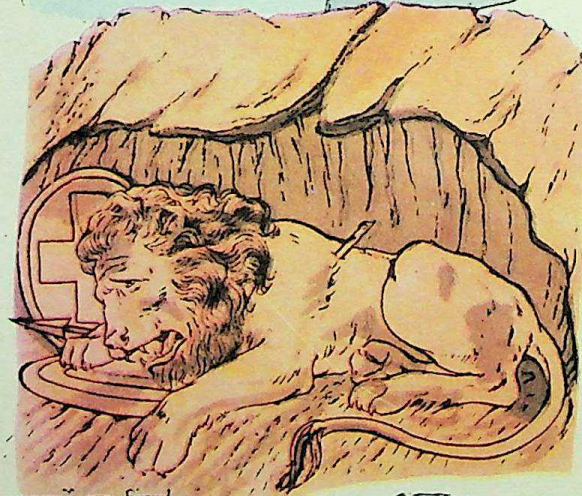


'डिस्कस
फेंकते हुए'
मायरन रचित

'मिह'
दोनातेलो रचित

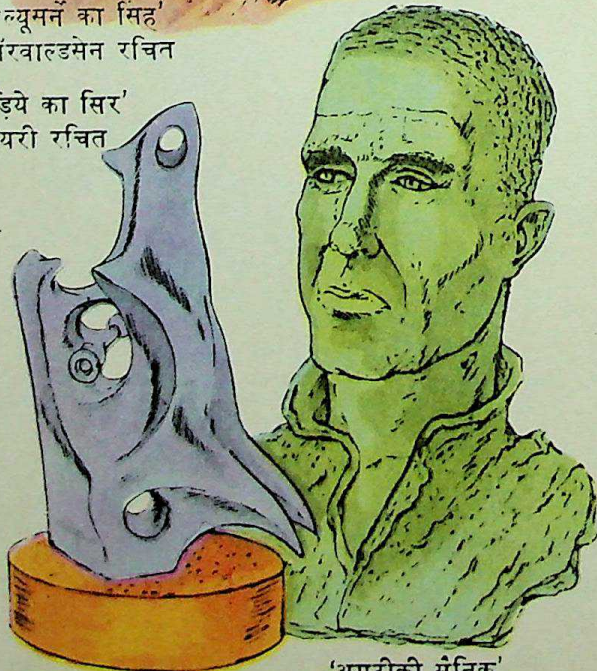


'विचारक'
रोदां रचित



'ल्युमनें का सिंह'
थॉरवाल्डसेन रचित

'भेडिये का सिर'
गोयरी रचित



'मेडोना ओर देवदूत' ल्यूका देला रोबिया रचित

'अमरीकी सैनिक'
एप्सटाइन रचित

पड़ती है। वह मोटे तौर पर पत्थर पर सारी रूपरेखा खोद लेता है। इस कार्य में वह अन्य लोगों की सहायता भी ले सकता है।

कांसे की मूर्ति बनाने की विधि कुछ भिन्न है। इसके लिए पहले मिट्टी की मूर्ति बना ली जाती है। इस मूर्ति के आधार पर सांचा तैयार किया जाता है। फिर पिघला कांसा सांचे में डाला जाता है। कांसे की मूर्तियां पत्थर की मूर्तियों से ज्यादा साफ होती हैं। कारण स्पष्ट है। पिघला हुआ कांसा छोटे से छोटे स्थान में डाला जा सकता है। लेकिन पत्थर में ऐसी बात नहीं है। कभी-कभी शिल्पी थोड़ा-सा पत्थर छीलना चाहता है, लेकिन ज्यादा छिल जाता है।

आजकल कुछ मूर्तियां अमूर्त शैली की होती हैं। इनमें आकृति स्पष्ट नहीं होती, केवल एक अस्पष्ट आकार होता है। अगर इसमें से कोई भाव दर्शक के मन में आ जाता है, तो कलाकार का प्रयास सफल समझा जाता है। कुछ मूर्तियों में धातु, लकड़ी और पत्थर का एकसाथ प्रयोग किया जाता है।

शिल्पकार इस बात का भी बड़ा ध्यान रखता है कि उसकी कलाकृति को किस प्रकार रखा गया है। उसपर प्रकाश किस कोण से पड़ रहा है। अगर कोई मूर्ति बहुत ऊपर रखी जानी है, तो यह बात कलाकार के दिमाग में मूर्ति बनाते हुए हर समय रहती है। शायद वह मूर्ति के कुछ भाग अनुपात से अधिक बड़े बनाए, ताकि जब लोग स्थान-विशेष से खड़े होकर मूर्ति को देखें तो उनके मन में भी वे ही भाव आ सकें जो कलाकार के हैं। अमूर्त शिल्प की कलाकृतियां प्रायः ऊंचे स्थान पर रखी जाती हैं, जिससे कि उनके चारों ओर काफी खाली स्थान रहे। एक कलाकार का कहना है कि मूर्तियां इस तरह की चौकी पर रखी जानी चाहिए जिससे उन्हें चारों तरफ से देखा जा सके।

कुछ कलाकारों का कहना है कि अच्छी मूर्ति की यही परीक्षा है कि उसे देखते ही आपमें उसे छूने की इच्छा पैदा हो।

कुछ प्राचीन मूर्तियां तो हमें आश्चर्य में डाल देती हैं। ऐसी ही कुछ मूर्तियां दक्षिण प्रशान्त महासागर के ईस्टर द्वीप में हैं। हर एक मूर्ति एक पूरे पत्थर की है। कुछ मूर्तियां तो तीस फुट ऊंची हैं और पत्थर की चौकी पर जमाई गई हैं। ये पत्थर कई टन के हैं। किसने ये भीमकाय मूर्तियां बनाईं? क्या मतलब है इनका? इतने भारी पत्थर खान से कैसे लाए गए? कोई नहीं जानता। वे लोग भी नहीं जानते जो ईस्टर द्वीप में रहते हैं।

(देखें : मूर्तिकला, भारतीय; स्वतंत्रता की मूर्ति)

मूर्तिकला, भारतीय (INDIAN SCULPTURE): आदमी ने पुराने ज़माने से ही मूर्तियां बनानी शुरू कर दी थीं।

पहले दुनिया के सभी देशों में लोग मूर्तियां पूजते थे। मूर्तियां पूजा के लिए ही नहीं, सुख और खेल के लिए भी बनती थीं। हमारे अजायबघरों में सोने से लेकर मिट्टी तक की, सभी कालों और सभी शैलियों की मूर्तियां हैं। भारतीय मूर्तिकला के विकास की कहानी बड़ी दिलचस्प है।

आज से कोई पांच हजार साल पहले की सिंधु सभ्यता के जो अवशेष हड़प्पा और मोहनजोदड़ो आदि की खुदाई से निकले हैं, उनमें धातु, हड्डी, हाथीदांत, रत्न, कांच और मिट्टी की हजारों मूर्तियां भी मिली हैं। ये अपनी सुघड़ता से मन को मोह लेती हैं।



प्राचीन भारतीय मूर्तिकला का एक नमूना—'माता और पुत्र' (खजुराहो)।

सिंधु सभ्यता के लोग संभवतः इस देश के पुराने निवासी, द्रविड़ थे। वे आर्यों की चोट से धीरे-धीरे हटते हुए दक्षिण चले गए। सिंधु सभ्यता मर गई। आर्यों को कला-कौशल से उस समय विशेष रुचि नहीं थी। इसलिए कला का जो भंडार सिंधु सभ्यता में मिलता है, वह आर्यों के लम्बे वैदिक काल में देखने में नहीं आता।

मौर्यकाल से पहले की जो मूर्तियां मिली हैं वे अधिकतर यक्ष-यक्षिणियों की हैं। यूं तो चन्द्रगुप्त मौर्य के समय में भी मूर्तियां बनती थीं। पर अशोक ने जिस मूर्तिकला का आरंभ किया वह अपने गठन और निखार में बेजोड़ थी। अशोक के बनवाए कला के अद्वितीय नमूने वे लाटें हैं जो देश में जगह-जगह खड़ी हैं। इनके शिखर पर सिंह, हाथी, सांड आदि की जीती-जागती मूर्तियां हैं। इनकी

पालिश में मुंह देखा जा सकता है। उभरी हुई नसें इनके सजीव होने का भ्रम पैदा करती हैं। इनमें सारनाथ की लाट का शिखर, जिसपर पीठ से पीठ सटाए चार सिंह बैठे हैं, गजब का है। यही शिखर आज हमारे देश का राजचिह्न है।

भरहुत और सांची के रेलिंग अपनी कला-सम्पदा में बेजोड़ हैं। उनपर खिले कमल, पशु-पक्षी, बुद्ध के जीवन की घटनाएं, अशोक आदि राजाओं के जुलूस खोदे गए हैं। सारनाथ, कौशाम्बी, मथुरा, बेसनगर से उस काल के जो मिट्टी के फलक मिले हैं उनपर नर नारी के जोड़े, पिकनिक के नाच-रंग, गांव-नगर के दृश्य खुदे हैं। ये फलक दीवारों पर टांगे जाते थे।

कुषाण राजा कनिष्क के समय में नागार्जुन ने बौद्धों का महायान संप्रदाय चलाया जो भक्तिधारा से प्रभावित



आधुनिक भारतीय मूर्तिकला का एक नमूना :
रामकिशोर रचित 'संथाल परिवार'।

था। इस संप्रदाय के चलते ही बोधिसत्वों (बुद्ध के पूर्व-जन्मों) की मूर्तियां बनने लगीं। बुद्ध की मूर्ति भी पहले-पहल तभी बनी। मथुरा, सारनाथ, अमरावती और नागार्जुन कोंडा कुषाण कला के केन्द्र हो गए।

भारत की सीमा पर और सिंध-पंजाब में करीब दो सौ साल ग्रीकों का राज्य रहा। उनकी कला वहां धीरे-धीरे भारतीय संस्कृति से अनुप्राणित हो गई। भारतीय विषयों को ग्रीक शैली से संवारा और अंकित किया जाने लगा। इससे गांधार शैली का जन्म हुआ। इस शैली की मूर्तियां तीखे यूरोपीय नकश में बनी हैं। इनके कपड़े लहरदार हैं। स्लेट पत्थर पर बनी इस तरह की हजारों मूर्तियां मिली हैं। इनमें बुद्ध की मूर्तियां और उनके जीवन की घटनाएं खुदी हैं।

गांधार शैली यदि कुषाण युग की मिली-जुली देशी-विदेशी शैली है, तो मथुरा शैली शुद्ध भारतीय है। शकलों

का वह पुराना चपटापन इसमें अंडाकार होने लगता है। मथुरा की मूर्तियां एक खास तरह के लाल पत्थर की बनी हैं, जिसपर सफेद छोट्टनुमा धब्बे हैं। चपटी-चौड़ी करधनी भी उस काल की मूर्तियों का एक चिह्न है। मथुरा में जैन और बौद्ध स्तूपों की रेलिंग पर फूल तोड़ती, नहाती, सुग्गे से खेलती, बाजा बजाती, गेंद उछालती नारियों की नयनाभिराम मूर्तियां बनी हैं।

गुप्त युग को साहित्य और कला का स्वर्णयुग कहा जा सकता है। इसमें सभी कलाएं चरम शिखर पर पहुंच गई थीं। उभरा हुआ पूरा अंडाकार चेहरा, छरहरी देह, घुघराले बाल, सजीव मांस का आभास देनेवाली बनावट—गुप्त युग की मूर्तियों की विशेषता है। इस काल की कुकिहार को तांबे, पीतल और कांसे की मूर्तियां लोच और कमनीयता में लाजवाब हैं। गुप्त युग में बौद्ध और हिन्दू दोनों धर्मों की मूर्तियों का विकास हुआ।

600 से 1200 ई० तक का काल मध्ययुग कहलाता है, जिसे पूर्व और उत्तर दो भागों में बांटा गया है। मध्ययुग मूर्तियों के निर्माण का उतना नहीं जितना कि मंदिरों के निर्माण का युग है। पूर्व-मध्ययुग में रामायण, महाभारत और पुराणों के दृश्य गुफा-मंदिरों में खोदे गए। इस काल की कुछ अत्यन्त सुन्दर मूर्तियों में एलोरा के कैलास मंदिर में रावण का कैलास को उठाने का दृश्य बड़ा ही शक्तिशाली है। एलीफंटा में शिव और पार्वती की अनेक नयनाभिराम मूर्तियां हैं, जिनमें सबसे प्रसिद्ध त्रिमूर्ति है।

उत्तर-मध्ययुग में उड़ीसा, बुन्देलखंड, गुजरात, राजस्थान और दक्षिण के मंदिरों के बहिरंग में और दीवारों पर सुन्दर मूर्तियां खोदी गईं। वज्रयान और शाक्त तांत्रिकों की पूजा के प्रचार से यौन और शृंगारी दृश्य भी अंकित किए जाने लगे।

उड़ीसा में भुवनेश्वर के मंदिरों की अनेक नारी-मूर्तियां, विशेषकर उनका केश-शृंगार अत्यन्त सुन्दर है। कोणार्क के मंदिर के सूर्य के घोड़े, रथ के पहिये, ग्रह अद्वितीय गति और सजीवता लिए हुए हैं। बुन्देलखंड में खजुराहो के मंदिरों का प्रत्येक भाग गतिमान आकर्षक मूर्तियों से भरा है। गुजरात में सिद्धपुर पाटन, गिरनार के मंदिरों की मूर्तियां कला की दृष्टि से अनुपम हैं।

तंजोर, मदुरा और मैसूर के मंदिर मूर्तिकला के भंडार हैं। उनकी मूर्तियों में शक्ति और स्फूर्ति भी बहुत है।

उस काल के मूर्ति-जगत् और कलाक्षेत्र में सबसे सजीव कल्पना नटराज की है। शिव का काल-पुरुष पर खड़े होकर सृष्टि और प्रलय का ताण्डव, संसार के कलाक्षेत्र में अद्वितीय है। ताण्डव नृत्य करते नटराज शिव की सबसे वेगवान, उत्कृष्ट और अद्भुत मूर्ति तंजोर के बृहदीश्वर मंदिर में है।

डेढ़ सौ साल के विदेशी शासन ने देश में राष्ट्रीयता और स्वदेशी कला के प्रति जागरूकता मिटा दी थी। साथ

ही, नवीन विदेशी प्रतीकों को समझने या उनके अनुकरण की सामर्थ्य भी नहीं रही थी। तब अवनोन्मनाथ ठाकुर और हैवेल ने उदीयमान कलाकारों का ध्यान प्राचीन विरासत की ओर आकृष्ट किया। उधर यूरोप में, चित्र-कला की भांति, मूर्तिकला में भी इम्प्रेसनिज्म, क्यूबिज्म, सुरियलिज्म आदि के जो प्रयोग हुए उनसे भारत के आधुनिक मूर्तिकार भी प्रभावित हुए बिना नहीं रहे।

देवीप्रसाद रायचौधरी, प्रभात रंजन खास्तगीर आदि ने आधुनिक मूर्तियां बनानी शुरू कीं। महापात्र तथा कुछ अन्य साधकों ने मिट्टी और पत्थर पर काफी सफाई दिखलाई। रामकिंकर भारत के आधुनिक मूर्तिकारों में सबसे अधिक उल्लेखनीय हैं। वे यथार्थ की ओर कदम उठानेवाले पहले सफल कलाकार हैं।

मेडोना (MADONNA) : प्राचीन काल के अधिकतर चित्र धार्मिक हैं। पश्चिमी देशों के प्राचीन चित्रों में मेडोना के अनेक चित्र बनाए गए हैं। 'मेडोना' ईसा मसीह की माता मेरी का इटली के निवासियों द्वारा रखा हुआ नाम है। मेडोना के चित्रों में शिशु ईसा मसीह को भी दिखाया जाता



मेडोना का एक सुप्रसिद्ध चित्र

है। इनमें से कुछ दुनिया के सबसे प्रसिद्ध चित्रों में गिने जाते हैं। इनमें सबसे प्रसिद्ध राफ़ेएल का चित्र 'द सिस्टाइन मेडोना' है। (देखें : राफ़ेएल)

मोजार्ट, वॉल्फ़गैंग एमेडियस (WOLFGANG AMA-DEUS MOZART 1756-1791) : पाश्चात्य संगीतकारों में अद्वितीय इस महान संगीतकार का जन्म आस्ट्रिया के साल्ज़बर्ग नगर में हुआ था। बचपन में मोजार्ट 'अनोखे बालक' के नाम से प्रसिद्ध थे। उनके पिता आस्ट्रिया के दरबार में एक संगीतकार के रूप में नियुक्त थे। अभी वॉल्फ़गैंग तीन वर्ष के ही थे कि उनकी प्रवृत्ति संगीत में दिखाई देने लगी। एक दिन अपनी बड़ी बहन का संगीत-पाठ सुनकर वे भी क्लेवीकॉर्ड (पियानो का पुराना रूप) लेकर बैठ गए और उन्होंने वह अंश बजा लिया जो उनकी बहन

बालक मोजार्ट की एक प्रतिमा



वॉल्फ़गैंग एमेडियस मोजार्ट

सीख रही थी। उनके पिता ने तुरंत समझ लिया कि वॉल्फ़गैंग एक प्रतिभाशाली बालक है। चार वर्ष की आयु से ही उन्हें संगीत की शिक्षा दी जाने लगी।

जब वे सात वर्ष के हुए तो उन्हें तथा उनकी बहन को लेकर उनके पिता यूरोप के प्रमुख नगरों की यात्रा पर निकले। सबसे पहले वे म्यूनिख पहुंचे जहां भाई-बहन दोनों ने तीन वर्ष तक संगीत-समारोहों में संगीत प्रस्तुत किया। फिर वे वियना, पेरिस और लंदन भी गए। इन शिशु वादकों को देखकर लोग दांतों तले उंगली दबा लेते थे।

वॉल्फ़गैंग क्लेवीकॉर्ड के अतिरिक्त ऑर्गन और वायलिन भी बजा लेते थे, हालांकि इन दो वाद्यों को उन्होंने कभी किसीसे नहीं सीखा था। तेरह वर्ष की आयु में वे इटली गए। रोम में पोप ने उन्हें 'गोल्डन स्पर' का सम्मान प्रदान किया, जिसका मतलब था कि उस आयु में ही उन्हें 'नाइट' की उपाधि प्राप्त हो गई।

13 वर्षों तक विभिन्न नगरों में संगीत की रचना करने और उसे प्रस्तुत करने के पश्चात् वे साल्ज़बर्ग लौट आए। लोगों में उनके संगीत के लिए असीम उत्साह था, किन्तु उनके भाग्य में पैसा न था। उन्होंने अपना जीवन गरीबी में ही बिताया। कठिन परिश्रम ने उनकी कमर तोड़ डाली और 35 वर्ष की आयु में ही उनके स्वास्थ्य ने जवाब दे दिया। अपने अन्तिम दिनों में उन्होंने अपनी सर्वश्रेष्ठ रचना 'रिक्वीम मास' लिखी, जिसे पूर्ण करने से पहले ही वे स्वर्ग सिधार गए। बाद में उनके एक शिष्य ने उसे पूर्ण किया।

यांकी डूडल (YANKEE DOODLE) : एक गीत जो हर अमरीकी को आता है और अच्छा लगता है 'यांकी डूडल' है। इसकी धुन का एक लम्बा इतिहास है।

हजार साल पहले यह धुन इटली के धार्मिक संगीत



‘यांकी डूडल’ गीत में वर्णित एक पुराना अमरीकी सैनिक।

का एक भाग थी। वहां यह इतनी प्रिय हो गई कि इस पर दूसरे बोल रच दिए गए। इटली से यह धुन अन्य देशों में पहुंची। हालैंड में इसे फसल के गीत का रूप दिया गया, और इंग्लैंड में शेक्सपियर के समय में इसपर एक लोरी बन गई।

अमरीका में इस गीत के अब जो बोल हैं वे एक अंग्रेज फौजी डाक्टर के दिए हुए हैं। इनमें अमरीकी सैनिकों का मजाक उड़ाया गया है। पर उन्हें यह धुन और बोल इतने अच्छे लगे कि क्रांतिकारी युद्ध में यह गीत बहुत ही लोक-प्रिय हो गया। युद्ध की समाप्ति पर जब ब्रिटिश सैनिक

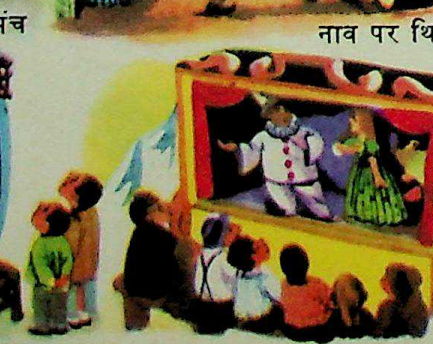
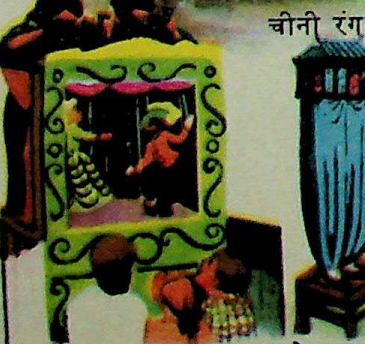
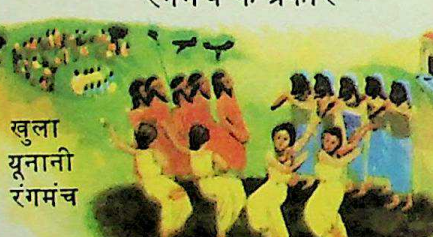
वापस इंग्लैंड जाने लगे तो अमरीकी फौज ने इसी गीत की धुन बजाई।

यूटोपिया (UTOPIA) : 400 वर्ष से भी पहले की बात है, अंग्रेज लेखक सर टॉमस मूर ने एक काल्पनिक द्वीप के बारे में एक किताब लिखी। उन्होंने उस द्वीप का नाम यूटोपिया रखा। यूटोपिया में प्रत्येक समर्थ व्यक्ति अपने हिस्से का काम करता था। जिन वस्तुओं का उत्पादन या निर्माण होता था उनपर सभीका समान अधिकार था। न कोई अमीर था न गरीब। लोगों को धर्म, उपासना आदि के बारे में पूरी छूट थी। दंड था ही नहीं, या था तो बहुत साधारण। यूटोपिया मूर के जीवनकालीन और हेनरी अष्टम के शासनकालीन इंग्लैंड से बहुत भिन्न था।

अनेक लोगों ने यूटोपिया के बारे में पढ़ा। धीरे-धीरे ‘यूटोपिया’ शब्द का प्रयोग मिलकर रहने की ऐसी योजना के लिए होने लगा जो सुन्दर तो हो, लेकिन जिसपर अमल न किया जा सके।

रंगमंच (THEATRE) : आधुनिक रंगमंच की शुरुआत प्राचीन यूनानियों ने की। उनकी रंगशालाएं ऊपर से खुली हुई (ओपन एयर) होती थीं। प्रारंभ में इन रंग-शालाओं में नाटक नहीं खेले जाते थे, बल्कि यूनानी देवताओं के सम्मान में नृत्य-गान आदि का आयोजन होता

रंगमंच के प्रकार



कठपुतली का तमाशा

केवल एक कलाकार वाला चीनी तमाशा

तमाशा गाड़ी

पंच एण्ड जूडी शो

था। गीत प्रायः सहगान के रूप में होते थे। कालांतर में सहगान में भाग लेनेवाले कहानियों का अभिनय भी करने लगे। इस तरह रंगमंच की शुरुआत हुई। बाद में एसकीलस और अरिस्तोफ़ेनीज आदि यूनानी नाटककारों ने अनेक श्रेष्ठतम और सुप्रसिद्ध नाटकों की रचना की।

यूनानी रंगमंच में यवनिका (पर्दा) और प्रकाश की व्यवस्था नहीं थी। सीनरी के नाम पर एक काला कपड़ा-भर होता था। लेकिन रंगमंच पर वज्रघोष करने या देवताओं की भूमिका निभानेवाले अभिनेताओं को उठाने के लिए कुछ यंत्रों का प्रयोग किया जाता था। प्राचीन यूनानी अभिनेता नाटकों में मुखौटे का प्रयोग करते थे।

रोमन लोगों ने यूनानियों की देखा-देखी रंगशालाएं बनाईं। यूनानी अपने थियेटर ढाल जमीन पर बनाते थे। लेकिन रोमनों ने अपने विशाल थियेटरों के लिए समतल जमीन चुनी। रोमनों ने अनेक नाटक लिखे, किन्तु उन्होंने रथों की दौड़ और जंगली पशुओं से मनुष्य के युद्ध को नाटकों के मुकाबले अधिक पसंद किया। परिणामतः सैकड़ों वर्ष तक यूरोप में नाटकों और अभिनेताओं का अभाव-सा रहा।

इन दिनों भारत और चीन में नाटकों और अभिनेताओं की कमी नहीं थी। भारतवर्ष में नाटक का इतिहास अत्यंत प्राचीन और गौरवपूर्ण है। हमारे यहां नाट्यशास्त्र को पंचम वेद की संज्ञा दी गई है। संस्कृत में भास, कालिदास, भवभूति आदि अनेक अमर नाटककार हुए हैं। थियेटर के लिए हमारे यहां रंगभूमि, रंगशाला और प्रेक्षागृह आदि शब्दों का प्रचलन था। अनेक नाटकप्रेमी राजाओं ने अपने महलों में ही रंगशालाएं बनवाई थीं। वे न केवल नाटक देखते थे, बल्कि उनकी रचना भी करते थे और उनमें अभिनय भी करते थे।

मध्ययुगीन भारत में रंगमंच का महत्त्व कम हो गया था। किन्तु स्वतंत्रता के बाद से रंगमंच को फिर से प्रतिष्ठित करने का प्रयत्न किया जा रहा है। सन् 1961 में रवीन्द्र शतवार्षिकी-समारोह के अवसर पर भारत के सभी राज्यों की राजधानियों में टैगोर-थियेटरों की स्थापना की गई। अब देश के प्रायः सभी महत्त्वपूर्ण नगरों में नाटक आदि के आयोजन के लिए सुन्दर व आधुनिक सुविधायुक्त रंगशालाएं उपलब्ध हैं। फिर भी विश्व के अन्य देशों की तुलना में भारतीय रंगमंच अभी काफी पिछड़ा हुआ है।

यूरोप में मध्ययुग में रंगमंच ने फिर से पनपना शुरू किया। लेकिन आधुनिक अर्थ में उसका विकास शेक्सपियर के जमाने से ही शुरू हुआ। शेक्सपियर के जमाने में भी नारियों की भूमिका नारियां नहीं, बल्कि लड़के करते थे। आधुनिक रंगमंच और अभिनय-संबंधी अनेक धारणाएं इंग्लैंड, फ्रांस और इटली में विकसित हुई हैं।

आज अभिनय एक सम्मानित कला मानी जाती है।

महान चित्रकारों, मूर्तिकारों और संगीतज्ञों की भांति ही हम महान अभिनेताओं का भी सम्मान करते हैं।

राफ़ेएल (RAPHAEL 1483-1520) : इटली के महान चित्रकार राफ़ेएल का जन्म अविनो नामक कस्बे में हुआ था। उनका पूरा नाम राफ़ेएल सांज़ियो था। वे लियोनार्दो दा विंची के शिष्य थे। प्रसिद्ध शिल्पकार माइकेलंजेलो से भी उन्होंने शिक्षा पाई थी।

इटली के प्रसिद्ध नगरों के अलावा वियना, मेडिड, लन्दन, पेरिस, म्यूनिख, बर्लिन, न्यूयार्क आदि नगरों के संग्रहालयों में भी राफ़ेएल के चित्र सुरक्षित हैं।

पोप जूलियस द्वितीय के कक्ष में राफ़ेएल ने कुछ



राफ़ेएल मेडोना के अपने चित्रों के लिए प्रसिद्ध हैं।

भित्तिचित्र बनाए थे। चित्रकार होने के साथ ही राफ़ेएल बहुत अच्छे वास्तुकार भी थे। इसीलिए भित्तिचित्रों के अलावा उन्होंने चित्र-यवनिकाओं (Tapestries) के डिज़ाइन और पच्चीकारी के काम के चित्र भी बनाए हैं। रोम की खुदाई और उसके ध्वंसावशेषों की रक्षा का काम भी उन्होंने सौंपा गया था।

रॉबिन हुड (ROBIN HOOD) : अंग्रेजी साहित्य में इस वीर नायक की अनेक कथाएं प्रसिद्ध हैं। कहते हैं कि यह इंग्लैंड का एक नामी डाकू था, जो संभवतः सात सौ बरस पहले शेखुड के जंगलों में रहता था। तीरन्दाजी में उसकी कोई बराबरी नहीं कर सकता था। भेस बदलने में भी वह बड़ा उस्ताद था। वह अमीरों से धन छीन लेता था और गरीबों में बांट देता था। रॉबिन हुड को पकड़वानेवाले व्यक्ति को पुरस्कार देने की घोषणा की गई थी।

रॉबिन हुड की वीरता के बारे में बहुत-सी कहानियां प्रसिद्ध हैं। गांवों में रॉबिन हुड बड़ा लोकप्रिय था। वह



कहते हैं कि रॉबिन हुड केवल अमीरों को लूटता था।

गरीबों की धन आदि से सहायता करता रहता था। लेकिन यह भी संभव है कि शायद रॉबिन हुड नाम का कोई आदमी न रहा हो और एक वीर नायक के रूप में उसकी कहानियां प्रचलित हो गई हों।

रामायण (RAMAYANA) : रामायण को हिन्दू धर्म का अभिन्न अंग कहा जा सकता है। सर्वप्रथम रामायण की रचना कवि वाल्मीकि ने संस्कृत में की। तुलसीदास के रामचरितमानस द्वारा यह कथा घर-घर में पहुंच गई। कथा का सार इस प्रकार है :

सरयू नदी के किनारे अयोध्या में रघुवंश के प्रतापी राजा दशरथ राज्य करते थे। उनके तीन रानियां थीं। बड़ी उम्र में, लम्बी प्रतीक्षा के बाद, उनके इन रानियों से चार पुत्र हुए : राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न।

राम और लक्ष्मण जब कुछ बड़े हुए तो ऋषि विश्वामित्र उन्हें अपने आश्रम में ले गए। वहां उन्होंने ताड़का राक्षसी और अनेक राक्षसों का संहार किया और यज्ञों की रक्षा की। उन्हीं दिनों मिथिला के राजा जनक ने अपनी कन्या सीता का स्वयंवर रचाया। विश्वामित्र भी दोनों राजकुमारों को लेकर वहां पहुंचे। राम ने स्वयंवर में शिव का भारी धनुष तोड़ दिया। सीता से उनका विवाह हो गया। दोनों भाई अयोध्या लौट आए।

कुछ समय बाद दशरथ ने राम को युवराज बनाने का निश्चय किया। राज्याभिषेक की तिथि नियत हो गई। परन्तु राजा की सबसे प्रिय रानी कैकेयी को यह बात पसन्द नहीं आई। कभी दशरथ ने प्रसन्न होकर उससे कोई मनोवांछित वर मांगने के लिए कहा था। उसी पुराने वचन की याद दिलाते हुए, उसने दशरथ से यह वर मांगा कि उसके पुत्र भरत का राज्याभिषेक किया जाए और राम को चौदह वर्ष का बनवास दिया जाए। दशरथ यह मुनते ही शोक से मूर्च्छित हो गए। परन्तु राम स्वयं वन जाने को तैयार हो गए। सीता और लक्ष्मण भी उनके

साथ चल दिए। भरत उस समय अपने नाना के यहां गए हुए थे।

दशरथ की इसी शोक से मृत्यु हो गई। भरत को अयोध्या बुलाया गया। उन्होंने जब सब घटना सुनी तो वे तुरन्त राम को लौटा लाने के लिए उनके पास चित्रकूट पहुंचे। किन्तु राम पिता का वचन पूरा किए बिना अयोध्या लौटने को तैयार नहीं हुए।

राम, लक्ष्मण और सीता अनेक तीर्थों, तपोवनों और ऋषि-मुनियों के दर्शन करते हुए दंडक वन में पहुंच गए। वहां गोदावरी के किनारे पंचवटी में वे कुटी बनाकर रहने लगे। एक दिन लंका के राजा रावण की बहन शूर्पणखा उधर आ निकली। लक्ष्मण के रूप पर रीझकर वह उनसे विवाह का आग्रह करने लगी। उसने सीता को भी अपशब्द कहे। इसपर लक्ष्मण ने खीझकर उसके नाक-कान काट लिए।

बहन के इस अपमान का बदला लेने के लिए, रावण एक दिन छल से सीता को कुटी से उठाकर ले गया। राम को जटायु से यह पता चल गया कि रावण ही सीता को चुराकर ले गया है। हनुमान को सीता की खोज-खबर लेने और रावण को समझाने के लिए लंका भेजा गया। परन्तु रावण किसी भी तरह सीता को लौटाने को तैयार नहीं हुआ।

सुग्रीव अपने भाई बाली के अत्याचारों से पीड़ित था, जिसने उसकी पत्नी और उसका राज्य उससे छीन लिया था। राम ने बाली का वध कर दिया। इस तरह राम और सुग्रीव में गहरी मित्रता हो गई। राम ने सुग्रीव, हनुमान आदि की सहायता से वानर सेना लेकर लंका पर चढ़ाई कर दी। रावण का भाई विभीषण उसके कुर्म के विरुद्ध था। वह राम से मिल गया। भयंकर युद्ध हुआ, जिसमें रावण अपने दल-बल सहित मारा गया।

युद्ध में विजयी होने पर राम ने लंका का राज्य विभीषण को दे दिया। उनके वनवास की अवधि भी पूरी हो चली थी। वे लक्ष्मण, सीता और हनुमान सहित अयोध्या लौट आए। नगरवासियों ने उनका बड़े उल्लास से स्वागत किया। राम राजा बने।

राम समाज की मर्यादाओं और जनमत का अत्यधिक आदर करते थे। कुछ दिन बाद उन्हें पता चला कि प्रजा में कुछ लोग रावण के यहां रहने के कारण सीता के चरित्र पर उंगली उठा रहे हैं। उन्होंने सीता को वन में भेज दिया। वह उस समय गर्भवती थी। वाल्मीकि के आश्रम में उसके दो पुत्र हुए : लव और कुश। ये दोनों बड़े तेजस्वी थे।

कुछ काल बाद राम ने अश्वमेध यज्ञ किया। यज्ञ का घोड़ा जब वाल्मीकि के आश्रम के पास पहुंचा तो लव और कुश ने उसे रोक लिया। इसपर राम के सैनिकों से उनका युद्ध हुआ। सैनिकों ने जब लौटकर इन बालकों

की वीरता की बात सुनाई तो राम स्वयं वहां पहुंचे। उन्हें अब पता चला कि ये तो उन्हींके पुत्र हैं। उनके हर्ष की सीमा नहीं रही। इस प्रकार राम, सीता और उनके पुत्रों का फिर मिलन हुआ।

रेन्वा, पियरे ओगस्त (PIERRE AUGUSTE RENOIR 1841-1919) : फ्रांसीसी चित्रकारों में रेन्वा का बड़ा नाम है। बचपन में रेन्वा गरीब थे। वे चीनी मिट्टी के बने खिलौनों और बर्तनों आदि पर रंगाई करके पेट पालते थे। उनके रंग बड़े चमकीले होते थे।

रेन्वा रंगों के प्रेम से अपने-आपको कभी मुक्त नहीं कर सके। जब वे बड़े होकर चित्रकार बन गए, उस समय भी रंगों के साथ वे बराबर प्रयोग करते रहे।

रेन्वा के चित्रों के रंग जवाहरातों जैसे होते हैं। बहुत भड़कीले रंगों के प्रयोग से चित्रकारों की कृतियां आम तौर पर घटिया लगने लगती हैं। किन्तु रेन्वा के चित्रों के बारे में ऐसा नहीं कहा जा सकता।

जब रेन्वा किसी व्यक्ति को चित्रित करते हैं तो लगता है जैसे हम कोई सजीव व्यक्ति देख रहे हैं। जब वे आंखें चित्रित करते हैं तो वे चमकती हुई प्रतीत होती हैं।

बाद में अन्य चित्रकारों ने रेन्वा की शैली का अनुकरण किया। ये चित्रकार 'इम्प्रेसनिस्ट' या प्रभाववादी कहलाते हैं।

रेम्ब्रां, वान रयां (VAN RIJN REMBRANDT 1606-1669) : इनकी गणना विश्व के महान चित्रकारों में की जाती है। इनका जन्म नीदरलैंड के लीडन नगर में हुआ था। रेम्ब्रां के परिवार वालों की एक अपनी पवन-चक्की थी। बचपन में इन्हें वहां पवन-चक्की वाले कमरे की खिड़की से आनेवाली धूप का चित्र बनाना बड़ा प्रिय

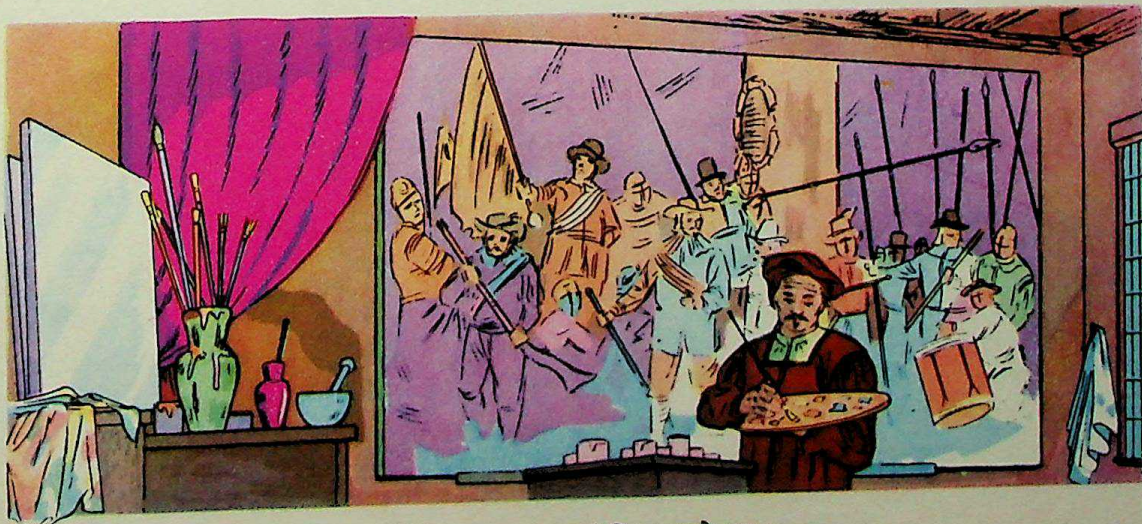
था। धूप-छांह में इनकी यह रुचि बराबर बनी रही।

बहुत-से चित्रकार हैं जिन्होंने बड़ी लम्बी यात्राएं की हैं, देश-विदेश गए हैं। लेकिन रेम्ब्रां अपनी 63 वर्ष की आयु में अपने घर से बाहर पचास मील से ज्यादा दूर कभी नहीं गए।

अपने व्यावसायिक जीवन के पहले दस वर्षों तक रेम्ब्रां बड़े प्रसिद्ध और फैशनेबिल चित्रकार रहे। लेकिन फिर कुछ ऐसी घटनाएं हुईं जिनसे वे बड़े निर्धन हो गए। उन्हें अपना सारा फर्नीचर बेचना पड़ा। अपने मखमली कपड़े तक उतारकर बेचने पड़े। उन्हीं दिनों उनकी पत्नी का, जो धनी घराने की थी, देहान्त हो गया। उसका सारा धन, जो रेम्ब्रां के पास था, उनके सास-ससुर ले गए।

एम्सटर्डम के कुछ सिविक गार्डों ने उन्हें अपना चित्र बनाने के लिए कुछ रकम दी थी। रेम्ब्रां को चूँकि धूप-छांह से विशेष प्रेम था, इसलिए उन्होंने उस समय का चित्र बनाया जब दोपहर में सिविक गार्ड शस्त्रागार से अपने काम के स्थान पर जा रहे थे। जो व्यक्ति अन्दर थे, वे चित्र में इतनी गहरी छाया में थे कि उनके चेहरे पहचाने नहीं जाते थे। चित्र बनने पर ये व्यक्ति उनसे बड़े क्रुद्ध हुए। परन्तु रेम्ब्रां का यह चित्र संसार के अमर चित्रों में से एक है। रेम्ब्रां ने इसका शीर्षक 'रात का पहरा' रखा था।

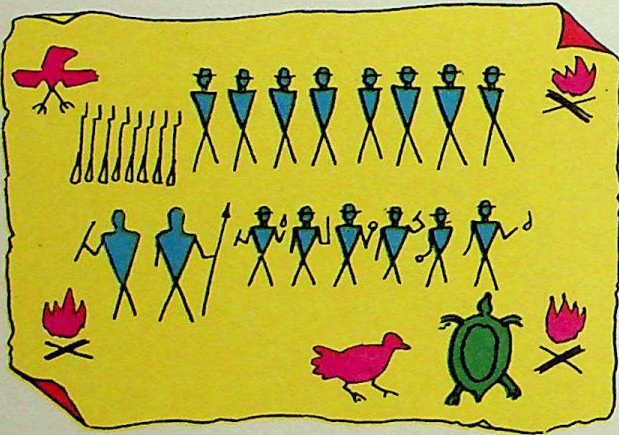
रेम्ब्रां ने बाद में अपने पुत्र की धाय से विवाह कर लिया। उससे उनके एक पुत्री हुई। अपनी निर्धनता से विवश होकर रेम्ब्रां ने अपनी पत्नी और अपनी बेटी के तथा शीशे को सामने रखकर स्वयं अपने चित्र अंकित किए। उन्होंने निर्धनों, लंगड़े-लूलों, अंधों और बीमारों के चित्र बनाए, जिन्हें देखकर उस युग का ज्ञान होता है। रेम्ब्रां ने केवल उनके कपड़ों को ही नहीं, उनके व्यक्तित्व को भी अंकित किया है।



रेम्ब्रां 'रात का पहरा' चित्र बनाते हुए।

लेखन कला (WRITING) : हजारों साल पहले लेखन कला का प्रारंभ हुआ। उस युग में न कलमें थीं, न पेंसिलें, न कागज़ और न स्याही। लिखावट के सबसे पुराने नमूने गुहावासी मनुष्य की कुछ गुफाओं में मिले हैं। जिस युग की ये लिखावटें हैं, उसे हम प्राचीन प्रस्तर युग कहते हैं। ये लिखावटें जानवरों के चित्रों से की गई हैं। यदि इन चित्रों को लिखावट न भी माना जाए तो भी इतना तो मानना ही होगा कि हर प्रकार की लिखावट का प्रारंभ किसी न किसी प्रकार की चित्रलिपि से हुआ है।

अमरीका में जब यूरोप के लोग गए तब तक वहां के आदिवासी चित्रलिपि में ही लिखते थे। यहां अमरीका के आदिवासियों की लिखावट का एक नमूना दिया हुआ है। इसमें यह बताया गया है कि गोरों का एक दल पास के किसी स्थान पर आ पहुंचा है। आठ बन्दूकधारी



सैनिकों ने एक शिविर लगाया है। एक अफसर और पांच सैनिकों ने एक दूसरा शिविर लगाया है। इस दल के साथ राह दिखानेवाले दो आदिवासी भी हैं, जिनका अलग शिविर है। आदिवासियों के सरदार के पास एक बाज़ है। आदिवासियों ने शिकार में एक मुर्गी और एक कछुआ पकड़ा है।

इस तरह के किसी सीधे-सादे संदेश का काम तो चित्रलिपि से चल जाता है। लेकिन चित्रलिपि द्वारा एक भी ऐसा वाक्य लिखा नहीं जा सकता जैसे कि इस पुस्तक में लिखे हैं।

कई हजार वर्ष पहले मिस्र के निवासी एक लिपि का व्यवहार करते थे। इसे यूनानियों ने 'हीरोग्लिफ़िक' नाम दिया जिसका अर्थ होता है, पत्थरों पर खुदी हुई पुरोहिती लिखावट। लेकिन यह समूची न पुरोहिती है, और न सिर्फ पत्थरों पर ही खुदी है। इसका बहुतेरा भाग पैपाइरस पर स्याही से लिखा हुआ है।

मिस्री लिपि में 'रामू और श्यामू एक बाल्टी पानी लेने को पहाड़ी के ऊपर गए' यह वाक्य निम्न प्रकार से लिखा जा सकता था :

रामू और श्यामू गए ऊपर पहाड़ी के
 लेने को एक बाल्टी पानी

यद्यपि मिस्र की हीरोग्लिफ़िक लिपि में अनेक चित्र हैं, फिर भी यह केवल चित्रलिपि नहीं है। इसमें कुछ चित्र विशेष ध्वनियों के लिए प्रयोग किए जाते थे। यह लिपि यद्यपि चित्रलिपि से ही प्रारंभ हुई थी, लेकिन इस रूप में पहुंचते-पहुंचते चित्रलिपि से बहुत आगे बढ़ गई थी। मिस्र के तौर पर यदि लकड़बग्घा लिखना हो तो वे इसे लकड़ी और बाघ के दो चित्रों से प्रकट कर सकते थे। यद्यपि लकड़ी का लकड़बग्घे से कोई संबंध नहीं है, फिर भी वे लकड़ी का प्रयोग 'लकड़' ध्वनि के लिए कर सकते थे। आज भी पहेलियों में कभी-कभी इस विधि का प्रयोग किया जाता है। मिस्रवासी ऐसे संकेतों का भी प्रयोग करते थे, जो किसी विशेष विचार को प्रकट करते थे। जैसे, अगर किसी नाम के गिर्द घेरा लगा हो तो इसका अर्थ होगा, 'यह व्यक्ति राजा या रानी है।'

इस प्रकार मिस्री लिपि बहुत जटिल थी। इसमें विभिन्न प्रकार के सैकड़ों संकेत-चिह्नों का प्रयोग होता था। इसके अलावा, मिस्रवासी एक शब्द को सदा एक ही तरह से नहीं लिखते थे। वे लिखने के तराकों में नये-नये प्रयोग करते रहते थे। इसीलिए इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि प्राचीन काल में कुछ गिने-चुने मिस्री ही लिख-पढ़ सकते थे।

'रामू और श्यामू' की इसी पंक्ति को अगर बेबी-लोनिया और असीरिया की प्राचीन 'कीलक लिपि' में लिखें तो उसका रूप निम्न प्रकार होगा :

रामू और श्यामू गए
 ऊपर पहाड़ी के लेने को
 एक बाल्टी पानी

इस लिपि का आविष्कार करनेवाले लोग दजला और फरात नदियों के मैदान में बसे हुए थे। वहां नदियों के पास काफी चिकनी मिट्टी पाई जाती थी। बहुत प्राचीन काल में ही वहां के लोगों ने मिट्टी की पट्टियों को लिखने के काम में लाना शुरू कर दिया था। वे उनपर लकड़ी की कलमों से लिखते थे। उनका हर चिह्न कील जैसा

होता था, इसीलिए इसे 'कीलक लिपि' कहते हैं।

कीलक लिपि में हजारों संकेत-चिह्न थे। उनका विकास चित्रों से हुआ था। कीलक लिपि के अनेक संकेत-चिह्न शब्दों या शब्दांशों के लिए प्रयोग किए जाते थे।

लेखन कला के विकास में एक बहुत ही महत्वपूर्ण कदम वर्णमाला का आविष्कार है। इसका आविष्कार सामी लोगों में से ही कुछ ने किया जो भूमध्य सागर के पूर्वी छोर पर बसे हुए थे। उन्होंने अपनी लेखन कला के लिए मिस्री लिपि से बहुत सहायता ली। पर उन्होंने उसको बहुत आसान बना दिया। उन्होंने केवल 20 से कुछ अधिक चित्रों को अपनी भाषा की विभिन्न ध्वनियों के लिए चुना। हर ध्वनि के लिए उन्होंने किसी ऐसी चीज़ का चित्र निश्चित कर दिया जिसका नाम उस ध्वनि से शुरू होता था। यह ऐसे ही था जैसे कि 'क' के लिए कबूतर और 'ग' के लिए गधे का चित्र बना दिया जाए। अपने इन चित्रों द्वारा वे जिस भी शब्द को लिखना चाहते थे, लिख सकते थे।

फीनीशियाई लोग भी सामी जाति के थे। वे व्यापार में बहुत बढ़े-चढ़े थे। उनके द्वारा यह वर्णमाला यूनानियों को मिली। यूनानियों ने इनमें से कुछ वर्णों का रूप बदल दिया। उन्होंने कुछ वर्ण छोड़ दिए और कई नये वर्ण जोड़ दिए।

वर्णमाला का प्रयोग सभी लोग अपने नाम, मामूली हिसाब-किताब और देवताओं के लिए प्रार्थनाएं आदि लिखने में ही करते थे। लेकिन यूनानी इसका प्रयोग गीत, कहानियां, कविताएं और नाटक लिखने के लिए भी करने लगे।

वर्णमाला के उद्गम पर नया प्रकाश हड़प्पा और मोहनजोदड़ो की खुदाइयों से पड़ा है। सिंधु सभ्यता की लिपियों में 500 संकेत-चिह्न थे। संभव है सामी जाति के लोगों ने वर्णमाला भारत से ही सीखी हो। इतना तो स्पष्ट ही है कि भारतीय लिपियों का विकास सिंधु घाटी में प्रचलित लिपियों से ही हुआ।

उधर, यूनानियों से वर्णमाला रोम वालों के पास पहुंची। उन्होंने कुछ नये वर्ण जोड़े और कुछ की शक्ल बदल दी। रोमन लिपि ही आज की समस्त यूरोपीय लिपियों की जननी है।

आज विश्व में कई वर्णमालाएं प्रचलित हैं। इसके अलावा, कुछ ऐसे भी लोग हैं जो वर्णमाला का प्रयोग नहीं करते। चीनी आज भी हर सीधे-सादे अर्थ के लिए एक अलग चिह्न का प्रयोग करते हैं।

अनेक लोगों का विचार है कि आज तक के सभी आविष्कारों में लेखन कला का आविष्कार सबसे महान है। अगर लेखन कला का आविष्कार नहीं हुआ होता, तो प्राचीन काल का तमाम ज्ञान-विज्ञान लुप्त हो जाता। लोगों ने इसे इतना उपयोगी पाया कि आगे चलकर मशीन

प्राचीन लेखों के कुछ नमूने



द्वारा लिखने के तरीकों का आविष्कार हो गया। आज हम टाइपराइटर और छपाई की मशीन, दोनों से काम लेते हैं। (देखें : वर्णमाला)

लैटिन भाषा (LATIN) : जिस भाषा को प्राचीन काल में रोमवासी बोलते थे, उसे लैटिन या लातीनी भाषा कहते हैं। आज सामान्य बोलचाल में कोई लैटिन भाषा का व्यवहार नहीं करता। लेकिन आज की अनेक यूरोपीय भाषाएँ—इतालवी, फ्रांसीसी, स्पेनी, रूमानियाई आदि लैटिन से ही निकली हैं। अंग्रेजी वर्णमाला के लगभग सारे अक्षर और अनेक शब्द लैटिन से ही आए हैं।

सामान्य व्यवहार से उठने के बहुत बाद तक लैटिन विद्वानों की भाषा बनी रही। आज भी रोमन कैथलिक संप्रदाय की बहुत-सी प्रार्थनाएँ लैटिन में ही पढ़ी जाती हैं और वैज्ञानिकों की भाषा में पेड़-पौधों और जीवों के लैटिन नाम प्रचलित हैं।

आज भी बहुत-से लोग लैटिन पढ़ते हैं। इसका कारण एक तो यह है कि यह भाषा बहुत सुन्दर है और दूसरे यह कि इसे पढ़ने के बाद यूरोप की दूसरी भाषाओं को समझने में आसानी हो जाती है। तीसरा कारण यह है कि इसमें कुछ महान साहित्यिक पुस्तकें रची गई हैं। इसकी सबसे प्रसिद्ध पुस्तक 'ईनीड' है। यह एक लंबी काव्यकथा है जिसे वर्जिल ने लिखा है।

वर्णमाला (ALPHABET) : हिन्दी के किसी भी अच्छे, बड़े शब्दकोश को उठाकर देख लीजिए—उसमें लाखों ही शब्द होंगे। लेकिन ये सभी शब्द देवनागरी लिपि के कुल 49 अक्षरों से ही मिलकर बने हैं। ये अक्षर हैं :

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ए ऐ ओ औ अं अः

क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ

ट ठ ड ढ ण त थ द ध न

प फ ब भ म य र ल व

श ष स ह क्ष त्र ज्ञ

इन अक्षरों में से प्रत्येक को वर्ण कहा जाता है और सबको एकसाथ वर्णमाला कहते हैं। संसार में आज कितनी ही वर्णमालाएँ प्रचलित हैं और वे कितनी ही भाषाओं की लिपियों का काम देती हैं।

वर्णमालाओं और लिपियों के विकास की कहानी बड़ी रोचक है और हजारों वर्ष पुरानी है। इससे भी ज्यादा रोचक बात यह है कि आरंभ में लोग लिखने में कितने ही संकेतों का उपयोग करते थे। वे संकेत अक्षर नहीं थे—वे आज की वर्णमालाओं के अक्षरों की तरह स्वरों और व्यंजनों के प्रतीक नहीं थे।

फिर वर्णमालाओं का उदय हुआ तो कैसे ? विद्वानों का विश्वास है कि लगभग सभी वर्णमालाओं का विकास चित्रलिपियों से ही हुआ है। जैसे 'घर' के लिए भोंपड़ी (𑀧) या घर (𑀧𑀺) जैसा निशान बना दिया और बाद में उस निशान का रूप इतना बदल गया कि घर से उसकी कोई समानता न रही और लोग उसे 'घ' कहने लगे। या पानी

(बायें) प्राचीन ब्राह्मी खरोष्ठी से देवनागरी अक्षरों का विकास हुआ।

(दायें) इन सब वर्णमालाओं का मूल कोई एक वर्णमाला थी।

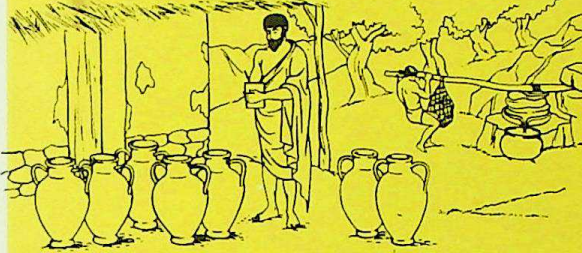
देवनागरी	ब्राह्मी	खरोष्ठी	देवनागरी	ब्राह्मी	खरोष्ठी
अ	𑀧	𑀧	ण	𑀧𑀺	𑀧𑀺
इ	𑀧𑀺	𑀧𑀺	त	𑀧𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺
उ	𑀧𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺	थ	𑀧𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺
ए	𑀧𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺	द	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺
आ	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺	ध	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺
क	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	न	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺
ख	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	प	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺
ग	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	फ	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺
घ	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	ब	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺
ङ	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	भ	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺
च	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	म	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺
छ	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	य	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺
ज	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	र	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺
झ	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	ल	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺
ञ	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	व	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺
ट	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	श	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺
ठ	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	ष	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺
ड	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	स	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺
ढ	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	ह	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺	𑀧𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺𑀺

देवनागरी	अ	इ	उ	ए	क	का	कि	कु	के
गुजराती	અ	ઈ	ઉ	એ	ક	કા	કિ	કુ	કે
गुरुमुखी	ਅ	ਇ	ਉ	ਏ	ਕ	ਕਾ	ਕਿ	ਕੂ	ਕੇ
बंगला	অ	ই	উ	এ	ক	কা	কি	কু	কে
उड़िया	ଅ	ଇ	ଉ	ଏ	କ	କା	କି	କୁ	କେ
तेलुगू	అ	ఇ	ఉ	ఎ	క	కా	కి	కు	కే
कन्नड़	ಅ	ಇ	ಉ	ಎ	ಕ	ಕಾ	ಕಿ	ಕು	ಕೆ
तमिल	அ	இ	உ	ஏ	க	கா	கி	கு	கே
मलयालम	അ	ഇ	ഉ	എ	ക	കാ	കി	കു	കേ
सिंहली	අ	ඈ	ඊ	ඒ	ක	කා	කි	කු	කේ
तिब्बती	ཨ	ཨི	ཨུ	ཨེ	ཀ		ཀི	ཀུ	ཀེ
बरमी	အ	အီ	ဥ	ဧ	က	ကာ	ကိ	ကု	ကေ
स्यामी	อ	ไ	เ	เอ	ก	กา	กิ	กู	เก



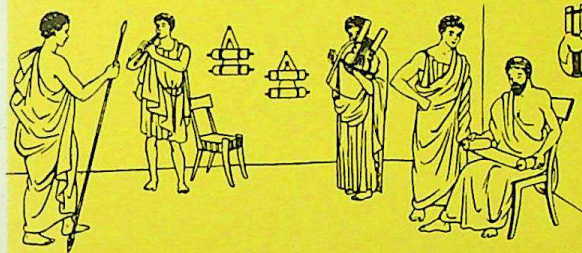
𐤀 𐤁 𐤂 𐤃 𐤄 𐤅 𐤆
𐤇 𐤈 𐤉 𐤊 𐤋 𐤌 𐤍
𐤎 𐤏 𐤐 𐤑 𐤒 𐤓 𐤔

फीनीशियाई वर्णमाला



Α Β Γ Δ Ε Ζ Η Θ
Ι Κ Λ Μ Ν Ξ Ο Π
Ρ Σ Τ Υ Φ Χ Ψ Ω

आरंभिक यूनानी वर्णमाला



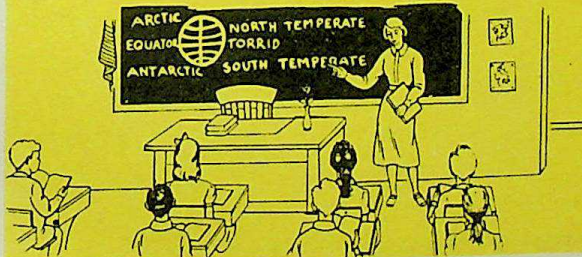
Α Β Γ Δ Ε Ζ Η Θ
Ι Κ Λ Μ Ν Ξ Ο Π
Ρ Σ Τ Υ Φ Χ Ψ Ω

बाद की यूनानी वर्णमाला



Α Β Γ Δ Ε Ζ Η Θ
Ι Κ Λ Μ Ν Ξ Ο Π
Ρ Σ Τ Υ Φ Χ Ψ Ω

लैटिन वर्णमाला



A B C D E F G H I
J K L M N O P Q R
S T U V W X Y Z

आधुनिक अंग्रेजी वर्णमाला

के लिए लहरों जैसा (~~~~) जो निशान काम में लाया जाता था, कालांतर में वह 'प' (पानी) या 'ज' (जल) का प्रतीक बन गया। हर देश में अलग-अलग बोलियां बोली जाती थीं, इसलिए चित्रलिपियों से जिन वर्णमालाओं का उदय हुआ, वे भी भिन्न-भिन्न थीं। चीन, जापान, दक्षिण-पूर्वी एशिया के देशों तथा कोरिया आदि की लिपियां आज भी बुनियादी तौर पर चित्रलिपियां ही हैं।

यूरोपीय वर्णमालाएं रोमन वर्णमाला से निकली हैं और रोमन लोगों ने लिखना प्राचीन यूनानियों से सीखा। यूनानियों ने संभवतः फीनीशिया के निवासियों से लिखने की जानकारी हासिल की थी। फीनीशिया भूमध्य सागर के पूर्वी छोर पर था। प्राचीन फीनीशियावासी आसपास

के देशों से खूब व्यापार करते थे और अपनी इन व्यापारिक यात्राओं के दौरान ही वे यूनानियों के संपर्क में भी आए और यूनानियों ने उनसे लिखने के लिए वर्णमाला के उपयोग को सीखा और विकसित किया।

खुद फीनीशियावासी जिस क्षेत्र में रहते थे, उसके सभी भागों में रहनेवाले लोग सामी या 'सेमाइट' कहलाते हैं। विद्वानों का विश्वास है कि लिखने के लिए वर्णमाला के आविष्कार का श्रेय सामी लोगों को ही है।

सामी लोगों ने भी वर्णमाला का आविष्कार संभवतः प्राचीन मिश्रवासियों की चित्रलिपि को देख और समझकर ही किया। मिश्रियों की चित्रलिपि बहुत जटिल थी। एक ही बात को प्रकट करने के लिए उसमें अनेक निशानों

भारतीय वाद्ययंत्र



की जरूरत पड़ती थी। सामी लोगों ने लिखने के इस ढंग में एक क्रांतिकारी सुधार किया—उनकी लिपि के संकेत विचार के बजाय ध्वनि को प्रकट करने लगे। इस तरह उन्होंने देखा कि वे कोई 30 संकेतों के उपयोग से ही अपनी भाषा लिख सकते हैं।

हो सकता है कि सामी लोगों के संपर्क में आकर तत्कालीन भारतवासियों—द्रविड़ों ने भी लिखना सीखा और अपनी वर्णमाला का विकास किया। बाद में आर्य जब भारत में आए तो यहां के निवासियों से उन्होंने भी लिखना सीखा और उसके आधार पर अपनी लिपि का विकास किया। बाद में यही लिपि देवनागरी लिपि की जननी बनी।

देवनागरी लिपि में अक्षरों की संख्या चाहे संसार की कई अन्य वर्णमालाओं से अधिक है, पर इसमें गुण यह है कि इस लिपि में जो लिखा जाता है, वही पढ़ा जाता है। यही नहीं, देवनागरी लिपि में संसार की प्रत्येक भाषा के अधिकांश शब्दों को शुद्ध रूप में लिखा जा सकता है।

संक्षेप में वर्णमालाओं के जन्म और विकास की यही कहानी है। लेकिन इसके बारे में कई बातें अभी भी साफ नहीं हैं और संसार-भर के भाषा-वैज्ञानिक इन प्रश्नों के उत्तर ढूंढ रहे हैं। (देखें : लेखन कला)

वर्न, जुले (JULES VERNE 1828-1905) : वर्न की पुस्तकें अब भी बड़े चाव से पढ़ी जाती हैं। उनका जन्म फ्रांस के नांते नामक स्थान में हुआ। लड़कपन में उनकी रुचि मशीनों, नौका-विहार और लिखने में थी।

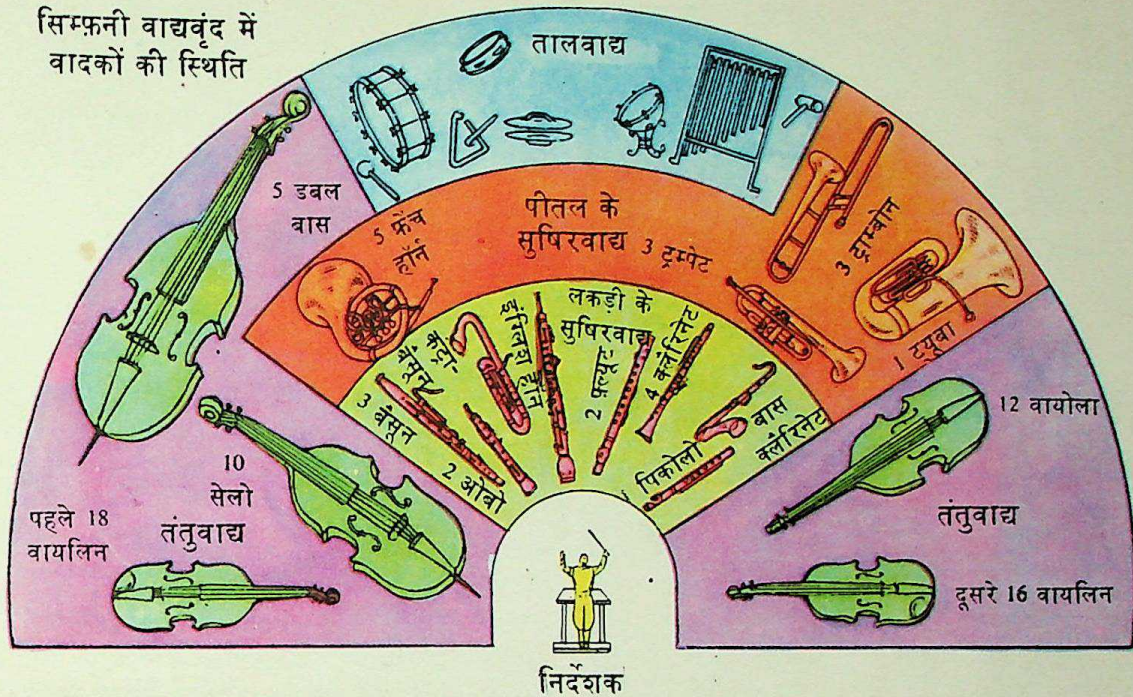
वर्न के पिता वकील थे। उनको भी वकालत पढ़ने के लिए पेरिस भेजा गया। लेकिन वे जल्दी ही समझ गए कि उनकी विशेष रुचि लिखने में है। उन्होंने वैज्ञानिक लेखकों के एक क्लब में जाना शुरू किया। क्लब के कुछ लेखक गुब्बारे के अध्ययन में लगे थे। वर्न ने एक साहसिक कहानी लिखी, जिसका नाम था 'गुब्बारे में पांच सप्ताह'।

वर्न की पुस्तकों की लोकप्रियता का एक कारण तो यही है कि वे श्रेष्ठ साहसिक कहानियां हैं और दूसरा यह कि उन्होंने ऐसे अनेक आविष्कारों का जिक्र अपने साहित्य में किया है जो उनके बहुत बाद हुए। उनका विश्वास था कि एक दिन दुनिया में ये सभी चीजें होंगी, जैसे—हवाई जहाज, पनडुब्बी, टेलीविजन, प्रक्षेपणास्त्र आदि।

जुले वर्न की सबसे लोकप्रिय पुस्तकें हैं : 'समुद्र की गहराइयों में', 'अस्सी दिन में दुनिया की सैर' आदि। जब 77 वर्ष की उम्र में जुले वर्न की मृत्यु हुई तो वे 50 से अधिक पुस्तकें लिख चुके थे।

वाद्ययंत्र (MUSICAL INSTRUMENTS) : अधिकतर वाद्य-यंत्र तीन वर्गों के अन्तर्गत आते हैं—सुषिरवाद्य, तंतुवाद्य और तालवाद्य। प्रत्येक वाद्य में कोई न कोई ऐसी वस्तु अवश्य होती है जिसे आगे-पीछे हिलाया जाता है, या

सिम्फनी वाद्यवृंद में
वादकों की स्थिति



जिसके द्वारा कंपन उत्पन्न किया जाता है। जब तक कंपन न हो तब तक वाद्ययंत्र से कोई ध्वनि नहीं निकल पाती।

सभी सुषिरवाद्यों में वायु-प्रवेश के द्वारा कंपन उत्पन्न किया जाता है। वादक उसमें फूंक भरता है। तंतुवाद्यों में तंतु या तार होते हैं। वादक उन्हें उंगलियों से छेड़ता है, या गज्र को तारों पर घिसता है। तालवाद्य चोट करके बजाए जाते हैं।

कुछ वाद्ययंत्र ऐसे भी हैं जो शुद्ध रूप से इन तीनों में से किसी भी वर्ग में नहीं आते। उदाहरण के लिए पियानो को ही ले लीजिए। इसमें अनेक तार होते हैं जो भीतर लगी हथौड़ियों के हलके-से आघात से बजते हैं। अतः यह तालवाद्य भी है और तंतुवाद्य भी।

वीणा, सितार, सरोद, रबाब, सारंगी, दिलरुबा, इसराज, ताऊस, वायलिन आदि तंतुवाद्य कहलाते हैं।

बांसुरी, अलगोजा, पोंगी, शहनाई आदि सुषिरवाद्य कहलाते हैं।

ढोल, मृदंग, पखावज, तबला, मंजीरा, भांझ, डफ आदि तालवाद्य कहलाते हैं।

(देखें : तंतुवाद्य; तालवाद्य; सुषिरवाद्य; बैण्ड)

वाद्यवृंद (ORCHESTRA) : हमारे यहां संगीत के कार्यक्रमों में एकसाथ केवल दो-तीन आदमियों के ही संगत करने की आवश्यकता होती है, लेकिन यूरोप में संगीत के किसी कार्यक्रम में दर्जनों व्यक्ति विभिन्न प्रकार के वाद्य-यंत्रों द्वारा एक निश्चित स्वरलिपि को एकसाथ बजाते हैं। इसे वाद्यवृंद या 'आर्केस्ट्रा' कहते हैं।

सबसे पहले वाद्यवृंद का संगठन इटली में सन् 1600 में

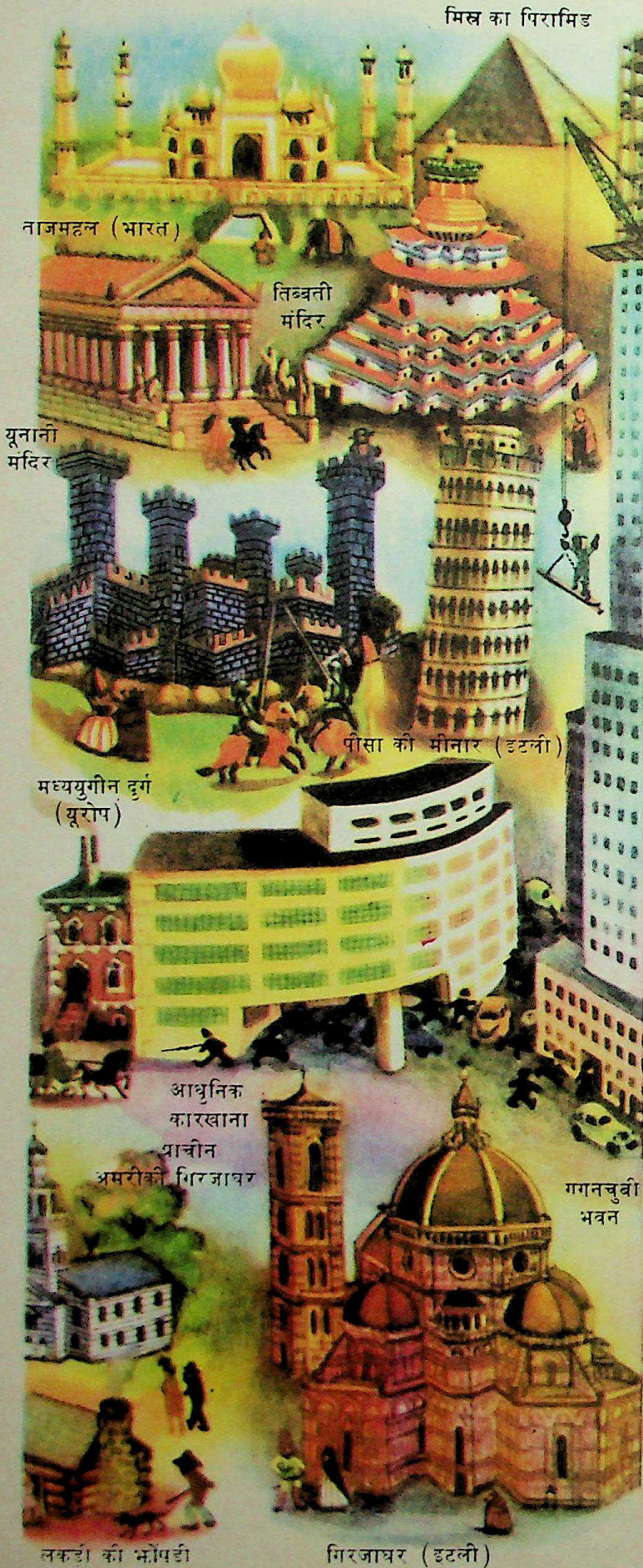
एक ऑपेरा के लिए संगीत देने के लिए हुआ। उस वाद्य-वृंद में तीन फ्ल्यूटवादक, एक थियोर्बोवादक, एक लायर-वादक, एक ल्यूटवादक और एक हार्पसिकॉर्डवादक सम्मिलित था। आगे चलकर वाद्यवृंद में कई दूसरे बाजों को भी शामिल कर लिया गया। इसके अलावा, संगीत-रचनाकार वाद्यवृंद के लिए संगीत भी लिखने लगे।

आज एक सिम्फनी वाद्यवृंद में चार दल होते हैं। इनमें एक दल तार वाले बाजों को बजाता है। दूसरा दल फूंक से बजनेवाले लकड़ी के बाजों को बजाता है, तीसरा दल पीतल के बाजों को बजाता है, और चौथा दल चोब की चोट से बजनेवाले बाजों को बजाता है। अधिकांश सिम्फनी वाद्यवृंद में 60 से 110 तक वादक होते हैं।

वाद्यवृंद में एक निर्देशक होता है। पहले वह खुद बाजा भी बजाता था और निर्देश भी देता था। पर आज-कल वह वादक-मंडली के सामने खड़ा होकर वहीं से संकेत करता रहता है।

वास्तुकला (ARCHITECTURE) : सुन्दर चित्र या सुन्दर संगीत की भांति किसी सुन्दर इमारत को भी कलाकृति ही कहा जाएगा। लेकिन इस इमारत का निर्माण करने-वाले वास्तुविद् को जिन समस्याओं का सामना करना होगा, वे चित्रकार या संगीतज्ञ की समस्याओं से एकदम भिन्न होंगी। उसकी इमारत सुन्दर ही नहीं, उपयोगी भी होनी चाहिए। इमारत सिर्फ देखने के ही लिए नहीं होती, उसके और भी उपयोग होते हैं।

इमारत दीवारों से घिरी उस जगह को कहते हैं जिस-पर छत होती है। दीवारें बनाना आसान है। मनुष्य ने



बहुत पहले दीवारें बनाना सीख लिया था। मगर दीवारों में खिड़कियां और दरवाजे बनाना इतना आसान नहीं है। और छत बनाना तो और भी पेचीदा काम है। छत इतनी मजबूत होनी चाहिए कि टूटे नहीं, और साथ ही वह इतनी भारी भी नहीं होनी चाहिए कि उसके भार से दीवारें ही ढह जाएं। छत की किस्म का भी वास्तुकला के पूरे स्वरूप पर प्रभाव पड़ता है।

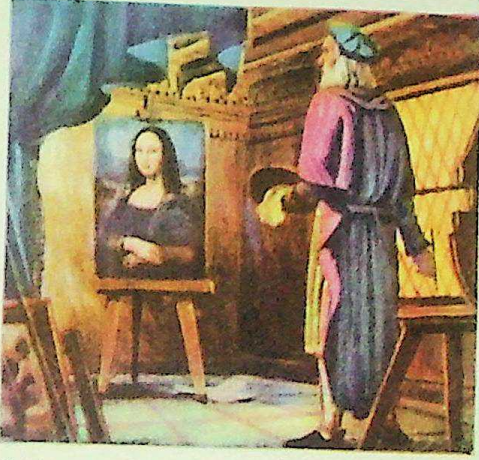
इमारत बनाने का सामान भी वास्तुविद् की एक समस्या है। मनुष्य ने कई तरह के इमारती सामान का उपयोग किया है। पुराने जमाने में पत्थर का ज्यादा चलन था। जहां पत्थर नहीं मिलता था, वहां लोग मिट्टी का इस्तेमाल करते थे। फिर कच्ची ईंटों के मकान बनने लगे। हमारे देश में देहातों में अब तक मिट्टी के या कच्ची ईंटों के मकान बनाए जाते हैं। पक्की—तपाई हुई—ईंटें बहुत बाद की खोज हैं। मेहराबों और खंभों से इमारतों की शोभा और मजबूती को बढ़ाना भी धीरे-धीरे मनुष्य ने सीख लिया।

हाल के सालों में इमारती सामान में कितनी ही नई किस्मों की ईजाद हुई है—लोहा, सीमेंट, कंक्रीट, कांच आदि। इन नई चीजों की बदौलत वास्तुविदों को अपने काम में काफी सुविधा और आजादी मिल गई है। लोहे या इस्पात और कंक्रीट के उपयोग से गगनचुम्बी मजबूत इमारतें बनाना संभव हो गया है।

वास्तुविदों को असल में कई काम एकसाथ करने पड़ते हैं और इसलिए इनकी जानकारी भी उनके लिए जरूरी है। वास्तुविद् के लिए डिजाइनिंग, इंजीनियरी, चित्रकला तथा गणित का ज्ञान आवश्यक है।

पहले बड़ी और भव्य इमारतें आम जनता के रहने के लिए नहीं होती थीं। राजा और जागीरदार अपने महल बनवाते थे, या फिर मंदिरों, मस्जिदों, गिरजाघरों और समाधियों तथा मकबूरों की ही आलीशान इमारतें बना करती थीं। लेकिन अब तो भवन-निर्माण-कला के सबसे सुन्दर नमूने रिहायशी मकानों, दुकानों, विद्यालयों, दफतरो और होटलों में नजर आते हैं।

विंकी, लियोनार्दो दा (LEONARDO DA VINCI 1452-1519) : इस बात से कोई इनकार नहीं करता कि लियोनार्दो दा विंकी की गणना विश्व के सर्वश्रेष्ठ चित्रकारों में होती है। उनका चित्र 'द लास्ट सपर' शायद विश्व का सबसे प्रसिद्ध चित्र है। लेकिन अगर लियोनार्दो हाथ में तूलिका न भी उठाते तो भी उनका नाम प्रसिद्ध हुआ होता। क्योंकि वे एक महान आविष्कर्ता भी थे। उन्होंने सैनिक टैंक और बाल-बेयरिंग का आविष्कार किया। उन्होंने हवाई जहाज और पनडुब्बी के नमूनों पर भी प्रयोग किए। उन्होंने दर्जनों शस्त्रों और मशीनों के नक्शे तैयार किए। वे एक महान वैज्ञानिक और इंजीनियर थे। वे कवि,



विंकी अपना प्रसिद्ध चित्र 'मोना लिसा' बनाते हुए ।

संगीतज्ञ और मूर्तिकार भी थे ।

लियोनार्दो का जन्म इटली के विंकी नामक गांव में हुआ । उन्होंने 25 वर्ष की अवस्था तक वेरोचियो नामक एक प्रसिद्ध चित्रकार से चित्रकला सीखी । इसके बाद वे स्वयं चित्र बनाने लगे । पहले कुछ दिन वे फ्लोरेंस में रहे, फिर मिलान और वेनिस में । अंत में वे पेरिस चले गए और अपने जीवन के अंतिम दिन उन्होंने फ्रांस के बादशाह के दरबारी चित्रकार के रूप में बिताए ।

उनका प्रसिद्ध चित्र 'द लास्ट सपर' मिलान के एक गिरजाघर की दीवार पर बना हुआ है । पूरा होने के पहले ही यह चित्र अत्यंत प्रसिद्ध हो गया था ।

लियोनार्दो के चित्रों का सौंदर्य सुन्दर संगीत के समान ही वर्णनातीत है । उनकी आकृतियों के मुख भावों से

परिपूर्ण हैं । उन्होंने छाया और प्रकाश का प्रयोग एक नये ढंग से किया, जिसने उनकी आकृतियों को जीवंत बना दिया ।

लियोनार्दो का एक अन्य प्रसिद्ध चित्र है 'मोना लिसा'। यह चित्र एक महिला का है जिसके ओंठों पर मंद मुस्कान है । आजकल यह चित्र पेरिस के चित्र-संग्रहालय की अमूल्य निधि है ।

विश्वभाषा (UNIVERSAL LANGUAGE) : दुनिया में एक ऐसी भाषा की जरूरत है जिसे सब समझ सकें । अगर दुनिया में भाषा की दीवारें न हों तो राष्ट्रों में मैत्री बहुत बढ़ सकती है ।

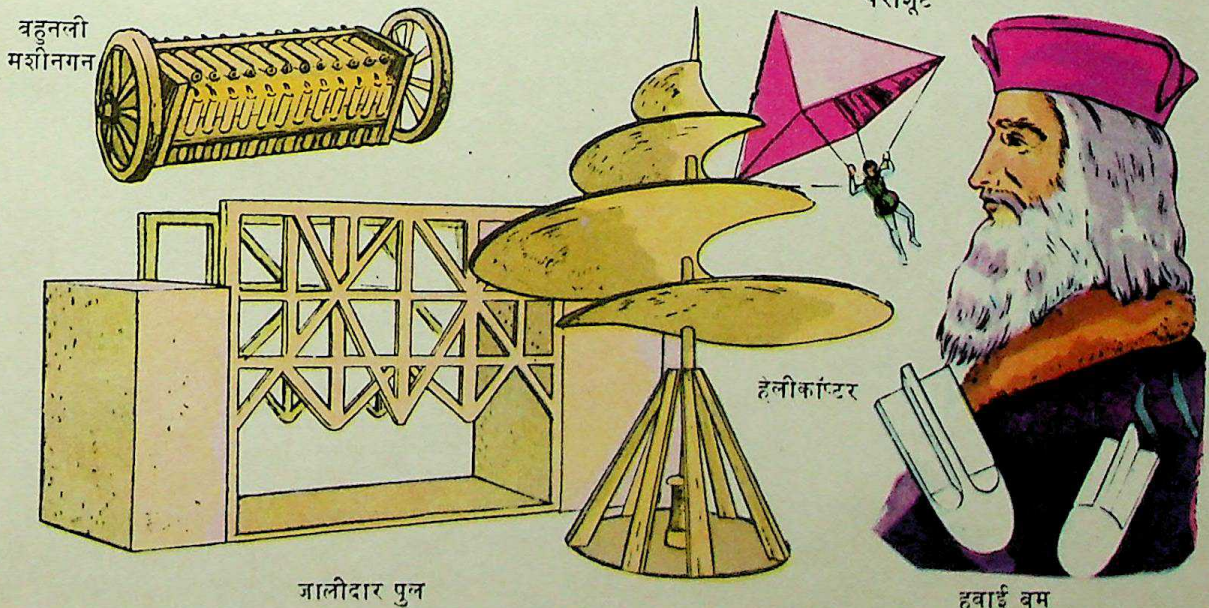
विश्वभाषा या सार्वभौमिक भाषा का विचार नया नहीं है । अनेक लोगों ने इस तरह की एक भाषा बनाने का प्रयत्न किया है ।

सन् 1879 में जोहान मार्टिन श्लेयर नामक जर्मन पादरी ने एक भाषा का आविष्कार किया, जिसका नाम उसने वोलेपुक (Volapuk) रखा । शुरू में ऐसा लगा था कि इस नई भाषा को सफलता मिलेगी । लेकिन, आगे चलकर इस भाषा का भविष्य खटाई में पड़ गया ।

कुछ वर्ष बाद रूस के डा० एल० एल० जैमेनोफ़ ने एक भाषा का आविष्कार किया । जब उसने इस भाषा पर अपनी पहली पुस्तक प्रकाशित कराई तो उसने लेखक के स्थान पर अपना नाम 'डाक्टरो एस्पेरेंटो' अर्थात् आशावान डाक्टर रखा । उसकी यह नई भाषा एस्पेरेंटो (Esperanto) के नाम से विख्यात हुई ।

एस्पेरेंटो एक सर्वथा नवीन भाषा नहीं है । इसका निर्माण

लियोनार्दो दा विंकी और उनके कुछ आविष्कार

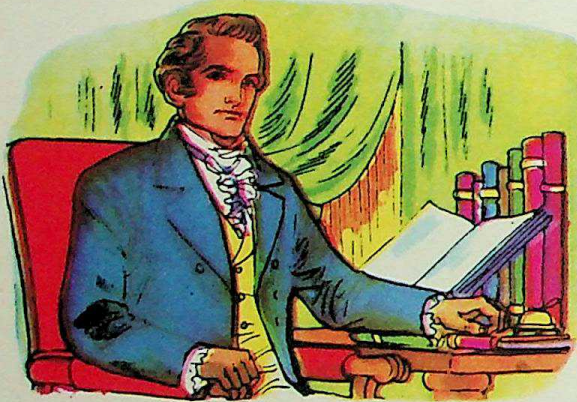


जालीदार पुल

हवाई बम

आज की प्रमुख यूरोपीय भाषाओं में पाई जानेवाली ध्वनियों और शब्दों के आधार पर हुआ है। इसके प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए अनेक प्रयत्न किए गए हैं। भारतवर्ष में भी कुछ नगरों में एस्पेरंटो सिखाने के केन्द्र खोले गए हैं। लेकिन इस भाषा को अभी अधिक सफलता नहीं मिल सकी है।

विश्वभाषा बनाने का प्रयत्न करनेवालों में से कुछ ने तो एकदम नई भाषा का आविष्कार किया। इसके विपरीत, कुछ लोगों ने व्यापक क्षेत्र में प्रयुक्त होनेवाली भाषा का सरलीकरण करके उसीको विश्वभाषा बनाने का प्रयत्न किया। इस तरह की सरलीकृत भाषाओं में से एक बेसिक इंग्लिश है। बेसिक इंग्लिश का निर्माण आम इंग्लिश के 850 शब्दों से किया गया है।



पहला बड़ा अमरीकी शब्दकोश वेब्सटर ने ही बनाया था।

वेब्सटर, नोआ (NOAH WEBSTER 1758-1843) : जब भी हमें अंग्रेजी के किसी शब्द के हिज्जे देखने होते हैं, या उसका उच्चारण अथवा अर्थ जानना होता है, तो हम कोश (डिक्शनरी) की सहायता लेते हैं। पहला बड़ा अमरीकी शब्दकोश वेब्सटर ने ही तैयार किया था।

वेब्सटर का जन्म संयुक्त राज्य अमरीका की स्थापना से पहले कनेक्टिकट में हुआ। वेब्सटर ने येल के एक कालेज में शिक्षा पाई और कुछ दिन क्रांतिकारी युद्ध में भी भाग लिया। शिक्षा पूरी होने पर वे पहले एक स्कूल में अध्यापक हुए, और फिर वकालत करने लगे। उन्होंने कई महत्वपूर्ण पदों पर काम किया और कितनी ही पुस्तिकाएं लिखीं।

वेब्सटर अपनी दो पुस्तकों के लिए मशहूर हैं। एक, स्पेलिंग बुक और दूसरा, कोश। स्पेलिंग बुक 1783 में प्रकाशित हुई और सौ से भी अधिक साल तक खूब लोकप्रिय रही। इसकी 6 करोड़ से भी अधिक प्रतियां बिक चुकी हैं।

कोश तैयार करने में वेब्सटर को बीस साल लगे। इस सिलसिले में उन्हें कई बार विद्वानों से सलाह-मशविरा करने के लिए इंग्लैंड और फ्रांस भी जाना पड़ा। कोश का

पहला संस्करण 1828 में और दूसरा 1840 में निकला। पहले संस्करण में 12,000 शब्द और 30-40 हजार अर्थ दिए गए थे। अपने इस कोश द्वारा वेब्सटर ने हिज्जों को सरल करने की दिशा में भी बहुत काम किया।

वेब्सटर के कोश की अभी भी लाखों प्रतियां छपती हैं। तब से उसमें अनेक परिवर्तन भी किए गए हैं। जो शब्द वेब्सटर ने कभी सुने या सोचे भी नहीं थे, वे उसमें शामिल किए गए हैं। आज की 'वेब्सटर्स न्यू इंटरनेशनल डिक्शनरी' में 6 लाख से भी अधिक शब्द हैं। यह कोश इतना प्रसिद्ध है कि कई बार शब्द-संबंधी विवाद इसीके आधार पर सुलझाए जाते हैं।

शंकराचार्य (SHANKARACHARYA) : मध्ययुग के भारतीय दार्शनिकों तथा धर्मप्रचारकों में शंकराचार्य सर्वोपरि थे। उन्होंने अद्वैत वेदान्त का निरूपण किया और भारत के चारों कोनों में चार मठ स्थापित किए। ये चार मठ बद्रीनाथ, जगन्नाथपुरी, द्वारिका और शृंगेरी में हैं। उन्होंने ब्रह्मसूत्र, गीता तथा अन्य प्राचीन दर्शन ग्रंथों की टीकाएं भी प्रस्तुत कीं।

शंकराचार्य के समय के विषय में बड़ा मतभेद है। सामान्यतया यह माना जाता है कि वे आठवीं शताब्दी में हुए। उनका जन्मस्थान केरल का कालडी नामक ग्राम था। बचपन से ही उनमें संन्यास लेने की इच्छा जाग गई थी। परंतु मां इसकी अनुमति नहीं देती थीं। तब वे एक नदी में घुस गए और बोले—मां, मगर मुझे खींचे लिए जा रहा है। तुम मुझे संन्यास की आज्ञा दो तो वह छोड़ देगा। हारकर मां ने उन्हें संन्यास ग्रहण करने की आज्ञा दे दी।

संन्यास लेकर शंकराचार्य ने थोड़े-से समय में ही सब वेद-पुराण पढ़ डाले। फिर गुरु की आज्ञा लेकर धर्म-प्रचार करने चल पड़े। इस समय उनकी अवस्था केवल सत्रह वर्ष की थी। देश-भर में घूम-घूम कर उन्होंने अन्य मतावलंबियों से शास्त्रार्थ किया और उन्हें हराया। वे सब उनके शिष्य बन गए। तब उन्होंने गढ़ियां स्थापित कीं।

जब उनकी मां के देहान्त का समय आया, तब शंकराचार्य घर लौटे। मां का क्रियाकर्म करने के बाद वे फिर अपने कार्य में लग गए। उनके अनथक प्रयत्नों के परिणाम-स्वरूप सारे देश में वेदान्त का डंका बजने लगा।

मृत्यु के समय उनकी अवस्था केवल तैंतीस वर्ष की थी। इतने थोड़े समय में उन्होंने जो महान कार्य कर दिखाया, वह अतुलनीय है।

शब्दावली (VOCABULARY) : किसी भी समृद्ध भाषा के शब्दकोश को उठा लीजिए। आपको उसमें अनेक शब्द ऐसे मिलेंगे जिनके अर्थ या प्रयोग के बारे में आपको नहीं मालूम—चाहे उस भाषा पर आपका कितना ही अधिकार

क्यों न हो। हर व्यक्ति की शब्दावली सीमित होती है। जब बच्चा स्कूल जाने के काबिल होता है तो प्रायः उसकी शब्दावली 2,000 और 3,000 शब्दों के बीच होती है। शिक्षा की प्रगति के साथ-साथ उसकी शब्दावली भी बढ़ती जाती है। एक सुशिक्षित व्यक्ति की शब्दावली में लगभग 50,000 शब्द होते हैं।

किसी भी पढ़े-लिखे आदमी की तीन शब्दावलियां होती हैं : बोलने की शब्दावली, पढ़ने की शब्दावली और लिखने की शब्दावली। अधिकतर लोगों की पढ़ने की शब्दावली में सबसे अधिक और बोलने की शब्दावली में सबसे कम शब्द होते हैं। अगर किसी आदमी की शब्दावली में 1000 सामान्य शब्द हों तो वह अपना काम मजे से चला सकता है।

लेकिन कोई आदमी कामचलाऊ शब्दावली से संतुष्ट नहीं होता। वह जानता है कि अच्छी शब्दावली होने पर वह अपने विचारों को कहीं अच्छी तरह प्रकट कर सकता है। अधिक शब्दों की जानकारी होने पर पढ़ने में भी अधिक आनन्द आता है। इसलिए अनेक लोग अपनी शब्दावली को व्यापक बनाने के लिए प्रयत्न करते हैं। इसका एक उपाय शब्दकोश देखना और उसमें से नये शब्दों को छांटकर उनका ठीक-ठीक अर्थ सीखना है। दूसरा तरीका नये शब्दों के प्रयोग पर बल देना है।

शेक्सपियर, विलियम (WILLIAM SHAKESPEARE 1564-1616) : लन्दन से 93 मील उत्तर-पश्चिम में एक मंडी है, जिसका नाम स्ट्रैटफर्ड-ऑन-एवॉन है। यहीं विलियम शेक्सपियर का जन्म हुआ था। वह एलिजाबेथ प्रथम का युग था।

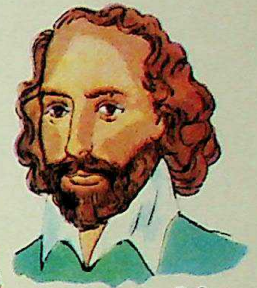
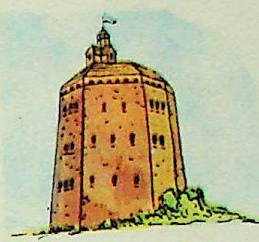
अठारह साल की उम्र से ही शेक्सपियर ने अपनी रोजी खुद कमाना शुरू कर दी थी। शेक्सपियर के विवाह के तुरन्त बाद के जीवन के बारे में विशेष कुछ पता नहीं। कुछ वर्ष बाद वे अभिनेता के रूप में लन्दन आए और नाटक भी लिखने लगे। उनके नाटक पद्य में होते थे।

सन् 1592 में लन्दन में प्लेग की महामारी फैल गई। दो वर्ष के लिए लन्दन के सारे नाटकघर बंद कर दिए गए। इन दो वर्षों में शेक्सपियर ने लंबी-लंबी कविताएं लिखीं। उन्होंने कोई सौ सॉनेट लिखे। सॉनेट चौदह पंक्तियों का छन्द होता है।

प्लेग समाप्त होने के बाद नाटकघर फिर खुल गए। शेक्सपियर अब अपना अधिकांश समय नाटक लिखने में लगाने लगे। वे एक नाटक कंपनी में भागीदार भी बन गए। इस कंपनी का नाम 'लॉर्ड चैम्बरलेन्स मैन' था और यह शाही महलों में भी जाकर कभी-कभी नाटक खेलती थी।

शेक्सपियर के कुछ नाटकों के कथानक ऐतिहासिक हैं। इनमें से कुछ इंग्लैंड के पुराने राजाओं के जीवन पर आधारित हैं; जैसे, 'हेनरी चतुर्थ', 'हेनरी पंचम' और

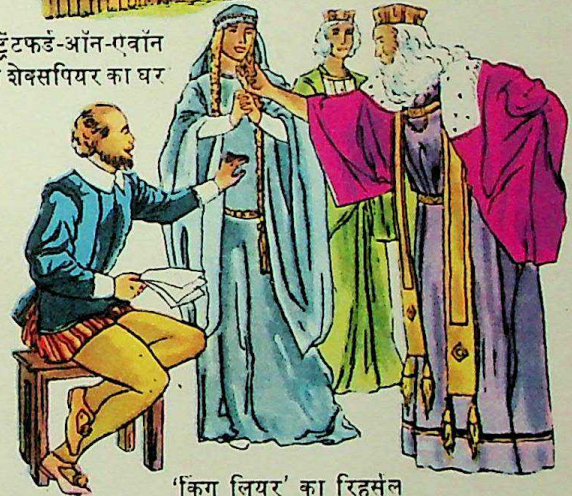
ग्लोब थियेटर



विलियम शेक्सपियर



स्ट्रैटफर्ड-ऑन-एवॉन में शेक्सपियर का घर



'किंग लियर' का रिहसल

'रिचर्ड तृतीय'। इनमें ऐतिहासिक तथ्य ज्यों के त्यों नहीं हैं।

ऐतिहासिक नाटकों के अलावा कई दुःखान्त और सुखान्त नाटक भी शेक्सपियर ने लिखे। 'रोमियो एण्ड जूलियट' प्रसिद्ध दुःखान्त नाटक है। इसमें दो ऐसे प्रेमियों की कहानी है जिनके परिवारों के बीच परस्पर बड़ी घृणा थी। प्रेमियों की मृत्यु से नाटक का अन्त होता है। 'हैमलेट', 'मैकबेथ' और 'ओथेलो' भी दुःखान्त हैं। सुखान्त नाटकों में 'ए मिडसमर नाइट्स ड्रीम', 'द टेमिंग ऑफ द श्रू' और 'द मर्चेण्ट ऑफ वेनिस' का नाम उल्लेखनीय है।

शेक्सपियर ने अधिकांश कथानक अन्य लेखकों से लिए हैं। किन्तु उन्हें प्रस्तुत करने की उनकी अपनी शैली है।

उनके लोकप्रिय नाटकों का अनेक भाषाओं में अनुवाद हुआ है। कुछ लोग कहते हैं कि 'हैमलेट' शेक्सपियर की सबसे महान कृति है। शेक्सपियर को मरे तीन सौ वर्ष हो गए, लेकिन आज भी अभिनेताओं की यही आकांक्षा रहती है कि वे 'हैमलेट' का सफल अभिनय कर सकें।

संगीत (MUSIC) : आदिमानव ने अपने आसपास संगीत-मय ध्वनियां सुनी। उसे पक्षियों का गान, नदियों का कलकल शब्द तथा समुद्रतट पर उठती-गिरती लहरों का शब्द मधुर प्रतीत हुआ।

कोई नहीं जानता कब, पर बहुत पहले लोगों के मन में संगीत रचने की आकांक्षा उत्पन्न हुई। उन्होंने देखा कि संगीत के द्वारा जहां मन की भावनाओं को व्यक्त किया जा सकता है, वहां मधुर ध्वनियां भी उत्पन्न की जा सकती हैं।

अन्य सभी ध्वनियों की भांति संगीत-ध्वनियां भी कंपन से उत्पन्न होती हैं। संगीत की ध्वनियों में कंपन नियमित और नियंत्रित होता है।

लय-ताल, स्वरमाधुर्य और सहस्वरता संगीत के आवश्यक अंग हैं। लय-ताल और स्वरमाधुर्य की उत्पत्ति सहस्वरता से बहुत पहले हुई। ध्वनि के प्रवाह में लय में बंधी हुई मात्राओं को ताल कहते हैं। ध्वनि के मिठास को स्वरमाधुर्य कहते हैं। स्वर की शुद्ध गति लय कहलाती है। विभिन्न स्वरों का एकसाथ गाना या बजाना सह-स्वरता कहलाता है।

संगीत को बहुधा सार्वभौम भाषा कहा जाता है। बोली जानेवाली भाषाओं की जो सीमाएं हैं, वे संगीत में नहीं हैं। जो गायक हमारी भाषा का एक अक्षर भी बोलना नहीं जानता, वह भी संगीत के द्वारा हममें गर्व और उल्लास, उमंग और निराशा तथा शांति और रहस्य का संचार कर सकता है।

(देखें : संगीत, भारतीय; वाद्यवृंद)

संगीत, भारतीय (INDIAN MUSIC) : साधारण तौर पर भारतीय शास्त्रीय संगीत को दो प्रमुख शैलियों में बांटा जाता है। उत्तर भारत की संगीत शैली को हिन्दुस्तानी कहते हैं और दक्षिण भारत की शैली को कर्नाटकी। कर्नाटकी शैली का विस्तार प्रायः समूचे दक्षिण भारत में है। लेकिन हिन्दुस्तानी शैली न केवल उत्तर भारत में प्रचलित है, बल्कि दक्षिण भारत में भी इसका प्रचलन पाया जाता है।

शास्त्रीय संगीत का प्रारंभ वैदिक काल में ही हो गया था। धीरे-धीरे इसका विकास होता गया और इसके अपने स्वर, लय, ताल, और राग बनते गए। इनके नियमों को लेकर ही अनेक ग्रंथ रचे गए।

भारतीय संगीत के विकास में हिन्दू और मुसलमान दोनों जातियों के संगीतकारों ने मिलकर काम किया है। इसीलिए परम्परा से इनके स्थानीय घराने भी बन गए हैं। उत्तर में ग्वालियर, लखनऊ, बनारस आदि इसी तरह के प्रसिद्ध घराने रहे हैं।

शास्त्रीय संगीत रागों और रागिनियों से गठित हुआ है। रागों की दो रीतियां हैं—आधुनिक और प्राचीन।

आधुनिक राग दस प्रकार के माने जाते हैं। प्राचीन परम्परा के अनुसार राग छः हैं। इन्हें भैरवी, श्री, मालकौस दीपक, मेघ और हिन्दोल कहा जाता है। भैरवी, श्री और मालकौस सुबह, शाम या तीसरे पहर गाए जाते हैं। बाकी तीन ऋतुओं के राग हैं।

इन रागों के अतिरिक्त 36 रागिनियां हैं। रागों-रागिनियों के साथ इनके उपभेद भी विकसित हुए हैं। ध्रुपद, होरी, धमार, खयाल, टप्पा कुछ प्रमुख राग हैं।

ध्रुपद : यह पिछली तीन-चार सदियों से लोकप्रिय रहा है। तानसेन ध्रुपद के सबसे अच्छे गायक थे।

होरी और धमार : इनका संबंध अधिकतर होली के त्योहार से होता है। ये ध्रुपद से मिलते-जुलते ही हैं।

खयाल : यह हिन्दू और मुस्लिम संस्कृतियों की मिली-जुली उपज है।

टप्पा : इसका रस शृंगार है। पहले इसे पंजाब के ऊंटवान गाया करते थे।

देशी गाने शास्त्रीय संगीत के साथ ही साथ गाए जाते हैं। इनमें प्रधान ठुमरी, गजल, दादरा, कव्वाली, कीर्तन, और भजन हैं।

ठुमरी : इसका जन्म और विकास उत्तर प्रदेश में हुआ। बनारसी ठुमरी पर लोकभाषा का बहुत असर पड़ा।

गजल : यह फ़ारसी की देन है। इसको विशेष लोक-प्रियता कव्वालों आदि के द्वारा मिली।

दादरा : यह ठुमरी से बहुत कुछ मिलता-जुलता है। किंतु दोनों की तालों में अन्तर है। दादरा का जन्म और विकास बनारस में हुआ।

कव्वाली : इसका विषय पहले धार्मिक ही रहा है। यह अधिकतर मजारों का गीत है। कव्वाली हारमोनियम और ढोलक की मदद से गाई जाती है।

कीर्तन और भजन : इन्हें हिन्दुओं में वही स्थान प्राप्त है जो मुसलमानों में कव्वाली को। ये बहुत प्राचीन काल से बनते आए हैं। इनका संबंध धार्मिक आन्दोलनों से है। आलवार भक्तों, रामानुज, वल्लभ, कबीर, चैतन्य, मीरा, सूरदास, तुलसीदास आदि सभी के पद कीर्तन और भजन के रूप में बड़े मनोयोग से गाए जाते हैं।

(देखें : तानसेन)

संसार के सात आश्चर्य (SEVEN WONDERS OF THE WORLD) : बहुत समय पहले जब बड़ी-बड़ी मशीनें नहीं थीं, तब भी मानव ने यह दिखला दिया था कि वह कितनी आश्चर्यजनक चीजें बना सकता है। प्राचीन युग के वास्तुकला के कुछ ऐसे नमूने हैं जो आदमी को आश्चर्य में डाल देते हैं, जैसे मिस्र के पिरामिड, बेबीलोन के तल्ले-दार बाग, ओलम्पिया में जिअस की मूर्ति, दायना देवी का मंदिर, राजा मॉसोलस का मकबरा, रोड्ज की विशालकाय मूर्ति और सिकन्दरिया का प्रकाश-स्तंभ।



पिरामिड असल में मकबरे हैं। पहला पिरामिड मिस्र के शासक खूफू ने अपने लिए बनवाया था। इसमें बीस लाख से अधिक शिलाखण्ड लगे हैं। हर एक खण्ड का वजन तीन टन है। यह पिरामिड 481 फुट ऊंचा है और इसके चौकोर आधार का हर पार्श्व 755 फुट लम्बा है। यह काहिरा से कुछ दूर गीज़ा नामक कस्बे में है।

ढाई हजार वर्ष पहले, बेबीलोन नगर अपनी बड़ी-बड़ी दीवारों के लिए प्रसिद्ध था। यह नगर दज़ला और फ़रात नदियों के दो आबे में बसा था। पूरा शहर दीवारों से घिरा था। इसके अलावा तीन सौ फुट से भी ऊंची और दीवारें थीं, जो राजमहल की रक्षा करती थीं। इन दीवारों पर आज के उद्यानों से भी खूबसूरत बाग थे। ये बाग तल्लेदार बाग कहलाते थे। कहा जाता है कि राजा नेबुक-दनेज़ार की रानी पहाड़ी थी। वह अपने घर के आस-पास की हरियाली के लिए लालायित रहती थी। राजा ने अपनी रानी को प्रसन्न रखने के लिए बाग लगवाया था।

ज़िअस यूनानी देवता है। यूनान के ओलम्पिया नगर में मूर्तिकार फ़िडीयास ने लगभग 2,400 वर्ष पूर्व इसकी प्रस्तर प्रतिमा बनाई थी। यह मूर्ति चालीस फुट ऊंची थी। इसपर हाथीदांत और सोने की परत चढ़ी थी। आंखों में रत्न लगे थे। यह प्रतिमा सैकड़ों वर्ष बनी रही और फिर ध्वस्त हो गई।

एशिया माइनर के एफ़ीसस नगर में दायना देवी का एक मंदिर 400 ई० पू० में बनाया गया था। इस मंदिर की प्रसिद्धि इसके खंभों के कारण थी। 600 वर्ष तक यह ऐसा ही रहा। लेकिन बाद में बर्बर आक्रमणकारियों ने इसे लूट लिया और तोड़-फोड़ दिया।

एक एशियाई राज्य के शासक मॉसोलस का जब देहान्त हुआ तो उसके लिए हैलीकारनासस (एशिया माइनर) में एक स्मारक बनवाया गया। यह पिरामिड जितना ऊंचा तो नहीं था, लेकिन खूबसूरती में अन्य कोई प्राचीन स्मारक इसकी तुलना नहीं कर सकता था। यह 100 फुट से अधिक ऊंचा था और इसके ऊपर रथ था जिसमें घोड़े जुते हुए थे। रथ में राजा और रानी की प्रतिमाएं थीं। यह स्मारक 353 ई० पू० में बना था। यह 1,900 साल तक खड़ा रहा और बाद में एक भूकम्प के कारण नष्ट हो गया।

280 ई० पू० में रोडज़ की जनता ने अपनी विजय के उपलक्ष्य में एक विशालकाय मूर्ति बनवाई। रोडज़ नगर ईजियन सागर में एक द्वीप पर है। इस मूर्ति का नाम कोलोसस था। यह मूर्ति रोडज़ बन्दरगाह में घुसते ही दिखलाई पड़ती थी। मूर्ति 100 फुट ऊंची थी। निर्माण के 56 वर्ष बाद यह भूकम्प में नष्ट हो गई।

सिकन्दरिया का प्राचीन प्रकाश-स्तंभ 400 फुट ऊंचा था। इसके ऊपर आग जलती रहती थी, जो पानी में

छिपी हुई चट्टानों से नाविकों को सावधान करती रहती थी। यह प्रकाश-स्तंभ 250 ई० पू० से पहले बना था और 1,500 वर्ष बाद नष्ट हो गया।

सर्वति सावेद्रा, मिगुएल द (MIGUEL DE CERVANTES SAAVEDRA 1547-1616) : डॉन क्विक्ज़ोट की कहानी दुनिया-भर में मशहूर है। इस कहानी का नायक अनेक तरह के खतरे उठाता है। लेकिन इसके लेखक सर्वति ने इससे भी अधिक खतरे उठाए थे। वे अपने जीवन-काल में क्रमशः एक सैनिक, समुद्री लुटेरों के कैदी, गुलाम, लेखक तथा उच्च अधिकारी रहे और उन्हें एक बार जेल की हवा भी खानी पड़ी। लेकिन वे एक महान कहानीकार थे। उनके उपन्यास ने दुनिया के करोड़ों आदमियों का मनोरंजन किया है।

डॉन क्विक्ज़ोट एक अधेड़ उम्र का स्पेनी विद्वान है। अपना अधिकतर समय वह बहादुर सामंतों, विपत्ति की मारी स्त्रियों और भयानक सर्पों की कहानियां पढ़ने में बिताता है। अंत में वह अपने को भी एक शूरवीर योद्धा समझ बैठता है। वह अपने बूढ़े और मरियल घोड़े पर सवार होकर, और अपने मोटे हंसोड़ नौकर सांको पांज़ा को साथ लेकर, साहसिक कार्यों के लिए निकल पड़ता है।

डॉन क्विक्ज़ोट को दूर की चीज़ साफ दिखाई नहीं देती। जब वह घर से निकलता है, तो रास्ते में उसे कुछ पवन-चक्कियां मिलती हैं। वह समझता है कि ये भयानक दैत्य हैं, जो अपने हाथों से उसे ललकार रहे हैं। वह अपने भाले से उनपर वार कर देता है। पवन-चक्की के पंखों की झपेट में आकर उसका भाला टूट जाता है। अब तो उसे इस बात में संदेह ही नहीं रह जाता कि ये सचमुच दैत्य हैं।

डॉन क्विक्ज़ोट अनेक जोखिम उठाता है, जिनमें से अधिकतर उसके वहम के कारण पैदा होती हैं। अंत में किसी तरह उसके होश-हवास ठिकाने आते हैं और उसे अपनी भूल का पता चलता है। इसके बाद वह दुस्साहसिक कहानियां पढ़ने से कान पकड़ लेता है।

साहित्य (LITERATURE) : जब तक लोगों को लिखना-पढ़ना नहीं आया था, तब तक साहित्य का नाम-निशान नहीं था। लेकिन जो कुछ भी लिखित रूप में मिलता है वह सारा का सारा साहित्य नहीं है। पकवान बनाने के नुस्खे को कोई साहित्य नहीं कहेगा। कोई लिखित चीज़ तब तक साहित्य नहीं कही जा सकती जब तक लेखक अपने पाठकों में कोई नया भाव न पैदा कर दे, या किसी बात को अधिक गहराई से महसूस न कराए, या दूसरे रूपों में प्रभावित न कर दे। साहित्यकार अपने शब्दों का उपयोग उतनी ही सावधानी से करता है जितनी सावधानी से चित्रकार अपने रंगों का प्रयोग करता है।

साहित्य में कई तरह का लेखन सम्मिलित है, जैसे

विश्व बाल साहित्य के कुछ प्रमुख पात्र



'एलिस इन वंडरलैंड' 1865
लेविस कैरोल

'ट्रेज़र आइलैंड' 1883
आर० एल० स्टीवेंसन

'रोबिन्सन क्रूसो' 1719
डेनियल डिफो

'सिंडबाला' 1697
चार्ल्स पेगलट

कहानियाँ, कविताएँ, नाटक, उपन्यास, जीवन-चरित, निबंध आदि। प्रायः कहानियाँ छोटी होती हैं। अनेक लम्बी कहानियों को उपन्यास कहते हैं। कविताएँ भी छोटी और बड़ी होती हैं। जो कविताएँ बहुत लम्बी होती हैं और साथ ही जिनमें कोई वीरता की कहानी कही गई होती है उसे महाकाव्य कहते हैं। नाटक या तो सुखान्त होते हैं अथवा दुःखान्त। बहुत ही हलके-फुलके या हंसी-मजाक से भरे नाटक को प्रहसन कहते हैं।

हर सभ्य देश का अपना साहित्य होता है। कुछ लोग दूसरी भाषाएँ दूसरे देशों के साहित्य को पढ़ने के लिए सीखते हैं।

साहित्य की कुछ रचनाएँ इतनी अच्छी हैं कि वे सैकड़ों, यहां तक कि हजारों वर्ष से अब तक चली आ रही हैं। वेदव्यास का 'महाभारत' और वाल्मीकि की 'रामायण' तथा कालिदास की 'शकुन्तला' आज से सदियों पहले की रचनाएँ हैं। 'इलियड' और 'ओडेसी' भी इसी तरह पश्चिम

की सैकड़ों वर्ष पहले की कृतियाँ हैं। तुलसीदास-कृत 'रामचरितमानस' आज से 300 वर्ष पहले की रचना है। यही हालत शेक्सपियर के नाटकों की है।

कुछ लेखकों ने विशेष रूप से बच्चों के लिए ही साहित्य की रचना की है। (देखें : साहित्य, भारतीय)

साहित्य, भारतीय (INDIAN LITERATURE): भारत में अनेक भाषाएँ प्रचलित हैं, जिनमें से पन्द्रह प्रमुख हैं—हिन्दी तथा संस्कृत, असमिया, उड़िया, उर्दू, कन्नड़, कश्मीरी, गुजराती, तमिल, तेलुगु, पंजाबी, बंगला, मराठी, मलयालम और सिंधी। इनमें से कुछ के साहित्य का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है :

संस्कृत : संस्कृत वाङ्मय को धार्मिक तथा लौकिक दो भागों में बांटा जा सकता है। धार्मिक भाग में साहित्य की दृष्टि से वेद और पुराण विशेष उल्लेखनीय हैं। वेदों में वरुण, इंद्र, उषा आदि देवताओं की स्तुति में जो प्रार्थनाएँ

हैं उनमें से कुछ अत्यन्त सुन्दर हैं। पुराणों में प्राचीन इतिहास है। उनकी कथाओं पर बाद में सभी भारतीय भाषाओं में काव्य, नाटक आदि रचे गए।

लौकिक भाग में सर्वप्रथम वाल्मीकि-कृत 'रामायण' और वेदव्यास-कृत 'महाभारत' आते हैं, जो हमारे देश के सर्वाधिक सम्मानित महाकाव्य हैं। ईसा की पहली शताब्दी में अश्वघोष ने 'बुद्धचरित' और 'सौन्दरनन्द' महाकाव्य लिखे। दो सौ साल बाद प्रसिद्ध नाटककार भास हुए। उनके 'स्वप्नवासवदत्ता' और कई अन्य नाटक उपलब्ध हैं। बाद में शूद्रक ने 'मृच्छकटिक' नाटक लिखा जो बहुत प्रसिद्ध हुआ। भारत के सबसे महान कवि कालिदास पांचवीं शताब्दी में हुए। उनके काव्यों में 'रघुवंश', 'कुमारसंभव', और 'मेघदूत' तथा नाटकों में 'शकुन्तला' बहुत लोकप्रिय हैं। काव्यों में भारवि का 'किराताजुनीय', माघ का 'शिशु-पालवध' और श्रीहर्ष का 'नैषधचरित' भी काफी प्रसिद्ध हैं। कालिदास के बाद संस्कृत के सबसे महान नाटककार भवभूति माने जाते हैं। उनका 'उत्तररामचरित' एक हृदयस्पर्शी नाटक है। राजनीतिक नाटकों में विशाखदत्त का 'मुद्राराक्षस' अद्वितीय है। गद्य साहित्य में बाणरचित 'कादम्बरी' और 'हर्षचरित' महत्वपूर्ण हैं। बारहवीं शताब्दी में वैष्णव कवि जयदेव ने 'गीतगोविन्द' की रचना की। यह काव्य अपने सुमधुर गीतों और कोमलकान्त पदावली के लिए प्रसिद्ध है।

असमिया: असमिया साहित्य का उदय तेरहवीं शताब्दी में कवि हेम सरस्वती के 'प्रह्लादचरित्र' से माना जाता है। चौदहवीं सदी में माधव कन्दली ने रामायण का अनुवाद किया। उनकी रचना 'देवजीत' असमिया की पहली महान कृति है। वैष्णव धर्म के प्रसार से शंकरदेव का 'कीर्तन-घोष', माधवदेव का 'नामघोष' और 'बड़गीत' तथा राम सरस्वती का महाभारत अनुवाद जैसी रचनाएं सामने आईं, जिनसे साहित्य की श्रीवृद्धि हुई। साहित्य को पुराण-पंथी समाज के दायरे से निकालकर आधुनिक युग में लाने का श्रेय हेमचंद्र बरुआ को है। उन्होंने नाटक, उपन्यास प्रहसन सभी कुछ लिखे। वर्तमान असमिया की महान कृतियां लखमीनाथ बेज-बरुआ ने दीं। भोलानाथदास ने यथार्थ-वादी कहानियां लिखीं। प्रकृति की अनुपम गायिका नलिनी-वाला देवी हैं। आधुनिक लेखकों में शैलधर राजखोवा, डिम्बेश्वर नियोग, बिनंदाचंद्र बरुआ आदि उल्लेखनीय हैं।

उड़िया: प्राचीन उड़िया साहित्य में चौंतीस दोहों का गीत 'केसब कोइली', 'विचित्र रामायण' तथा भागवत और रामायण के अनुवाद अभी भी लोकप्रिय हैं। ब्रजरत्न बदजेन ने 'समरतरंग' में मराठों के साथ हुए युद्ध का वर्णन कर यथार्थवादी काव्यधारा का श्रीगणेश किया। राधानाथ ने मुक्त छन्द में 'महाजात्रा' रची। फकीरमोहन सेनापति ने पद्य के अतिरिक्त अनेक उपन्यास भी लिखे। गोविन्द सूरदेव के अनेक गीत अत्यन्त लोकप्रिय हुए। आज के उड़िया

साहित्यकार आधुनिक युग-बोध से प्रेरित हो उपन्यास, कहानी, नाटक, काव्य आदि का सृजन कर रहे हैं।

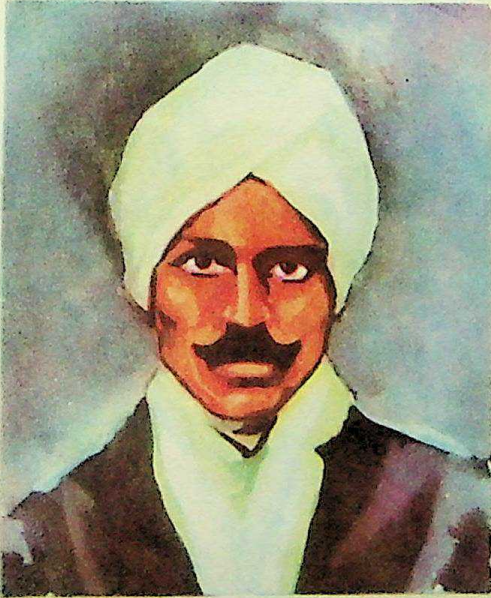
उर्दू: उर्दू हिन्दी की ही एक शैली है। पर यह केवल साहित्य की नहीं, सांस्कृतिक परम्परा की भी शैली है। यह शैली विशेषतः दकन में बनी और बाद में उत्तर भारत में भी प्रचलित हो गई। अठारहवीं सदी में मीरतक़ी 'मीर' हुए जिनके बराबर गज़ल कहनेवाला दूसरा शायर नहीं हुआ। मीर, सौदा और दर्द उर्दू साहित्य के स्तंभ कहलाते हैं। सौदा ने पहले-पहल नज़्म में ओजस्वी व्यंग्य लिखे। दर्द मुफ़ी थे। उन्होंने अधिकतर धार्मिक नज़्मों लिखीं। इशा अपने हास्य-व्यंग्य के लिए और नज़ीर भाषा की सादगी के लिए प्रसिद्ध हैं। उर्दू का वर्तमान युग 1857 के विद्रोह से शुरू होता है। जौक़ ने क़सीदाकारी को आखिरी मंज़िल तक पहुंचा दिया। उर्दू के सबसे प्रसिद्ध कवि ग़ालिब हैं। दाग़ अपनी ग़ज़लों के लिए विख्यात हैं। हाल के शायरों में सबसे महान इक़बाल हो गए हैं। उनकी अधिकतर शायरी दर्शन से संबंध रखती है। आधुनिक कवियों में ज़िगर, फ़िराक़, जोश, फ़ैज़, मजाज़, आदि मुख्य हैं। कहानी-कारों में मंटो, राजेन्द्रसिंह बेदी, शौकत थानवी, क़ुश्न चन्दर चुगताई आदि उल्लेखनीय हैं।

कन्नड़: यह कर्नाटक में बोलीजाने वाली द्राविड़ वर्ग की भाषा है। दसवीं शताब्दी में हुआ पम्प जैन कन्नड़ का पहला कवि था। चावुण्डराज ने गद्य का पहला ग्रंथ 'चावुण्डराज पुराण' रचा। बारहवीं शताब्दी में जनता की सरल भाषा में सशक्त गद्य लिखा जाने लगा जो 'वचन' कहलाया। विजयनगर साम्राज्य के संरक्षण में कन्नड़ साहित्य का खूब विकास हुआ। पुरन्दरदास और कनक-दास के गीत, जो 'दासकूट' कहलाते हैं, अभी भी बड़े लोक-प्रिय हैं। अठारहवीं शताब्दी में लोकनाटक लिखे जाने लगे और उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में जन-साधारण के दुःख-सुख गीतों में व्यक्त होने लगे। ये रचनाएं 'त्रिपदी' कहलाईं। वर्तमान युग में पहले रूमानी कविता का जोर रहा। मास्ती और राजरत्न कथा-साहित्य में तथा कारन्त, कृष्णराव, आनन्दकन्द, पुट्टप्प और गोकक उपन्यास में बहुत सफल रहे। सामाजिक नाटक की दिशा में कैलाशम् और जागीरदार (श्रीरंग) के प्रयास प्रशंसनीय हैं। इधर प्रगतिशील रचनाएं काफी मात्रा में आई हैं।

कश्मीरी: कश्मीरी साहित्य की प्रमुख गायिका लल्ल छद चौदहवीं शताब्दी में हुई। उसके गीत रहस्यवादी थे। मानव-प्रेम के गीत 'लोले' कहलाए। हाबा ख़ातून, अर्णीमाल और जुमरशीद कवयित्रियां अपने गीतों के लिए प्रसिद्ध हैं। महमूद गामी, मकबूल शाह और रसूल मीर ने प्रणय-कथाओं की रचना की और इस शैली में उत्तरोत्तर निखार और मिठास पैदा किया। कृष्ण-सम्बन्धी लीला-कविताएं अपने उल्लास और अलहड़पन में अद्वितीय हैं। नये युग की नई धाराओं के स्रष्टा गुलाम अहमद महज़ूर हैं। नादिम

ने अपनी कविताओं में नई राजनीतिक समस्याएं उठाई। कश्मीरी गद्य का कलेवर छोटा है। पर इधर हाल में नाटक, एकांकी, कहानी, निबंध आदि काफी लिखे जा रहे हैं।

गुजराती : गुजराती साहित्य का आरंभ जैन ग्रंथों से होता है। पंद्रहवीं शताब्दी के बाद नरसिंह मेहता, वल्लभ मेवादो और अखो ने धार्मिक कविताएं लिखीं, जिनका बहुत आदर हुआ। उनके बाद ही प्रेमानन्द ने पौराणिक आख्यान और सामल ने छंदबद्ध कहानियां लिखीं। वर्तमान युग 1825 से शुरू होता है। महात्मा गांधी और काका कालेलकर ने गुजराती शैली को काफी निखारा। क० मा० मुंशी ने ऐतिहासिक उपन्यासों से साहित्य की श्री-वृद्धि की। रमणलाल देसाई भी अच्छे उपन्यासकार हैं। कलापी प्रधान कवियों में माने जाते हैं। उमाशंकर जोशी ने इधर आलोचना-क्षेत्र में काफी लिखा है।



तमिल के राष्ट्रीय कवि सुब्रह्मण्य भारती

तमिल : संस्कृत के बाद यह भारत की सबसे प्राचीन भाषा है और द्राविड़ भाषाओं में सबसे मुख्य है। तमिल का सबसे पुराना लोकप्रिय काव्य 'कुड़ल' है। वैष्णव संतों के आरंभ के बारह आचार्य 'आलवार' कहलाते हैं। इनके पद जनता में बहुत ही प्रसिद्ध हैं। बारहवीं शताब्दी में कम्बन ने रामायण रची, जो तमिल काव्य की चूड़ामणि है। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य यूरोप के प्रभाव से नई लहर उठी। सूर्यनारायण शास्त्री के नाटक काफी प्रसिद्ध हुए। हाल के कवियों में शास्त्रीयर, पिल्ले और भारती प्रमुख हैं। भारती राष्ट्रीय कवि हैं। उनका 'स्वदेशगीतम्' बड़ी सुन्दर रचना है। तमिल की सरल और शालीन शैली अरुमुग नवलर ने प्रस्तुत की। राजम् अय्यर ने पहला यथार्थवादी उपन्यास 'कमलाम्बाल' लिखा। माधविया

और सरवन पिल्ले के उपन्यास भी यथार्थवादी हैं। तमिल साहित्य बहुत ही विस्तृत और समृद्ध है।

तेलुगू : आरंभ में तेलुगू में महाभारत, रामायण और भागवत की रचना हुई। श्रीनाथ ने अनेक माधुर्य-भरे काव्य लिखे और उन्हें 'कवि सार्वभौम' की उपाधि मिली। विजयनगर राजकाल में साहित्य की विशेष उन्नति हुई। राजा कृष्णदेवराय के दरबार के आठ कवि 'अष्ट दिग्गज' कहलाते थे। दक्षिण तेलुगू प्रान्त में वेंकट कवि काफी प्रसिद्ध हुए। आधुनिक साहित्य के जनक वीरेशलिगम् माने जाते हैं। उन्होंने चरित, उपन्यास, काव्य सभी कुछ लिखा है। ग्रंथकवि लक्ष्मी नरसिंहम् के उपन्यास और नाटक बड़ी सजीवता व ताजगी रखते हैं। गुरुज्जाड अप्पाराव का सामाजिक नाटक 'कन्याशुल्कम्' बहुत ही विख्यात हुआ। राममूर्ति पन्तुल ने साहित्य को नई शक्ति व नया रूप दिया। रामराव बहादुर ने सुन्दर गीतिकाव्य प्रस्तुत किए। गडियाराम वेंकट शेष शास्त्री का 'शिव भारत' सुन्दर काव्य है। इसी तरह 'राणा प्रतापसिंह चरित्रम्' भी महत्त्वपूर्ण काव्य है।

पंजाबी : आदिग्रंथ पंजाबी का पहला महान ग्रंथ है। पर उसकी भाषा हिन्दी-बोझिल है। पंजाबी में युमुफ-जुलेखां, हीर-रांभा के प्रेम-प्रसंग पर अनेक कविताएं लिखी गईं। इनमें वारिसशाह की हीर सबसे अधिक लोकप्रिय हुई। पंजाबी का आधुनिक काल वीरसिंह और पूरनसिंह की काव्यधारा से प्रारंभ होता है। उपन्यास और कहानियों में पहला विशिष्ट कदम नानकसिंह ने उठाया। गुरबख्शसिंह बहुमुखी प्रतिभा के साहित्यकार हैं। कवियों में किरपासागर, प्रीतमसिंह सफ़ीर, डा० गोपालसिंह, संतोखसिंह धीर, ईश्वरसिंह और अमृता-प्रीतम प्रमुख हैं। उपन्यासकारों में कुलवन्तसिंह विर्क, संतसिंह सैखों, कर्तारसिंह दुग्गल और नाटककारों में अमरीकसिंह, संतसिंह सैखों, गुरबख्शसिंह और बलवन्त गार्गी उल्लेखनीय हैं।

बंगला : बंगला में पहले प्रसिद्ध गीतकार चंडीदास हुए। चौदहवीं शताब्दी के आरंभ में कृत्तिवास ने रामायण लिखी। पंद्रहवीं शताब्दी में विद्यापति ने गीतिकाव्य की एक नई धारा बहाई। तब से उन्नीसवीं शताब्दी तक रामायण, महाभारत और पुराणों की कथाएं लगातार छन्दबद्ध होती गईं। उन्नीसवीं शताब्दी में नया जागरण आया। ईश्वरचंद्र विद्यासागर, प्यारीचंद मित्र और अक्षयकुमारदत्त ने भाषा को सरल और प्रवाहमय बनाया। तभी कवि माइकेल मधुसूदनदत्त और उपन्यासकार बंकिम-चंद्र चट्टोपाध्याय जैसे दो महान और यशस्वी साहित्यकार हुए। उसके बाद आए रवीन्द्रनाथ ठाकुर, जो कालिदास के बाद भारत के सबसे महान साहित्यिक थे। उनकी कृतियों में काव्य, नाटक, कहानी, उपन्यास सभी कुछ हैं। उनकी रचनाओं से भारत की सभी भाषाओं का

साहित्य प्रभावित हुआ। उपन्यास व कहानी में प्रभातकुमार मुखोपाध्याय तथा नाटक में द्विजेन्द्रलाल राय की भी अच्छी ख्याति हुई। किन्तु बंगला के सबसे बड़े उपन्यासकार शरत्चंद्र चट्टोपाध्याय माने जाते हैं। आज के साहित्यिकों में ताराशंकर बंद्योपाध्याय तथा मनोज वसु विशेष उल्लेखनीय हैं। बंगला साहित्य का भारतीय साहित्य में सबसे प्रमुख स्थान है।

मराठी: आरंभ में मराठी में बहुत काल तक धार्मिक काव्य ही लिखे गए। गीता पर संत ज्ञानेश्वर की व्याख्या 'ज्ञानेश्वरी' बहुत लोकप्रिय हुई। नामदेव से भक्तिपरक पदों—'अभंगों' की परिपाटी शुरू हुई, जो बहुत काल तक चलती रही। वामन पंडित ने सुन्दर रसमय प्रबंधकाव्य लिखे। अठारहवीं शताब्दी के प्रधान कवि मोरोपन्त थे। उसकी 'एकावली' बहुत प्रसिद्ध हुई। एक नये प्रकार की छोटी प्रेम-कविताएं चलीं जो 'लावनी' कहलाईं। उन्नीसवीं शताब्दी में विष्णु शास्त्री चिपलूणकर ने अपने निबंधों से नये गद्य की शैली प्रस्तुत की। काका कालेलकर के बराबर गद्यकार मराठी में शायद दूसरा नहीं हुआ। 1880 के बाद नाटक का लगातार विकास हुआ। गडकरी उस काल का सबसे बड़ा नाटककार माना जाता है। हरिनारायण आष्टे के उपन्यासों का अनेक भाषाओं में अनुवाद हुआ है। केशवसुत, विनायक, माधवानुज आदि ने काव्य में यूरोपीय शैली अपनाई। माधव जुलियन व्यंग्य में असाधारण कुशल हैं। अत्रे मराठी रंगमंच के प्रधान निर्माता हैं। फड़के उपन्यास-क्षेत्र में तथा खांडेकर, फड़के और जोशी कहानी-क्षेत्र में विशेष उल्लेखनीय हैं।

मलयालम: आरंभ में दीर्घकाल तक रामायण, महा-भारत और पुराणों के अनुवाद होते रहे। महिष मंगल चम्पू शैली के सबसे बड़े मलयाली कवि हैं। अठारहवीं शताब्दी में दो प्रकार के साहित्य का उदय हुआ : त्योहारों पर गाए जानेवाले गीत 'तुल्लल' और 'कथकलि'। कुंचन नंप्यार ने तुल्लल गीतों में तत्कालीन समाज पर तीखे व्यंग्य किए। कथकलि वास्तव में नाटक साहित्य है। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में केरल वर्मा, केशवपिल्ले, कोटारनिल शंकुण्णी और उल्लूर परमेश्वर अय्यर के काव्य काफी प्रसिद्ध हुए। 1925 में वल्लत्तोल ने रवीन्द्रनाथ की शैली में कविताएं लिखकर मलयालम को एक नई दिशा दी। वे इस काल के सबसे महान कवि हैं। आज-कल के मलयाली कवियों और उपन्यासकारों में पणिक्कर का स्थान काफी ऊंचा है। शंकर कुरुप की कविताएं तरुणों को बहुत प्रिय हैं। बालमनि अम्मा बड़ी प्रतिभाशाली कवयित्री हैं।

सिंधी: सिंधी भाषा के लिए आजकल अरबी लिपि प्रयुक्त होती है, जोकि ब्रिटिश शासकों द्वारा सौ वर्ष पूर्व चालू की गई थी। इसीलिए यह बात बहुत लोगों से छिपी है कि सिंधी भाषा संस्कृत से निकली है और प्राकृतों में

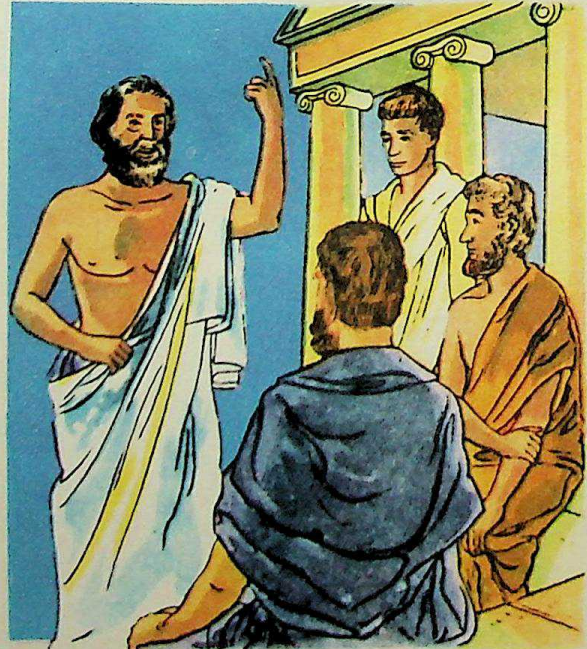
सबसे पुरानी है।

प्रथम सिंधी कविता लिखित रूप में हमें काजी काज़न के पद्यों में मिलती है, जो पंद्रहवीं शताब्दी के अंत के हैं। परन्तु सिंधी काव्य के सबसे उज्ज्वल नक्षत्र शाह अब्दुल लतीफ़, सचल 'सरमस्त' और सामी हैं। प्राचीन सिंधी कविता सूफ़ियानी है। इस धारा के अन्य प्रसिद्ध कवियों में बेदिल, रोहल और दलपत विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

सिंधी कविता की नई धारा नये भावबोध पर आधारित है। इस धारा को शुरू करनेवाले दयाराम गिडूमल थे। टी० एल० वासवाणी के मुक्त छन्दों ने इसे और पुष्ट किया। हैदरबख्श जतोई की 'दरियाए सिंध को खिताब' और 'आज़ादी ए कौम' सिंधी काव्य की स्थायी निधियां हैं। सिंधी सॉनेट के लेखक नारायण श्याम, बहुमुखी प्रतिभा के धनी अय्याज़ और खियलदास फ़ानी नई धारा के सबसे प्रसिद्ध कवि हैं।

सिंधी गद्य के आधार-स्तंभ मिर्ज़ा कलीच बेग, कौडोमल चंदनमल, दयाराम गिडूमल और परमानन्द मेवाराम माने जाते हैं। गोविन्द माल्ही इस समय सिंधी के सबसे सशक्त उपन्यासकार हैं। कहानीकारों में आनन्द गोलाणी सबसे अधिक उल्लेखनीय हैं। सुन्दरी उत्तम-चन्दाणी के उपन्यास भी इधर काफी लोकप्रिय हुए हैं।

सुकरात (SOCRATES 470? -399 ई० पू०) : प्राचीन काल के बहुत विख्यात महापुरुषों में यूनान के दार्शनिक सुकरात या सॉक्रेटीज़ का नाम आता है। सुकरात की शिक्षाएं उनके शिष्य अफ़लातून या प्लेटो की रचनाओं में आज भी उपलब्ध हैं।



सुकरात का कहना था कि सबसे श्रेयस्कर ज्ञान है।



ओबो



हार्न



लकड़ी और धातु के फ्ल्यूट

सुकरात का कहना था कि दुनिया में सबसे श्रेयकर वस्तु ज्ञान है। उनका विश्वास था कि यदि किसीको अच्छे-बुरे का ज्ञान हो तो वह अच्छा काम ही करेगा। जो लोग बुरा काम करते हैं उन्हें पता नहीं रहता कि अच्छा क्या है। सुकरात का शिक्षा देने का ढंग था, पुरानी मान्यताओं के बारे में सूक्ष्म से सूक्ष्म प्रश्न करना। जब उनके शिष्य चीजों की सूक्ष्मता से जांच करने लगते थे तो वे बहुत-से पुराने विश्वासों के प्रति शंका लु हो जाते थे। सुकरात सत्य की खोज में उनकी सहायता करते थे।

सुकरात को 'नवयुवकों को भ्रष्ट करने' के अपराध में अन्यायपूर्वक मृत्युदंड दे दिया गया। सुकरात को जेल से बाहर निकाल ले जाने के लिए उनके शिष्यों और मित्रों ने पड़्यन्त्र रचा था। लेकिन सुकरात ने बाहर जाने से इन्कार कर दिया। उन्होंने कहा कि ऐसा करना पाप होगा। अपने मित्रों के सामने ही सुकरात ने जहर का प्याला पिया और वे शान्तिपूर्वक मृत्यु को प्राप्त हो गए।

सुषिरवाद्य (WIND INSTRUMENTS) : बांसुरी फूंक से बजनेवाले बाजों में से है। देश-विदेश में फूंक से बजनेवाले अनेक प्रकार के बाजे प्रचलित हैं। इन्हें सुषिरवाद्य कहा जाता है। भारतीय सुषिरवाद्यों में बांसुरी, वीन (पुंगी या तुम्बी), तुरही (तूर्य), शंख, अलगोजा, शहनाई तथा सिहा आदि प्रमुख हैं।

सुषिरवाद्यों का आविष्कार कैसे हुआ, हम इसकी केवल कल्पना ही कर सकते हैं। संभवतः इनका प्रारंभ बांस के तनों से हुआ। कभी-कभी बांस के वनों में हवा बहने पर एक बहुत ही मधुर ध्वनि उत्पन्न होती है। जंगलों में विचरनेवाले मनुष्य ने इसीको सुनकर बांस का टुकड़ा काटा होगा और उसमें फूंक मारकर पहली बार उसके मधुर संगीत का रस लिया होगा।

आवाज पैदा करने के लिए हवा में कंपन उत्पन्न करना जरूरी होता है। इस कंपन से ही मधुर ध्वनि उत्पन्न होती है। यहां दिखाए गए सभी बाजों में हवा के कंपन

से ही ध्वनि उत्पन्न होती है। लेकिन इनमें हवा का यह कंपन अलग-अलग रीतियों द्वारा उत्पन्न किया जाता है।

बांसुरी के एक सिरे पर एक छेद होता है। इसका भीतरी भाग खोखला होता है और उसमें कई सूराख हुए रहते हैं। हवा को भीतर फूंककर और उंगलियों द्वारा कुछ सूराखों को दबाते हुए तथा कुछ को खोलते हुए संगीत उत्पन्न किया जाता है।

इसीका दूसरा रूप वीन, अलगोजा और शहनाई है। वीन सपेरों का बाजा है। इसकी ध्वनि बहुत मधुर होती है। इसमें लौकी की छोटी तुम्बी होती है, जिसमें से दो नलियां निकली रहती हैं। एक से हवा फूंकी जाती है और दूसरी पर बने छेदों को उंगलियों से दबाया और खोला जाता है।

अलगोजा बांस का बना होता है। बांस के एक सिरे को कांट-छांटकर कुछ बन्द कर देते हैं और नली पर छेद बना दिए जाते हैं। शहनाई की ध्वनि बहुत ही मधुर होती है और वह शादियों में अवश्य बजाई जाती है।

शंख और तुरही युद्ध और पूजा आदि के अवसरों पर बजाए जाते थे। आज भी शंख को पूजा आदि में बजाते हैं। सिहा ऊंची आवाज करनेवाला ऐसा भारतीय बाजा है जो युद्ध की सूचना के लिए डंके की तरह बजाया जाता था। पहले, विवाह आदि के अवसरों पर भी सिहे बजते थे। आजकल इसकी लोकप्रियता प्रायः समाप्त हो गई है।

विदेशी सुषिरवाद्यों में फ्ल्यूट, पिकॉलो आदि बांसुरी से बहुत मिलते-जुलते हैं। क्लैरिनेट में मुंह के पास बेंत का एक टुकड़ा लगा रहता है। जब इसमें फूंक मारी जाती है, तो बेंत का टुकड़ा कंपने लगता है, जिससे क्लैरिनेट के भीतर की हवा में कंपन पैदा होता है। संक्सोफोन के भीतर भी इसी तरह बेंत का टुकड़ा लगा रहता है।

ट्रॉम्बोन, कॉर्नेट, ट्रुम्पेट, फ्रेंच हॉर्न और ट्यूबा आदि में वादक मुंह से बाजे को लगाकर ओंठ की गति से विभिन्न प्रकार के कंपन पैदा करता है। इनमें ट्यूबा की आवाज मंद होती है। यही हाल बैसून का है। साउसाफोन और



क्लैरिनेट और वास क्लैरिनेट

फ्रेंच हॉर्न भारतीय सिंहे के ही विकसित रूप जैसे लगते हैं।

बिगुल एक बहुत मशहूर बाजा है, जो प्रायः युद्ध का बाजा कहलाता है। परन्तु आजकल इसे संगीत के लिए भी विकसित किया गया है। अंग्रेजी बाजों में कुछ बाजे लकड़ी के और कुछ धातु के बने होते हैं। धातु के बाजों में तांबे, पीतल आदि का प्रयोग होता है। कभी-कभी फ्ल्यूट जैसे कुछ बाजे चांदी के भी बनाए जाते हैं।

स्टीवेंसन, रॉबर्ट लुई (ROBERT LOUIS STEVENSON 1850-1894) : अंग्रेजी के प्रसिद्ध लेखक और कवि स्टीवेंसन का जन्म स्कॉटलैंड के एडिनबरा नगर में हुआ था। बचपन से ही उनका स्वास्थ्य खराब रहा और ज़िन्दगी-भर वे स्वास्थ्य के लिए अनुकूल जलवायु वाले स्थान की तलाश में भटकते रहे।

स्टीवेंसन ने अपना कविता-संग्रह 'ए चाइल्ड्स गार्डन ऑव वर्सेज' (बाल कविता-उपवन), जिसमें उन्होंने अपने बचपन की बहुत-सी सुखद घटनाओं को स्मरण किया है, अपनी धाय को समर्पित किया। इस संग्रह की कविताओं को बाद में संगीतबद्ध किया गया। आज भी अंग्रेजी भाषा

पढ़ने और बोलनेवाले बच्चे इन कविताओं को चाव से पढ़ते हैं।

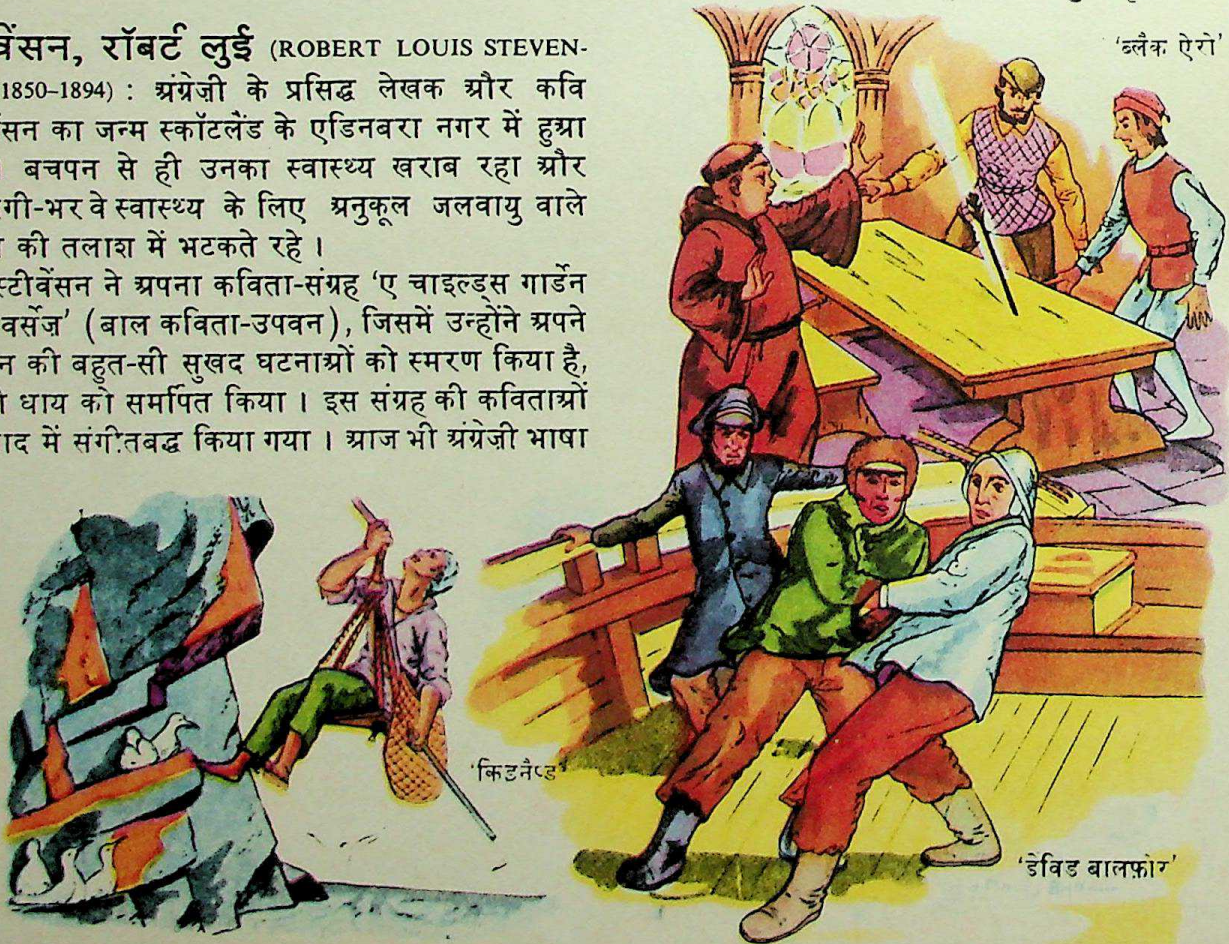
स्टीवेंसन को ख्याति अपने उपन्यास 'ट्रेज़र आइलैंड' (खज़ाने की खोज में) से मिली, जो उन्होंने अपने गोद लिए बेटे के लिए लिखा था। यह पुस्तक बड़े-छोटे, सभी आयु के लोगों में बहुत लोकप्रिय हुई।

स्टीवेंसन ने 'किडनैप्ड' (चांदी का बटन) नामक उपन्यास भी लिखा जो उनके अपने एक पूर्वज डेविड बालफ़ोर के बचपन पर आधारित था। इन्हीं के बाद के जीवन की साहसिक घटनाएं 'डेविड बालफ़ोर' नामक उपन्यास में लिखी गईं।

कुछ दिनों तक दक्षिणी समुद्रों में घूमते रहने के बाद स्टीवेंसन समोआ द्वीप-समूह में बस गए। वहीं उनकी मृत्यु हुई।

स्तंभ (OBELISK) : प्राचीन मिस्र के राजाओं ने अनेक स्मारक बनवाए। इन स्मारकों में कुछ स्तंभ भी हैं। भारत के सम्राट अशोक ने भी बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए कई स्तंभ बनवाए थे, जिनमें से कुछ आज भी पाए

स्टीवेंसन की कहानियों के कुछ दृश्य



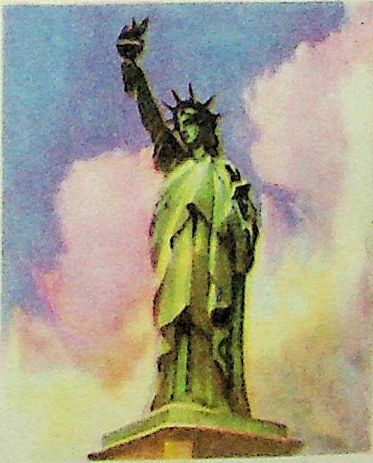
किडनैप्ड

डेविड बालफ़ोर

जाते हैं। ये स्तंभ गोलाकार हैं। मिस्र के स्तंभ पत्थर के एक ही टुकड़े को चौकोर काटकर खड़े किए गए हैं। इनके सिरे पर कोणस्तूप की आकृति बनी होती है। अंग्रेजी में इन्हें 'ओबलिस्क' कहा जाता है। मिस्र के लोग अपने स्तंभों के कोणस्तूपों को सोने और चांदी के एक मिश्रण से रंगवाते थे और वे चमकते रहते थे। लंदन में टेम्स नदी के तट पर एक ऐसा ही स्तंभ है। इसे 'क्लिओपैट्रा का सूचीस्तंभ' (क्लिओपैट्राज नीडल) कहते हैं। क्लिओपैट्रा मिस्र की प्रसिद्ध महारानी थी। लेकिन इस सूचीस्तंभ का निर्माण क्लिओपैट्रा के समय से बहुत पहले हुआ था। यह पंद्रहवीं शताब्दी ई० पू० में फ्राऊन थतमोसिस तृतीय के सम्मान में बना था। जब क्लिओपैट्रा सम्राज्ञी थी, उसी समय यह स्तंभ वहां से सिकन्दरिया को लाया गया था। फिर लगभग 2,000 वर्ष बाद, यह लन्दन लाया गया।

मिस्री सभ्यता के युग का सबसे ऊंचा स्तंभ रोम में आज तक सुरक्षित है। इसकी ऊंचाई 105 फुट 9 इंच है। इस स्तंभ को कांस्टैंटाइन महान रोम में लाया था।

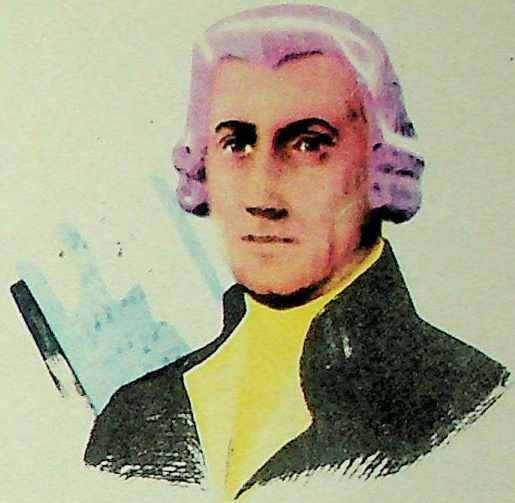
स्वतंत्रता की मूर्ति (STATUE OF LIBERTY) : संसार की यह सबसे बड़ी मूर्ति न्यूयार्क बन्दरगाह के पास एक छोटे-से द्वीप पर स्थित है।



न्यूयार्क बन्दरगाह के पास 'स्वतंत्रता की मूर्ति'

यह मूर्ति ताँबे की बनी हुई है। भीतर से यह खोखली है। फिर भी इसका वजन 225 टन है। इसकी ऊंचाई 151 फुट है। इसका सिर ही किसी दोमंजिले मकान जितना ऊंचा है। तर्जनी उंगली की लम्बाई 16½ फुट और इसके नाखून की लम्बाई 13 इंच तथा चौड़ाई 10 इंच है। स्वतंत्रता की मूर्ति का एक हाथ उठा हुआ है, जिसमें एक मशाल है। रात में इस मशाल में बहुत तेज़ रोशनी जलती है।

यह मूर्ति फ्रांस के लोगों ने अमरीका को भेंट में दी थी। यह मूर्ति सन् 1881 में बननी शुरू हुई। इसको बनाने-वाले कलाकार का नाम फ्रेडेरिक ओगस्त बार्तोल्टी था।



सिम्फनी के जन्मदाता फ्रांज़ जोज़ेफ़ हाइडन

हाइडन, फ्रांज़ जोज़ेफ़ (FRANZ JOSEPH HAYDN 1732-1809) : संगीतज्ञ हाइडन ने दो सौ वर्ष पहले जो संगीत रचनाएं की थीं, आज भी वे यूरोप के बालक-बालिकाओं में बड़ी लोकप्रिय हैं। इनमें 'सरप्राइज़ सिम्फनी' बहुत विख्यात है।

हाइडन आस्ट्रिया में जन्मे थे। उनके माता-पिता को संगीत से बड़ा प्रेम था। हाइडन को संगीत की शिक्षा सबसे पहले अपने घर में ही मिली। शीघ्र ही वे अपने मधुर कंठ के लिए प्रसिद्ध हो गए और चर्च में गाने लगे। बड़ी गरीबी भुगतने के बाद उन्हें सफलता मिली और वे आस्ट्रिया के राजकुमार के वाद्यवृंद (आर्केस्ट्रा) निदेशक बना दिए गए। इस पद पर वे तीस वर्ष रहे।

इस बीच हाइडन ने यूरोप-भर में ख्याति प्राप्त कर ली। उन्हें सिम्फनी का जन्मदाता माना जाता है।

हारमोनिका (HARMONICA) : यह एक प्रकार का वाजा है, जिसे दो सौ वर्ष पूर्व बेंजामिन फ्रैंकलिन ने पहली बार बनाया था। पहले यह कांच के पात्रों का होता था और उनपर उंगलियां चलाकर इसे बजाया जाता था।

आज का हारमोनिका पुराने ढंग का नहीं है। इसे मुंह से बजाते हैं। इसे 'माउथ ऑर्गन' और 'फ्रेंच हार्प' भी कहते हैं। इसमें मुंह से फूंक मारने पर धातु की पतली पत्तियां विभिन्न स्वरों में बजती हैं।

हारमोनिका बजाना बड़ा सरल है।





धूर्त मेढक और लोमड़ भाई

हैरिस की प्रसिद्ध रचना 'चचा रेमस की कहानियाँ' के कुछ पात्र ।

हैरिस, जोएल शैंडलर (JOEL CHANDLER HARRIS 1848-1908) : प्रसिद्ध कथाकार जोएल शैंडलर हैरिस ने ऐसी काल्पनिक कहानियाँ लिखी हैं जो सच्ची-सी लगती हैं। 'चचा रेमस की कहानियाँ' इसी श्रेणी में आती हैं। इन कहानियों में सारे पात्र जानवर हैं, जो बोलते हैं।

हैरिस का जन्म अमरीका के जॉर्जिया राज्य के ईटन टाउन में हुआ था। बचपन से ही हैरिस को खेलों और जानवरों का बड़ा शौक था। उनकी स्मरण-शक्ति बड़ी अच्छी थी।

बचपन में उन्होंने समाचारपत्र छापनेवाले एक प्रेस में काम शुरू किया था। पत्र के सम्पादक ने उन्हें अपने खेतों पर काम करने के लिए रख लिया। यहां हैरिस को पढ़ने के लिए बहुत-सी किताबें मिलीं। जब समय मिलता, हैरिस नीग्रो लोगों के पास चले जाते और उनकी कहानियाँ सुनते।

'चचा रेमस की कहानियाँ' उन्होंने 1876 में लिखीं। इन कहानियों से हैरिस को बड़ी प्रसिद्धि मिली।

होगार्थ, विलियम (WILLIAM HOGARTH 1697-1764) : प्रसिद्ध अंग्रेज चित्रकार और लेखक विलियम होगार्थ का जन्म लन्दन में एक स्कूल-अध्यापक के यहां हुआ था। उन्हें ड्राइंग और चित्रकला में आरंभ से ही रुचि थी। उन्होंने पहले चांदी और बाद में ताँबे पर नक्काशी का काम सीखा। वे हर चीज को भली भाँति देख लेते थे और फिर कभी नहीं भूलते थे। इससे उन्हें प्लेट बनाने के

काम में बड़ी मदद मिली।

सन् 1726 में उनके चित्रों का संग्रह छपा जो उनका सबसे उत्तम संग्रह माना गया। होगार्थ ने अपना पहला तैलचित्र सन् 1728 में बनाया। अगले पाँच वर्षों में उन्होंने कई चित्र बनाए। वे इंग्लैंड के श्रेष्ठ चित्रकारों में गिने जाने लगे। उन्होंने कई चित्रमालाएँ तैयार कीं। उनका 'कैप्टन कोरम' चित्र बड़ा विख्यात है।

होमर (HOMER) : संसार में जो काव्य अति प्रसिद्ध हैं, उनमें 'इलियड' और 'ओडेसी' नामक दो ग्रीक महाकाव्य प्रमुख हैं। 'इलियड' ट्रॉय के युद्ध की कथा है। यूनानी नायक यूलिसिस का उस युद्ध के बाद का भ्रमण-वृत्तान्त ओडेसी में दिया गया है। दोनों महाकाव्य बहुत बड़े हैं।

कहा जाता है कि इन दोनों महाकाव्यों की रचना प्राचीन यूनान के ग्रंथ कवि होमर ने की थी। होमर के बारे में इससे ज्यादा कोई कुछ नहीं जानता। वे कव और कहां पैदा हुए—किसीको नहीं मालूम। होमर के चित्र और मूर्तियाँ मिलती हैं। लेकिन ये सभी काल्पनिक हैं। कुछ लोग कहते हैं कि वे भिक्षु थे और पहले की बनी-बनाई कविताओं को गाते हुए घूमा करते थे। यह सत्य है कि किसी भी व्यक्ति द्वारा लिपिबद्ध किए जाने के पूर्व यूनान के लोग इन काव्यों को सुनते-सुनाते थे।

होमर चाहे थे या नहीं, किन्तु ये दोनों महाकाव्य ढाई हजार वर्ष से जीवित हैं और आज भी सब देशों के लोग इन्हें पढ़ते हैं।

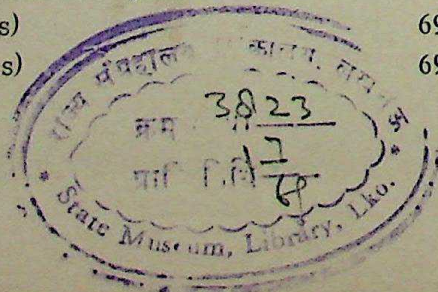
अनुक्रमणिका

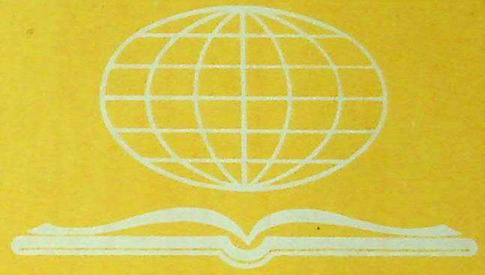
पारिभाषिक शब्द

अंग्रेजी भाषा (English Language)	5	खय्याम, उमर (Omar Khayyam)	24
अंग्रेजी साहित्यकार (English Writers)	7	खुसरो, अमीर (Amir Khusro)	25
अंत्याक्षरी (Rhyme Play)	8	गॉग, विन्सेंट वान (Vincent van Gogh)	25
अंब्रोज़िया (Ambrosia)	8	ग़ालिब (Ghalib)	25
अकिलीज़ (Achilles)	8	गिल्बर्ट और सुलिवन (Gilbert and Sullivan)	26
अपभाषा (Slang)	8	गोथिक कला (Gothic Art)	26
अफ़लातून (Plato)	9	ग्रीले, हॉरेस (Horace Greeley)	26
अमरीकी साहित्यकार (American Writers)	9	चारण (Troubadours)	27
अमेज़न (Amazons)	10	चित्रकला और चित्रकार	
अरस्तू (Aristotle)	10	(Painting and Painters)	27
अलिफ़लैला (Arabian Nights)	11	चित्रकला, भारतीय (Indian Painting)	30
आधुनिक कला (Modern Art)	12	चैकोवस्की, पेत्र इलिच	
ऑपेरा (Opera)	13	(Petr Ilich Tschaikowsky)	31
ऑपेरेटा (Operetta)	15	जलपरी (Mermaids)	31
ऑर्गन (Organ)	15	जातक कथाएं (Jataka Tales)	32
आल्हा (Aalha)	16	जिओत्तो (Giotto)	32
इर्विंग, वाशिंगटन (Washington Irving)	16	जिब्रान, ख़लील (Khalil Gibran)	33
ईसप (Aesop)	17	जीलोफ़ोन (Xylophone)	33
उपन्यास (Novel)	17	टर्नर, जोसेफ़ एम० डब्ल्यू०	
एकॉर्डियन (Accordion)	17	(Joseph M. W. Turner)	33
एंडरसन, हॉस क्रिश्चियन		टैगोर, रबीन्द्रनाथ (Rabindranath Tagore)	33
(Hans Christian Andersen)	18	ट्रॉय का युद्ध (Trojan War)	34
एल्कॉट, लुइसा मे (Louisa May Alcott)	18	ट्रैजेडी (Tragedy)	35
ऑडूबॉन, जॉन जेम्स (John James Audubon)	18	ट्वेन, मार्क (Mark Twain)	35
कबीर (Kabir)	19	डायोजेनीज़ (Diogenes)	36
कला (Arts)	19	डिकेन्स, चार्ल्स (Charles Dickens)	36
कहानी (Short Story)	21	डिफ़ो, डेनियल (Daniel Defoe)	37
कहावत (Proverbs)	21	डैमोकलीज़ (Damocles)	37
कांसटेबल, जॉन (John Constable)	22	तंतुवाद्य (Stringed Instruments)	38
कॉमेडी (Comedy)	22	तानसेन (Tansen)	40
कालिदास (Kalidasa)	22	तालवाद्य (Percussion Instruments)	40
काव्य (Poetry)	22	तुलसीदास (Tulsidas)	40
किप्लिंग, रडयार्ड (Rudyard Kipling)	23	दर्शन, पश्चात्य (Western Philosophy)	41
कुमारस्वामी, डा० आनंद		दर्शन, भारतीय (Indian Philosophy)	42
(Dr. Ananda Coomaraswamy)	23	दामोन और पिथियास (Damon and Pythias)	43
कैरोल, लेविस (Lewis Carroll)	24	दुर्ग (Forts and Castles)	43

देवी-देवता, नॉर्स (Norse Gods and Goddesses)	44	मूर्तिकला (Sculpture)	70
देवी-देवता रोमन (Roman Gods and Goddesses)	45	मूर्तिकला, भारतीय (Indian Sculpture)	73
देवी-देवता, हिन्दू (Hindu Gods and Goddesses)	46	मेडोना (Madonna)	75
निबंध (Essay)	47	मोजार्ट, वॉल्फगैंग एमेडियस (Wolfgang Amadeus Mozart)	75
नीतिकथा (Fables)	47	यांकी डूडल (Yankee Doodle)	75
नूह की नाव (Noah's Ark)	47	यूटोपिया (Utopia)	76
नृत्यकला (Dancing)	48	रंगमंच (Theatre)	76
पंचतंत्र (Panchtantra)	48	राफ़ेएल (Raphael)	77
पच्चीकारी (Mosaic)	49	रॉबिन हुड (Robin Hood)	77
परी और परी-कथाएं (Fairies and Fairy Tales)	49	रामायण (Ramayana)	78
पर्सल हेनरी (Henry Purcell)	49	रेन्वा, पियरे ओगस्त (Pierre Auguste Renoir)	79
पियानो (Piano)	50	रेम्ब्रां, वान रयां (Van Rijn Rembrandt)	79
पिरामिड (Pyramids)	50	लेखन कला (Writing)	80
पीसा की मीनार (Tower of Pisa)	51	लैटिन भाषा (Latin)	82
पुराणकथाएं और आख्यान (Myths and Legends)	51	वर्णमाला (Alphabet)	82
पुराणकथाएं, यूनानी (Greek Myths)	53	वर्न, जुले (Jules Verne)	84
पुस्तक और जिल्दसाजी (Books and Bookbinding)	54	वाद्ययंत्र (Musical Instruments)	84
पुस्तकालय (Libraries)	56	वाद्यवृन्द (Orchestra)	85
पैपाइरस (Papyrus)	58	वास्तुकला (Architecture)	85
फ़ॉस्टर, स्टेफ़ेन सी० (Stephen C. Foster)	58	विंकी, लियोनार्दो दा (Leonardo da Vinci)	86
फ़िल्म, भारतीय (Indian Films)	58	विश्वभाषा (Universal Language)	87
बनियन, जॉन (John Bunyan)	59	वेब्सटर, नोआ (Noah Webster)	88
बाइबिल (Bible)	59	शंकराचार्य (Shankaracharya)	88
बाइबिल की कहानियां (Bible Stories)	60	शब्दावली (Vocabulary)	88
बाख, योहान्न जेबस्तियन (Johann Sebastian Bach)	62	शेक्सपियर, विलियम (William Shakespeare)	89
बाल्ज़क, ओनोरे द (Honore de Balzac)	63	संगीत (Music)	90
बेटावैन, ल्युदविग वान (Ludwig Van Beethoven)	63	संगीत, भारतीय (Indian Music)	90
बैंड (Band)	63	संसार के सात आश्चर्य (Seven Wonders of the World)	90
बैगपाइप (Bagpipe)	64	सर्वांते सावेद्रा, मिगुएल द (Miguel de Cervantes Saavedra)	92
बैले (नृत्य-नाटक) (Ballet)	64	साहित्य (Literature)	92
भविष्यवाणी (Oracles)	65	साहित्य, भारतीय (Indian Literature)	93
भाषा (Languages)	66	सुकरात (Socrates)	96
भूत-प्रेत (Ghosts)	66	सुषिरवाद्य (Wind Instruments)	97
महाभारत (Mahabharata)	67	स्टीवंसन, रॉबर्ट लुई (Robert Louis Stevenson)	98
माइकेलेंजेलो (Michelangelo)	68	स्तंभ (Obelisk)	98
मिदास (Midas)	69	स्वतंत्रता की मूर्ति (Statue of Liberty)	99
मुखौटा (Masks)	69	हाइडन, फ्रांज़ जोसेफ़ (Franz Joseph Haydn)	99
		हारमोनिका (Harmonica)	99
		हैरिस, जोएल शैंडलर (Joel Chandler Harris)	100
		होगार्थ, विलियम (William Hogarth)	100
		होमर (Homer)	100

△ △ △







सचित्र विश्वकोश

8

साहित्य * कला * दर्शन

